विषय-सूची

श्रद्धांजलियाँ सन्देश एवं कथन

प्रस्तुत पुस्तक मेरे पूज्य पतिदेव स्व० शान्ति लाल जयशंकर त्रिवेदी द्वारा किये गये पवित्र संकल्प की याद दिलाती है। यह संकल्प था कैलास मानसरोवर की साहसिक यात्रा सम्पन्न करना। यात्रा हेतु प्रस्थान तिथि थी २६ जून १९३१। उनकी उक्त पुस्तक को अपने जीते जी छपवाने की प्रबल इच्छा थी। ९ फरवरी १९८४ को उनके आकस्मिक निधन के फलस्वरूप उनके रहते यह कार्य पूर्ण न हो सका। मेरी उनकी इच्छा को मूर्तरूप प्रदान करने के प्रयास में उनके कर्मक्षेत्र के सद्भावी परिवार एवं शिक्षा (माध्यमिक) जगत् के परिवार एवं सिंह प्रिंटिंग प्रेस की सहायता से यह पूर्ण हो रही है। इसमें किसी भी प्रकार की त्रुटि के लिए क्षमा प्रार्थी हूँ। इसमें सबका योगदान उनकी आत्मा को तृप्त करेगा। ऐसा मेरा विश्वास है।

भक्ति देवी त्रिवेदी
सर्वोदय कुटीर, अल्मोड़ा

यतेमहि स्वराज्याय

[हम स्वराज्य (आत्मराज्य) के लिए प्रयत्न करें]

११ अक्टूबर १९५२ से अल्मोड़ा में रहने का अवसर मिलने पर मेरे नाम से अनजान अल्मोड़ा वासियों ने मुझे पू० स्व० शान्ति भाई और भक्ति बेन के साथ देखते ही पूछा—अच्छा यह वही बच्ची है ? भाई जी केवल थोड़ा हँसे। जिस स्थान के वह इतने अपने थे उस स्थान में भी अपनी पारिवारिक पीड़ा को व्यक्त करना आवश्यक नहीं समझा। यह किसी को ज्ञात नहीं कि उनके एकमात्र पुत्र का जन्म, पालन शिक्षा-दीक्षा कैसे हुई ? १९३० की क्रान्ति की यादगार असंख्य बालिकाओं में समाकर भाई जी को उन सबका भाई (गुजराती में पिता को भाई कहते हैं) बना गई। मेरा जन्म तो हिमानी के पूर्व ही हो गया था, पर हिमालय के प्रेम में बड़बाज्यू के भक्त मित्र भाई जी के घर परिवार में भी मैं हिमानी (झंडा देवी) ही मानी गई। गुजराती गृह व्यवस्था से अनभ्यस्त व्यवहार के कारण भाई लोगों से 'भूत' कहलाई जाने वाली के उपद्रव सदृश प्रतीत होने वाले कार्यों में भी भाईजी को भलाई दीखती थी। स्वयं भक्ति बेन भी कहती कि उसे बिगाड़ दिया, यह हिमालय का शौक लगा दिया। उसे कुछ हुआ तो

तुम्हारी भी जिम्मेवारी है। वह भूल गई कि आनन्द निवास से माँ ने मुझे उनके ही साथ ही चनौदा कौसानी भेजा था। वही मुझे बागेश्वर ले गई। उन्हीं के पास मैं बम्बई कड़ी कलोल (मथुरा वृन्दावन) ब्रज भूमि में यमुना तट पर घूमी थी उन्हीं के साथ पिण्डारी सरमूल सहस्रधारा की यात्रा की। चाहे भाई जी ने आत्मराज्य की शिक्षा देने के इतने अवसर का पूरा लाभ उठाकर मुझमें वहाँ की नागरिकता को पुष्टि कर दी होगी। श्रेणी किजानन की विरह वेदना को पिण्डर के स्वर में धाकुड़ी की वनावली में प्रतिध्वनित करने की क्षमता से सम्पन्न बम्बई के 'शिव' मन्दिर का आजन्म साधक बापू के स्पर्श से संसार धर्म निर्माता रहा। इसी तरह बापू ने कितने ही साधु राजनीति के व्यूह में डाल दिये। सौराष्ट्र, मुंशी, मेघाणी के विषय की बातों से लेकर अल्मोड़ा के लम्बे स्व० रामदत्त जोशी, सालम, बोरारो काली कुमाऊँ के ग्रामीण वीर सेनानियों के प्रसंग, अल्मोड़ा अखबार शक्ति की भूमिका से लेकर ब्रिटिश कालीन सरकारी कर्मचारियों की देशभक्ति को पहचानने वाले, सरला बहन की प्रेरणा से पहाड़ को प्रभावित करने से लेकर रामकृष्ण मिशन, बोसी और गर्टडू सेन श्री नारायण, यशोदा माँ, गोपाल दा, मोती बहन के समान मदर कुक के भारतीयता में लीन होने के प्रयास को महिमाशाली बनाने वाले करुण मैत्र भाई जी जैसे गीता का जीवन जी रहे थे। अल्मोड़ा भारत के ही नहीं संसार के कोने-कोने से आने वाले ब्रूस्टर से कलाकार लामा गोविन्द जी गौतमी एमिली और धवन जैसे साहित्यिक सबके आतिथेय थे। 'जय जगत्' जैसे चरितार्थ था।

'कर गुजरान गरीबी में मगरूरी किस पर करता है'—भक्ति के साथ गाकर जीवन में अमल कर रहे थे। कोसी का तट भी जैसे गंगा का तट बन गया था। उनका अन्तिम पत्र मुझे यही था कि गत वर्ष (१९८२) हरद्वार में दीपावली के गंगा स्नान का आनन्द जन्मान्तर भी नहीं भूल सकेंगे। महानल की चिनगारी में मोह डुबाकर निर्बन्ध होने की चेष्टा भी स्नेह बन्धन में सेवा के सौभाग्य के बन्धन से रुद्ध न हो पाई, शून्य के अनन्त विस्तार के लिए अनन्त विश्व में अभी तक वही स्वर 'अन्तरमन विकसित करो अन्तर तर है।' सुनती हुई स्वर गुण सौन्दर्य से परे छोर तट विहीन स्थान को जन जगत् जनार्दन में खोजती जा रही है।

मुझे आशा है अति दुस्तर जीवन-पथ में लीन विकासोन्मुख नई पीढ़ी शान्ति भाई की डायरी की प्रेरणा को समझ विश्व बन्धुत्व से आर्जव प्राप्त कर सेवा मार्ग की मधुरता की झाँकी पा सकेगी।

स्नेह लता जोशी
चमोली, गढ़वाल

पूज्य शान्तिलाल भाई जी

लक्ष्मी आश्रम कौसानी में आते ही, पूज्य सरला बहिन जी की छाया में आने के साथ ही पूज्य भाई जी के सान्निध्य का सौभाग्य प्राप्त होते ही, जीवन भर उनके आशीर्वाद एवं सहयोग का मानो आश्वासन मिल गया।

क्रान्ति के पुजारी भाई जी मेरे जन्म के पूर्व से ही छोटे बच्चों से लेकर विद्यालयों के बच्चों, नगरिको के पूज्य बापू का मंत्र देते रहते थे। आश्रम को तो उनका सहयोग सदा ही मिलता रहा। साथ ही स्थानीय क्रांतिकारी व सर्वोदय के लोगों को भी उनका सहयोग पूर्णरूप से मिलता रहा। उन्होंने अथक प्रयास से अल्मोड़ा नगर में स्वतंत्रता सेनानियों का स्मारक बनवाया तथा उनके परिवारों को अपनी छत्रछाया में आश्रय दिया देश के लिए बलिवेदी पर न्यौछावर होने वाले शहीदों की आवाज को सम्पूर्ण संसार तक फैलाने का श्रेय पूज्य भाई जी को ही है।

पूज्य बहिन जी को उनका सहयोग आजन्म मिला। उनका निधन होने पर, क्षीण शरीर होने पर भी वे मेरी सहायता के लिए मेरे पास आये। मैंने पूज्य बहिन जी से उनके त्यागमय जीवन एवं गाँधी विचार धारा के विषय में जो कुछ सुना था, उनसे साक्षात्कार होने पर उस अक्षरशः सत्य पाया। बहिन जी के जाने के बाद उन्होंने मुझे जो स्नेह एवं सेवा का अवसर दिया, उसके लिए मैं अपने को भाग्यशाली समझती हूँ। वे भारत के जिस भाग से आये थे, उनके सम्बन्ध में यह विचार कभी आता ही न था, वे हम सबके थे। क्षेत्र विशेष के न होकर जय जगत को चरितार्थ करते थे।

राधा बहन

मैं १९४९ में राजकीय बालिका इन्टर कालेज अल्मोड़ा की प्रधानाचार्या होकर वहाँ गयी, चनौदा आश्रम में श्री शान्ति भाई से भेंट हुई श्री शान्ति भाई जैसा उनका नाम था सौम्यता व शान्ति के प्रतीक थे। पहाड़ी क्षेत्र के लोगों के जीवन स्तर को ऊँचा करने व आत्मनिर्भर होने में उनका बड़ा हाथ था। वह सच्चे गाँधीवादी थे उनकी कथनी व करनी में साम्य था। अपना सभी कार्य स्वयं करने की उनकी बात थी। उनके निधन से गाँधी परिवार की एक अमूल्य निधि खो गयी है। भगवान उनकी

आत्मा को शान्ति दे और पीछे छूटे परिवार के सदस्यों को उनका विरह सहने की शक्ति दे।

शा० कु० सिन्हा M. A. L. T.
अवकाश प्राप्त P. E. S. I.
जोनल आर्गनाइजर अखिल भा० म० परिषद
सलाहकार सदस्य कस्तूरबा राष्ट्रीय स्मारक संघ उ०प्र०
प्रबन्धक भा० स्का० गा० ह० स० तथा नर्सरी प्रायमरी स्कूल
इलाहाबाद

पूज्य ॐ भाई जी के प्रति

अमर आत्मा को अंजलि इनका नाम तो श्री शान्तिलाल त्रिवेदी था, पूज्य गांधी जी के अनन्य भक्त थे। जवानी के प्रथम चरण में अपना जीवन उनको अर्पण किया। अपनी जन्म भूमि को छोड़कर पूज्य गांधीजी की आज्ञा से हिमालय की तलहटी में अल्मोड़ा में निवास किया। मेरा अन्तिम सात-आठ वर्ष के सहवास में इनको मैं पूरा-पूरा कैसे पहचान सकूँ। बाहर के व्यवहार देखकर मुझे व्यवहार कुशलता अनुभव हुई और और अन्तर की पहचान होकर उनमें सरलता देखी। अब जो उनको संसारी कहता हूँ तो उनकी सन्यास प्राप्त आत्मा को कष्ट हो। अब उनको कैसा कहूँ? मैं तो उनको हमेशा संसारी सन्त कहता हूँ। फिर भी शाही फकीर कहा जा सकता है—वैसा इनका जीवन था। प्रभु उनकी आत्मा को अपनी अमर ज्योति में स्थान अर्पण करे। यही मेरी प्रार्थना है। ॐ ॐ ॐ

स्वामी दयानन्द तीर्थ
(दासानुदास)
९-२-१९८५
अहमदाबाद

श्री शान्ति लाल त्रिवेदी से ५० साल से अधिक का परिचय था। गांधी के आदेश पर इन्हें अल्मोड़ा जैसी ठण्डी जगह का वास करना पड़ा। उसी सिलसिले में यह गाँधी आश्रम में भी अनेक साल काम करते रहे। गाँधीजी की छाप इनके जीवन पर ऐसी पड़ी कि इनका सारा जीवन उनके बताये रास्ते पर चलने में ही व्यतीत हुआ। कुर्मांचल में ऐसा कोई ही सार्वजनिक कार्यकर्ता होगा जो शान्ति भाई के मधुर स्वभाव उनकी ख्याति से परिचित न हो। वह अत्यन्त सरल प्रकृति के तथा सच्चरित्र आदर्शवादी व्यक्ति थे।

सौभाग्य से इन्हें इनकी पत्नी भक्ति-बहिन भी इनके जैसी ही जीवन संगिनी मिल गई। और यह दम्पति हमारे सार्वजनिक जीवन में एक उदाहरण की तरह सबके लिये आदर्श स्वरूप रहें। अपने अन्तिम दिनों में शान्ति भाई हृदय रोग से पीड़ित हुए और १९८४ में उनका निधन हो गया।

१९३१ में उन्होंने मानसरोवर यात्रा की। गाँधीजी ने चाहा वह अपनी यात्रा की डायरी नव जीवन में छापे। पर उनका आग्रह था कि वह हिन्दी में उसे छापे। यह कार्य वह शीघ्र नहीं कर सके। अपनी मृत्यु से थोड़े ही दिनों पहिले यह कार्य सम्पन्न हुआ और अब मित्रों के सहयोग से वह डायरी छपने जा रही है।

मैं इस प्रयास की सफलता की कामना करता हूँ।

विचित्र नारायण शर्मा

परम आदरणीय डिमरी जी,

सादर प्रणाम।

शान्ति भाई बापू के प्रेरणा से पहाड़ी क्षेत्र में आये और उन्होंने अपना पूरा जीवन इस क्षेत्र की सेवा में दिया। उनके ही सद्प्रयास से गाँधी आश्रम के पूज्य विचित्र भाई तथा हमारे जैसे साथियों ने उस क्षेत्र में रचनात्मक कार्य प्रारम्भ किया। पूज्य बापू की अंग्रेज शिष्या जिसे हम लोग प्यार से सरला बहन कहते थे वह भी कौसानी में बैठी और पहाड़ी क्षेत्र के महिलाओं के शिक्षण का कार्य शुरू किया और उन्होंने भी अपनी सारी जिन्दगी पहाड़ी क्षेत्र की सेवा में दी। स्वर्गीय शान्ति भाई आदरणीया भक्ति बहन हम सब लोगों के लिए प्रेरणा के श्रोत बने रहे।

करण भाई

प्रिय भीखू भाई,

सस्नेह वन्दे ।

आपके पत्र से यह जानकर बहुत दुःख हुआ कि आपके पिताजी श्री शान्तिलाल भाई का ९ फरवरी को देहान्त हो गया ।

सन्तोष की बात है कि उन्होंने जहाँ से अपना सार्वजनिक जीवन शुरू किया था अन्त समय वहीं साबरमती आश्रम में पहुँचकर उन्होंने शान्ति के साथ अपना शरीर त्याग किया । पूज्य बापू की आज्ञा से उन्होंने अपना सारा जीवन अल्मोड़ा जैसे पिछड़े हुए प्रदेश के उत्थान में प्रयत्नशील रहते हुए और सेवा करते हुए बिताया ।

पूज्य पिताजी का तो उनके साथ निकट सम्पर्क रहा । भाई कमलनयनजी व मदालसाबहन से खासकर और हम लोगों से भी उनका अच्छा मेल-जोल था । अभी कुछ रोज पहले तो वह मिले ही थे । तब उनकी तबियत ठीक लग रही थी । यह अचानक कैसे हुआ समझ में नहीं आता । ईश्वर की मर्जी ।

आपकी माताजी को हमारी तरफ से हार्दिक संवेदना कहें । आप व परिवार के इस दुःख में हम सहभागी हैं । ईश्वर से प्रार्थना है कि वह गतात्मा को शान्ति प्रदान करे व शोक सन्तप्त परिवार के लोगों को यह दुःख सहन करने के लिए धीरज व हिम्मत दे ।

आपका—
रामकृष्ण बजाज
बम्बई

मुझे विश्वास है कि वे जितने ऊँचे व्यक्ति थे उतने ही बापू के स्वर्गवास के बाद उनका लेखन उत्तरोत्तर, ऊँचा व बोधपूर्ण होगा ।

शिवाजी भावे
ब्रह्म विद्या मन्दिर, भवनार, जिला—वरधा

मधु ज्योत ट्रस्ट

मधुवाता ऋतायते

मु० शान्ति भाई स्वयं तो कृतार्थ थे, उनकी निःस्वार्थ सेवा का लाभ आज तक मिलता रहा । वर्तमान परिस्थिति में भी गाँधी मार्ग में स्थिर रहे, सर्वोदय कार्य में अन्त

तक सेवाभावी रहे—इसका हमें गर्व है। उनके साथ-साथ कन्धे मिलाकर पूज्य भक्ति बा हिमालय प्रदेश में स्त्रियों के बीच रह सेवा की प्रेरणा देती रहीं। आशा है कि अभी भी प्रेरणा देती रहेंगी।

(आचार्य) विष्णु देव पंडित
धर्माधिकारी
कामकोटि पीठ
२९ दादा भाई पार्क, गीता मन्दिर रोड
अहमदाबाद

स्वर्गीय शान्ति लाल त्रिवेदी जी को विनम्र श्रद्धांजलि

श्रद्धेय,

स्वर्गीय शान्ति लाल त्रिवेदी जी का नाम मैंने प्रथम बार सन् १९३० ई० में सत्याग्रह आन्दोलन में सुना था। रानीखेत में स्वर्गीय पंडित हरगोविन्द पन्त जी के नेतृत्व शराब भट्टी सत्याग्रह चालू किया गया था, मैं तब कक्षा ८ का विद्यार्थी था। गाँधीजी का आदेश था कि विद्यार्थी भी सत्याग्रह में शामिल हों, उसी आदेश का पालन कर मेरे अग्रज शेरसिंह जी तथा मैंने पढ़ाई छोड़ी, और रानीखेत में सत्याग्रह में शामिल हो गये।

अल्मोड़ा में स्वर्गीय विक्टर मोहन जोशी तथा शान्ति लाल त्रिवेदी जी के नेतृत्व में झण्डा सत्याग्रह आन्दोलन शुरू हुआ था। और पुलिस की जो मार उन पर पड़ी, उससे वे जिले भर में विख्यात हो गये। त्रिवेदी जी अल्मोड़े जिले में आये तो थे स्वास्थ्य लाभ करने, किन्तु वहाँ के स्वतन्त्रता संग्राम आन्दोलन तथा गाँधीजी द्वारा निर्धारित कुटीर उद्योग और ग्राम सुधार के प्रमुख नेता बन गये, उन्होंने जीवन में कभी भी राजनैतिक प्रमुखता पाने का प्रयास नहीं किया। किन्तु अपने कार्य के प्रति सच्ची लगन और निष्ठा ने उन्हें जिले का ही नहीं, अपितु प्रान्त का एक प्रमुख स्वतन्त्रता सेनानी और रचनात्मक कार्यकर्ता बना दिया।

आज जो कुछ अल्मोड़े जिले में ही नहीं, वरन् कुमाऊँ में कुटीर उद्योग देखे जा सकते हैं, उनकी भूमिका और विकास में शान्तिलाल जी का प्रमुख हाथ रहा है। जब शान्तिकाल होता था तब वे रचनात्मक कार्यों में जुट जाते थे, और जब आन्दोलन काल होता था, तब वे एक सच्चे स्वतन्त्रता सेनानी की तरह हर कष्ट को उठाने के लिए तैयार रहते थे। चनौदा आश्रम को अपना रचनात्मक कार्यों का केन्द्र बनाकर उन्होंने जीवन भर कुमाऊँ में रचनात्मक कार्यों मुख्यतः ऊनी कारोबार को बढ़ाने का निरन्तर प्रयास किया। और उसे काफी ऊँचे स्तर तक बढ़ा दिया।

मुझे १९३७ ई० से उनके साथ निरन्तर भ्रमण करने का अवसर मिला, जिस सादगी से वे पैदल कुमाऊँ के पर्वतों को पार करते रहते थे, वह उनकी सच्ची निष्ठा और साहस का द्योतक है। मैंने कभी उनके साथ कोई कुली नहीं देखा। थोड़ा सा आवश्यक सामान वे खुद पीठ पर लादकर ले जाते थे, और जैसा आवास और भोजन मिला उस पर सन्तोष कर लेते थे। इन भ्रमणों में मुझे उनके साथ कई बार रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सन् ४२ के भारत छोड़ो आन्दोलन से हम साथ ही केन्द्रीय जेल बरेली में थे, वे अपना सारा समय अध्ययन में लगाते, और उनके इतने सन्निकट आने से मैंने उनसे बहुत कुछ सीखा।

जीवन के अन्तिम क्षण तक वे सच्चे गाँधीवादी की तरह कार्य करते रहे, और चरैवेति, चरैवेति वैदिक मंत्र का पालन करते रहे। उनमें जहाँ स्वभाव की सरलता और हृदय की कोमलता भरी हुई थी साथ ही अदम्य साहस और अलौकिक दृढ़ता भी कूट-कूट कर भरी हुई थी, वे सदा प्रेरणा के स्रोत रहे, और आगे भी रहेंगे। स्वर्गीय शान्ति लाल त्रिवेदी जी को सत् सत् नमस्कार।

हल्द्वानी
दि० १५-२-८५

भूपाल सिंह खाती
भूतपूर्व अध्यक्ष जिला परिषद
अल्मोड़ा, भू० पू० एम० एल० ए०
शिवसदन बरेली रोड

दो शब्द (कतिपय पंक्तियाँ)

मेरे दिवंगत भाई की पुण्य स्मृति से

मेरे जीवन में "भक्ति और "शान्ति" का जो आभास मैंने पाया उसे मैंने भविष्य का पाथेय समझ लिया है।

शान्ति भाई को मैंने अपने शैशव से देखा बहुत ही समीप से भाभी और भाई के साथ के सुखद क्षण जो बीते हैं उनकी स्मृति में कभी भी नहीं भुला सकती। वे कितने कर्मठ थे सेवा का मूल मंत्र ही उनके जीवन का ध्येय था। सबके प्रिय थे शान्ति भाई। उन्होंने दुःख, पीड़ा, कष्ट को जीवन में ललकारा और बाधाओं से जूझते रहे—देश, जाति भाषा उनके पथ में व्यवधान नहीं बने जहाँ रहें वहीं के लोकजीवन में घुल मिल गये। बापू ने उन्हें पहचाना जो काम उन्हें सौंपा उसे वे आजीवन करते रहे वे भारतमाता के गुदड़ी के लाल थे—देश सेवा में उन्होंने अपनी सारी शक्ति 'होम दी गीता' के माकर्मफल

हेतुर्भू, के अनुसार कभी फल की आशा नहीं की। यश कीर्ति भीड़ से भागने वाले शांति भाई अमर हो गए। उनका एक चित्र मेरे पास है जब वे मानसरोवर में नहा रहे थे—

क्या दिव्य कान्ति है—जो मानसरोवर हमारा सपना है उनके लिए वह सब सुलभ था मानसरोवर में गोता लगाकर जीवन में जो चिन्तामणि उन्होंने पायी उससे हमने बहुत कुछ लाभ पाया सीखा। उनको साध्वी पत्नी कोटी भक्ति ने उन्हें शांति के अंचल की छाया दी जिसे पावे और हम सब अपने को धन्य समझते हैं जो कोई भी उनके सम्पर्क में आया उनके उत्साह कर्म कर्तव्य की त्रिवेणी में स्नान कर धन्य हो गया।

उनकी ही बहिन
जयन्ती

हे शान्तिलाल त्रिवेदी (शान्ति भाई)

शक्ति के विशेष दूत तेरे चरणों में सादर प्रणाम

गुजरात प्रान्त ने जहाँ महर्षि दयानन्द, राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी को जन्म दिया वहाँ उसी प्रान्त ने इन महानविभूतियों के आदर्शों को साकार रूप देने के लिए श्री शान्तिलाल त्रिवेदी जैसे तपस्वी भी पैदा किये।

प्रेरणा मिली कि हिमालय से वही धारायें सारे भारत को पुष्पित, पल्लवित एवं समृद्ध करती है। अतएव अपनी कार्य स्थली अल्मोड़ा को बनाकर सारे पर्वतीय प्रदेश में जन-जन में जाग्रण किया। राष्ट्र प्रेम जगाकर दास्ता से मुक्त होने का शंख बजाते रहे, सारे भारत को प्रभावित किया। प्राणी मात्र से प्रेम जीवन का लक्ष्य था। अन्तरात्मा से निकली हुयी आवाज उनके मधुर स्वर में जिसके कानों में पड़ गयी वह उनका हो गया। उन्होंने अपना बना लिया। स्वतन्त्रता संग्राम में अनेक बार जेल यात्रायें की। उन्होंने अनेक अपार कष्ट सहे लेकिन ध्येय से कभी विचलित नहीं हुये। चर्खा, तकली, एवं खादी उनके जीवन से इस प्रकार जुड़े थे जैसे तन व प्राण। दीन दुखियों के मसीहा थे। मानव मात्र की सेवा में भगवान की पूजा का आनन्द लेते थे।

इस हिमालय और यहाँ के जन-जीवन से ऐसे जुड़ गये थे कि इससे अलग हो ही नहीं सकते थे।

उनकी अन्तिम इच्छा थी कि मेरी माटी इसी पावन भूमि को समर्पित हो तभी तो चाहा था कि मेरी अस्थियाँ पर्वत में, पावन नदियों में प्रवाहित कर दी जाय। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

बाँके लाल

श्रद्धांजलि

पूज्या भक्तिबहन के पत्र से यह विदित कर कि पूज्य स्व० शान्तिलाल त्रिवेदी भाई की डायरी, जो कि १९३१ में पूज्य बापू की अनुमति से उनकी कैलास-मानसरोवर की यात्रा सम्बन्धी है, अब उत्तर प्रदेश शिक्षा विभाग के अधिकारियों के सद्प्रयास से प्रकाशित हो रही हैं। अति सन्तोष हुआ।

१९८३ के मई में मैं पूज्य शान्तिभाई एवं पूज्य भक्तिबहन के दर्शनार्थ सर्वोदय कुटीर अल्मोड़ा गई थी। भाईजी स्वास्थ्य सम्भालने का प्रयास कर रहे थे और उन्हें पू० स्व० सरला बहन के स्मृतिग्रन्थ के सम्पादन की चिन्ता थी। कुछ वर्ष पूर्व मैंने भाईजी से अनुरोध किया था कि आत्मकथा लिखें, हँसकर कहने लगे कि इसकी क्या आवश्यकता है। मैंने कहा कि इसकी आवश्यकता भावी पीढ़ी को होगी।

आज भाईजी की पुनीत कैलास यात्रा की डायरी हिन्दी में प्रकाशित हो रही है। उ० प्र० शिक्षा विभाग के अधिकारियों को धन्यवाद है कि उन्होंने यह पुण्य अर्जित किया हैं।

पू० शान्ति भाई एक तपस्वी, त्यागी और ज्ञानी सर्वोदय कार्यकर्त्ता थे। 'सर्वोदय' का तात्पर्य यहाँ पर किसी संस्था विशेष से नहीं है। वे जाति पाँति, वर्ग भेद से ऊपर उठकर सर्वजन हिताय कार्य, निष्कामभाव में सम्पन्न करते रहे। उनकी पार्थिव देह का जन्म राजकोट गुजरात में हुआ, पर पू० बापू के आदेशानुसार उनका कर्मक्षेत्र बना पर्वतीय क्षेत्र विशेषकर कुमायूँ। लगभग ५६ वर्ष कूर्मांचल की सेवा में संलग्न रहें। आप पर्वतीय जनमानस में एक हितैषी वन्धु की भाँति छाये रहे।

स्वतन्त्रता संग्राम में आपने अनेक शारीरिक मानसिक यातनाएँ झेली। मुझे स्मरण है कि १९३० के माह अप्रैल में, अल्मोड़ा में आप अंग्रेजों के लाठी चार्ज से बुरी तरह घायल हो गये थे। कुछ पसलियाँ टूट गई थीं और अस्पताल में भर्ती किये गये। तब मैं पाँचवीं कक्षा की छात्रा थी। अपनी बड़ी दीदी स्व० रन्दा देवी जो कि सीमान्त क्षेत्र की प्रथम शिक्षित महिला थी और शिक्षिका के पद पर कार्य कर रही थी, के साथ भाईजी से मिलने गई। तब पू० भक्ति बहन के पैर भारी थे—उनकी भी चिन्ता थी।

शान्ति भाई अनेक बार जेल गये। गांधीजी के सच्चे अनुयायी को स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त किसी पद का प्रलोभन नहीं था। आपने न मान चाहा, न धन दौलत।

भाईजी बड़े सरल स्वभाव के थे, स्नेही थे। जो उनके सम्पर्क में आता, वह उनसे प्रभावित हुये बिना नहीं रहता। कूर्मांचल के सुदूर उपेक्षित क्षेत्र ब्यास, चौदांस एवं जोहार का अनेक बार भ्रमण किया। जनसम्पर्क करते। गांधीजी के आदर्शों पर आधारित प्रवचन देकर क्षेत्र के विकासार्थ आर्थिक लाभ, आत्मनिर्भरता एवं पारस्परिक

सहयोग का पाठ सिखाते, सामाजिक कुरीतियाँ, जुआ, शराब आदि से बचने की सलाह देते रहे।

भाईजी की प्रगाढ़ आस्था परम पूज्य श्री नारायण स्वामीजी में भी थी। पूज्य स्वामीजी ने कूर्मांचल में पिथौरागढ़ के सीमान्त क्षेत्र में ९००० फिट की ऊँचाई पर एक अत्यन्त रमणीक भव्य आश्रम का आध्यात्मिक, शैक्षिक, सामाजिक तथा आर्थिक उत्थानार्थ १९३६ में स्थापित किया था। अस्कोट के निकट बापू महाविद्यालय की स्थापना थी। जिसमें इण्टरमीडिएट कक्षाओं में कला एवं विज्ञान के शिक्षण की सुव्यवस्थित शिक्षा दी जाती थी। जो अब बापू राजकीय इण्टर कालेज नारायणनगर के नाम से प्रसिद्ध है।

भाईजी, पू० नारायण स्वामीजी के कार्य कलापों में रुचि लेते थे तथा सहयोग भी देते थे। भाईजी कहा करते थे कि आध्यात्मिकता में, आपकी बचपन से बड़ी अभिरुचि रही। पूज्य नारायण की सत्संगति से आपने बड़ा आध्यात्मिक लाभ उठाया।

शान्तिभाई की सहधर्मिनी भक्तिबहन के सहयोग के बिना उनका जीवन कुछ अधूरा रह जाता कहूँ तो इसमें कुछ अतिशयोक्ति नहीं होगी। भक्तिबहन बड़ी साध्वी, सुघड़ गृहिणी, सेवा-त्याग की प्रतिमूर्ति पतिव्रतानारी ने अपने पतिदेव का हर परिस्थिति में सदैव, सहर्ष साथ दिया। आपका कुटीर एक आदर्श स्वरूप रहता, बड़ी ही स्वच्छता एवं सुव्यवस्था रहती। पति-पत्नी का गृह कार्य आपस में बँटा रहता था।

भाईजी के साथ के पावन संस्मरणों की मधुर स्मृतियाँ उभर-उभर आती है। जब भी मिलते बड़े प्यार से बात करते थे। उनका व्यवहार आत्मीयता से भरपूर रहता। उनके दर्शन कर ऐसा सन्तोष होता था, उसका वर्णन शब्दों में नहीं बाँधा जा सकता है।

आज भाईजी सदेह हमारे मध्य में नहीं हैं उनकी आत्मा हमारे मध्य नहीं है पर उनकी आत्मा हमारे मध्य कार्यशील है, प्रेरणा का स्रोत है। आप सदैव अमर हैं।

गंगोत्री गर्ब्याल

शांति भाई ने अपना अमूल्य जीवन देश की स्वतंत्रता की लड़ाई में भाग लेते हुए आरम्भ किया। उस समय एवं स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त पहाड़ी अंचलों में समाज सुधार एवं ग्रामोद्योग को बढ़ावा देने में जीवन व्यतीत किया। सूत्र-यज्ञ में बापू के अनुसार आजन्म रत रहे। मैं उनके सम्पर्क में बचपन से रही हूँ। मेरे बड़े भाई श्री जगत सिंह पांगती (स्वतंत्रता संग्राम सेनानी) एवं चाचा श्री भगतसिंह जी के साथ हमारे घर भैंसखाण एवं मुन्स्यारी आते रहते थे एवं प्रौढ़शिक्षा, स्त्री शिक्षा एवं ग्राम सुधार

व्यवस्था की चर्चा होती थी। हमारे परिवार से उनका अटूट सम्बन्ध रहा है। मुझे भी उनसे शुद्ध स्नेह और आशीर्वाद मिलता रहा। स्व० सरला बहन के साथ १९४५ में अंग्रेजों (सरकार) की पकड़ में न आने को स्वयं स्वतंत्रता की भावना प्रचार प्रसार की बात करने हमारे घर छिपने को आते थे। चार माह कस्तूरवा उत्थान मंडल लक्ष्मी आश्रम में उनसे सम्पर्क रहता था। उसके उपरान्त अपनी बहन स्व० कला पांगती के पड़ोस में सत्संग रहने से उनका सम्पर्क खादी ग्रामोद्योग के सेवाकाल से सदा बना रहा। उनकी आवाज में एक निर्भीकता की गर्जन थी। एक बार गाँधी जयन्ती में माइक के काम न करने पर मशीनरी वस्तुओं के आधार पर निर्भर न रहने की बात करते हुए प्रकृति की शक्ति पर विश्वास करने की प्रेरणा देते हुए भाषण जारी रखा। गाँवों एवं इलाकों में प्रभात फेरी, ग्राम विकास और स्वच्छता के कार्यक्रम करवाते रहते थे। उनको श्रद्धांजलि अर्पण है।

हेमा जंगपांगी
द्वारा जिला उद्योग अधिकारी चलोली

हमारे सार्वजनिक जीवन का संबल देने वाले

बापू के आदर्शों पर अपना जीवन ढालने वाले रचनात्मक कार्यकर्ताओं में श्री शांतिलाल भाई जी हम पर्वतीय कार्यकर्ताओं के लिए प्रेरणा के स्रोत्र थे। हमारा उनसे सम्पर्क पूज्य सरला बहन जी के माध्यम से हुआ, क्योंकि वे सरला बहन जी द्वारा पर्वतीय महिलाओं में नया जीवन फूंकने के लिए प्रारम्भ किए गए कस्तूरवा महिला उत्थान मण्डल के प्रयोग में उनके निकटतम सहयोगी थे।

उन्होंने पहाड़ों को अपनी कर्मभूमि बनाया और पहाड़ों की जनता के साथ इस प्रकार एकरूप हो गये कि पहाड़ों में जन्मे विरले लोगों के दिल ही उनकी तरह पहाड़ों की वेदना से बेचैन थे। मूलतः खादी कार्यकर्ता थे, लेकिन उन्होंने आजादी की लड़ाई में और मुख्यतः सन् ४२ की अगस्त क्रांति में गाँधी आश्रम, चनौदा को पूरी तरह झोंक कर यह सिद्ध कर दिया कि खादी के केन्द्र गाँधी के सत्याग्रहियों की छावनियाँ हैं। आजादी के बाद वे अधिकांश स्वतंत्रता संग्राम की सेनानियों की तरह सत्ताभिमुख नहीं हुए, बल्कि जनता के दुःख दर्दों को दूर करने और अन्याय के खिलाफ सत्याग्रह ही की अहिंसक प्रतिरोध की भावना जगाने में लगे रहे। वे अपनी वृद्धावस्था और हृदय रोग की चिंता न करते हुए भी वे हर घड़ी लोगों की सहायता के लिए अधिकारियों के पास जाना

अपना कर्त्तव्य समझते थे। वे साहस और पराक्रम की प्रतिमूर्ति थे, इसलिए कैलाश-मानसरोवर, मुनस्यारी, दारमा घाटी आदि दूरस्थ दुरूह क्षेत्रों की कठिन यात्रायें कर सकें। छठे दशक से जब मैंने (सुन्दर लाल) पहाड़ों की पदयात्रायें प्रारम्भ की तो दूर-दूर के गाँवों में लोग उनका स्मरण करते थे।

वृद्धावस्था और शारीरिक कमजोरी ने उनका उत्साह मंद नहीं किया। वे अंतिम क्षण तक किसी न किसी कार्य में लगे रहे। सरला बहन स्मृति ग्रंथ उनकी अन्तिम कृति थी, जिसमें व्यस्त रहने के कारण वे अपना कैलाश-मानसरोवर की यात्रा का विवरण अपने जीते जी प्रकाशित न करा सके। वे अंतिम दिनों में जाड़े के मौसम में बम्बई चले जाते थे, लेकिन उनका हृदय पहाड़ों में रहता था। प्रकृति में ईश्वर दर्शन का वेदांती संतों का संदेश उन्होंने आत्मसात् कर लिया था। उत्तराखण्ड के प्रति उनके प्रेम की बुनियादें इसी में थी, क्योंकि स्वामी रामतीर्थ और विवेकानन्द की यह तपःस्थली रही है और उनके विचारों को वे जीवन का संबल मानते थे।

अपने नाम के अनुरूप ही वे शांति के लाल थे, शांति के स्रोत थे। उनके पास कितने ही उत्तेजित होकर कोई जावे, शांत होकर लौटता था। वे प्रायः अल्मोड़ा के गाँधी आश्रम में बैठे हुए मिलते थे या अपने घर से बाजार की ओर आने वाली सीढ़ियों पर चढ़ते हुए दिखाई देते थे। चाहे शराबबन्दी का आन्दोलन हो और चाहे प्रकृति संरक्षण का 'चिपको' आन्दोलन, उन्होंने इनके लिए अपनी पूरी शक्ति से काम किया। उनकी कर्मठता हमारे सार्वजनिक जीवन का संबल है।

सुन्दर लाल बहुगुणा, विमला बहुगुणा
नवजीवन आश्रम, पो० सिल्यारा
टिहरी गढ़वाल, उ० प्र०
पिन—२४९१५५

पू० शान्ति भाई के निधन से हम गीता में वर्णित निरभिमानी, मैत्री, करुण, योगनिष्ठ संत की सात्त्विक मेमान छाया से वंचित हो गये। सौभाग्यदेव रचित—"कैलास-मानसरोवर के पथ में—पुस्तक में उनका एवं पूज्य भक्ति बा उल्लेख पढ़ कर उनसे परिचय की उत्सुकता से प्रेरित हो कर सन् १९७२ में उनसे मिल सकी। तब से फिर ८१ में अल्मोड़ा एवं नारायण-आश्रम की सरल प्रकृति का उनकी संरक्षकता में आनन्द उठा कर उनके एवं भक्ति बा के साथ सन् ८२ में से हरद्वार जाकर उसी वर्ष अपने दिवंगत पिता के वियोग से मन शांत करने का प्रयत्न किया। अन्त में २८ जनवरी ८४

को परमात्मा सर्वत्र है सबका है—इसी संदेश को लेकर विदा हुई भक्ति बा अब भी अपनी क्षीण काया में उसी सात्विक सर्वोदयी जीवन की प्रतीक हुई अल्मोड़ा में उनके शेष कार्य—कैलास-मानसरोवर यात्रा डायरी को पूर्ण कर रही हैं। मेरी श्रद्धा के पुष्प पूज्य बापू जी को अर्पित हैं। अन्त में जाप के प्रयास में रखी उनके हाथ की माला बा ने मुझे प्रसादी दी है। इस डायरी का प्रसाद समाज में वितरित हो यह मेरी मंगल कामना है।

श्रीमती ज्योति हर्षद वोरा

ॐ शान्ति

दरिद्र नारायण का पुजारी

स्वर्गीय शान्तिलाल भाई जी के दर्शन सर्वप्रथम जनवरी १९३६ में तब हुये जबकि पर्वतीय अंचल में छतार स्टेट चनौदा नाम के स्थान में श्री गाँधी आश्रम की शाखा का (स्व० चन्द्रदत्त बुद्धिबल्लभ) उन्होंने उद्घाटन किया। इस केन्द्र के द्वारा ऊन कताई बुनाई चर्खा-कर्घा निर्माण कार्य होने लगा। उस समय मेरी आयु १३ वर्ष की थी, इसलिये वैचारिक दृष्टि से श्री शान्ति भाई को मैं पहचान नहीं सकता था। श्री गाँधी आश्रम को उन्होंने एक लाठी के सहारे के रूप में ही अपनाया था। उनका जीवन लक्ष्य तो पूर्ण स्वराज्य और अन्त्योदय का था। इसी संदर्भ में उन्होंने चनौदा में स्वराज्य आश्रम की स्थापना के लिए थोड़ी भूमि, ग्रान्ट करवाई। पाँच बजे आश्रम का काम बन्द होने के बाद, सहयोगी कार्यकर्त्ताओं को साथ लेकर स्वराज्य भवन का स्थान बनाने के लिये चट्टान को तोड़ना शुरू कर दिया। भवन के लिये गाँव-गाँव जाकर अन्नदान लेकर भवन निर्माण कराया। जिसमें प्रथम कांग्रेस मण्डल की स्थापना कर जन-जन तक आजादी की लड़ाई का सन्देश अनवरत पहुँचने लगा। गाँधी जी की शिक्षाओं का प्रचार प्रसार किया।

९ अगस्त १९४२ को गाँधी जी ने करो या मरो का नारा देश को दिया। उस समय चनौदा क्षेत्र के कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं को मार्गदर्शन देकर आजादी की लड़ाई का संचालन कर सैकड़ों कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं के साथ स्वयं भी गिरफ्तार होकर जेल चले गये। आश्रम संस्था बन्द हो गई। सरकार ने सब सील कर दिया। उस आन्दोलन में १८ साल की उम्र में मैं भी गिरफ्तार हो गया। अल्मोड़ा जेल में शान्तिलाल भाई से कभी-कभी मिलना हो जाता था, क्योंकि हम लोग अलग बैरकों में रखे गये थे।

जेल से छूटने के बाद उन्होंने १९४५ में पुनः आश्रम का कार्य शुरू कर दिया। संस्था की क्षतिपूर्ति के लिये सरकार पर ९९,९९९ रुपये सवा पन्द्रह आना का दावा

दायर कर क्षतिपूर्ति कराई । आश्रम का कार्य चलता रहा । चूँकि उस समय खादी कार्य के लिये सरकार से कोई मदद नहीं मिलती थी, इसलिये किसी साल थोड़ा घाटा भी हो जाता था । आश्रम अधिकारी चाहते थे कि घाटा नहीं होना चाहिए । आर्थिक दृष्टि से भी लाभ होना चाहिये । तब शान्ति भाई ने जवाब दिया कि गाँधी आश्रम जैसी संस्था का जो मुख्य उद्देश्य – भारत की आजादी था, वह पूरा हो चुका है । यदि जन हित के लिए आश्रम जैसी संस्था थोड़ा भी घाटा बर्दाश्त नहीं कर सकती है, तो चनौदा गाँधी आश्रम को बन्द कर दिया जाये । या फिर हमें इजाजत दी जाये कि खादी काम के साथ-साथ हम आलू का भी व्यापार कर सकें और घाटे की पूर्ति होती रहे ।

आजादी के बाद गाँधी आश्रम में भी कई प्रकार की राजनैतिक विचारधारा के पक्षधर आश्रम के मुख्य लोग हो गये । परन्तु शान्तिलाल भाई सर्वोदय विचार के अलावा किसी राजनैतिक पार्टी के समर्थक नहीं बने । इन दो-एक कारणों से, चनौदा में १६ साल रहने के बाद उन्हें मथुरा, फिर देहरादून ट्रांसफर कर दिया गया । चूँकि एक लम्बे समय से पर्वतीय जलवायु में रहने के कारण मैदान में जाकर उनका स्वास्थ्य खराब रहने लगा, तो १९५२ में उन्होंने आश्रम संस्था को त्याग दिया, और अल्मोड़ा में सर्वोदय कुटीर में रहने लगे । वहाँ पर कालेजों में जा-जाकर विद्यार्थियों को सर्वोदय का विचार देते रहे । कमजोर गरीबों की मदद करते रहे । चाहें अदालती मामला हो, सरकारी विभाग में हो या कमजोर व्यक्ति को न्याय मिलने की बात हो, इसके लिए जीवन के अन्तिम क्षण तक स्वास्थ्य कमजोर होते हुए भी शान्ति भाई स्वयं साथ जाते थे ।

सन ५१ के लगभग खीराकोट गाँव की हरिजन बस्ती में टाइफाइड ज्वर की बीमारी शुरू हो गई जिससे कई मौतें भी हो गई थी । दरिद्रनारायण के पुजारी के कोमल हृदय की व्यथा बढ़ गई । प्रातःकाल मेरे आंगन में आकर आवाज दी, "हिम्मतदा कहाँ है ?" जबकि मैं उनके मातहत ही काम करता था, और उम्र में भी २२ वर्ष छोटा था, फिर भी बड़े भाई का सम्बोधन मेरे लिये, समझ नहीं पाया था । खैर हरिजन बस्ती में घर-घर जाकर बीमारों को देखा । वापस आश्रम जाकर उन्होंने जिला स्वास्थ्य विभाग से लिखा पढ़ी की, और चनौदा में कैम्प लगवाकर बीमारों को वहाँ रखवाया, इस प्रकार हरिजन भाइयों की रक्षा की ।

हर साल अप्रैल में राष्ट्रीय सप्ताह मनाने का कार्यक्रम, कार्यकर्त्ताओं के साथ प्रतिदिन अलग-अलग गाँव में जाकर पानी के धारे-नौले (बावड़ी) और रास्तों की सफाई की जाती थी । रास्ते जहाँ अधिक गन्दे होते थे, वहाँ शान्ति भाई स्वयं हाथ में फावड़ा-बेलचा लेकर सर्वप्रथम गन्दगी उठाते थे, तो हमारे अन्दर की झिझक भी दूर हो जाती थी, ग्रामीण लोगों में यदि कोई झगड़ा-फिसाद जैसी समस्या हो जाती थी, तो दोनों पक्ष शान्ति भाई के पास जाकर समाधान पाते थे ।

सन् ४५ में ही जेल से लौटने के लक्ष्मी आश्रम कौसानी में कस्तूरबा महिला उत्थान मण्डल की स्थापना कर उसके लिए सरला बहन के साथ दूर-दूर जाकर चन्दा एकत्रित कर छात्रावास-विद्यालय आदि के निर्माण के लिये अथक प्रयत्न करते रहे। इस संस्था के आजीवन संस्थापक सदस्य रहे। अन्त में सरला बहन स्मृति ग्रंथ के लिये भी दूर-दूर जाकर चन्दा एकत्रित किया। विधि का विधान, स्मृति ग्रन्थ छपने से कुछ ही समय पूर्व शान्ति भाई दिवंगत हो गये।

चाहें व्यक्ति की समस्या हो या गाँव की हो, क्षेत्रीय समस्या हो या राष्ट्र की समस्या हो, उसे दूर करने के लिये शान्ति भाई तन-मन-धन से रात-दिन जुट जाते थे, और समस्या को हल करके ही चैन की सांस लेते थे। दानपुर इलाके में अकाल पड़ा, तब भी घर-घर जाकर चन्दा इकट्ठा किया। श्री गाँधी आश्रम से दस हजार रुपये दिलाया सरकारी स्तर पर सम्पर्क स्थापित कर, वहाँ ठीक से अन्न पहुँचे ऐसी व्यवस्था कराई। अकाल पीड़ितों को कुछ काम मिले, इसके लिये रिंगाल की टोकरी, पिटारे, ट्रे आदि सामान बनवाने की व्यवस्था कर राहत दिलाई।

चीन ने देश पर हमला किया, तब भी राष्ट्रीय रक्षा कोष के लिये जन-जन के लिये जन-जन के पास जाकर अर्थ संग्रह किया। इसके लिये महिलाओं ने अपने आभूषण तक शान्ति भाई को दान में दे दिये। क्योंकि उनपर लोगों की एक आस्था थी। इसी सन्दर्भ में यह भी मैं नहीं भूल सकता हूँ कि स्वर्गीय शान्ति भाई जो निरन्तर जन सेवा में लगे रहते थे, अपने स्वास्थ्य की भी परवाह इसके लिये नहीं करते, तब उनकी सह-धर्मणी पूजनीया भक्ति देवी उनकी हर प्रकार से उचित देखभाल का खयाल रखती थी, और उनकी जनसेवा में सहयोग देकर, उसे द्विगुणित करती थी। शान्ति भाई की सुख-सुविधा के लिये स्वयं अपने स्वास्थ्य की कोई परवाह भक्ति बहन ने कभी नहीं की।

स्वर्गीय शान्ति भाई की एक पुण्यतिथि मनाई जा चुकी है। ऐसे निष्काम दरिद्र नारायण के पुजारी को बारम्बार मेरा शत-शत प्रणाम।

हिम्मतसिंह भाकुनी
ग्रा०-खीराकोट
पो०-चनौदा
जि०-अल्मोड़ा

जीवन-परिचय

भक्ति देवी से वार्ता

पति प्राणा 'पति छाड़ि अन्य गति नाहीं, चरितार्थकरती, कुशाग्रबुद्धि, व्यवहार-कुशल, स्वाभिमानिनी, स्पष्टभाषिणी, 'भक्ति' का नाम भी 'शान्ति' का ही पूरक शान्ति-

लोक में ही मिला है। माँ-बाप की 'नवल बेन' ससुराल में भक्ति बनी। समय और परिस्थिति ने जो कुछ बनाया–वही है। केवल सत्य, अहिंसा, सुव्यवस्था, सफाई, मूलभाषा गृहस्थी राजकोट वैष्णव परिवार की है। विवाह होते ही अलङ्कार एवं विदेशी होने से रेशमी का त्याग कर गाढ़ा और काँच की बंगड़ी, नाक की लौंग एवं कुंकुम ही सुहाग चिन्ह की तरह धारण किया। काल-क्रम से उस आभूषण से वंचित होकर पति के गुणों के अनुस्मरण में रमी क्षीणकाया, भक्ति का देशानुराग की स्नेह वर्तिका की भाँति ही अस्तित्व है। भाई जी के लिए कुछ लिखने का निवेदन होने पर कहा–जो तेरे भाई जी ने लिखा होगा–जो मैं पुस्तक भेजते समय भेज चुकी हूँ और तुम्हे पता ही है-इससे अधिक नहीं लिख सकती। भाई जी ने सद्यः प्रस्तुत कृति में अल्मोड़ा में आजादी की लड़ाई की झाँकी अवश्य दी है। उनके विवरण स्वतन्त्रता की वेदी की सामग्री बनी पर्वतीय जनता के सहयोग के प्रमाण हैं। भक्ति बहन से हुई बातचीत के विवरण प्रस्तुत हैं —

प्रश्न आप लोगों की व्यवस्था पहाड़ आते ही कहाँ हुई ?

उत्तर - मैं तो सन् १९२९ में आई तुम्हारे भाईजी १९२८ में आये। श्री गोविन्द वल्लभ पन्त जी के पास जाने को कहा गया तो उन्होंने हल्द्वानी हरिदत्त जोशी जी के पास भेजा। उन्होंने बंगले में ऊपर के कमरे में रखा उसके तीन-चार दिन बाद अल्मोड़ा प्रभुदास गाँधी के पास नारायण तिवारी दीवाल केशवदत्त तिवारी के मकान में रहे। बम्बई जस्टिस भगवती की भी यही व्यवस्था थी। जब परिचय का क्षेत्र बढ़ा तो श्री हर्षदेव ओली, श्री बद्रीदत्त पाण्डे, श्री हरगोविन्द पन्त, श्री मोहन जोशी, रमण के श्री हरिकृष्ण के सम्पर्क में आये। श्री मोहन जोशी तो भाई तरह बन गये। आजन्म श्रद्धा-भाजन रहे। यशोदा माँ भी तभी मिल गईं। १९२९ में मैं भी उनके साथ आई। मुझे केशवदत्तजी के घर बिठाकर बोले कि घर में कोई व्यवस्था नहीं, पहले घड़ा ले आऊँ। यह ताँबे का घड़ा तभी का है। धीरे-धीरे गृहस्थी बढ़ गई। यशोदा माँ मेरी सास के स्थान में थी। उन्हीं ने बिनाई और हिन्दी बोलना सिखाया। पहाड़ी तो कुकुड़ा गाँव के देवीदत्त जी से सीखी। वह हिन्दी बोलते ही न थे।

प्रश्न—भाईजी अपने पूर्व जीवन के बारे में क्या बताते थे ?

उत्तर—यह सबको पता था, इनकी ढाई वर्ष की उम्र में माँ का देहान्त हुआ। बाद में ९ वर्ष तक मेरे ससुर भी नहीं रहे। यह तो अपने निःसन्तान चाचा चाची (श्री मायाशंकर त्रिवेदी) के पास रहे। वह भावनगर में रियासत में पुलिस के अधिकारी थे। वहीं घुड़सवारी सीखी। १६ वर्ष के उपरान्त विरक्त हो गये। स्वामी रामतीर्थ के प्रभाव में थे। बम्बई शिव (शीव) के शिवमन्दिर में भूखे पड़े रहते। बहुत बीमार हो गये तब मेरे छोटे जेठ (प्राणभाई) उन्हें ले गये। वैद्य होने से इलाज किया। उसी समय देश में बापू के सत्य अहिंसा स्वदेशी के सिद्धान्त की धूम थी। तेरे भाई जी साबरमती बापू के पास जाकर बोले कि मैं भी आश्रम में रहूँगा। बापू ने अपनी शरण में लिया पर व्यावहारिक जीवन का कठोर अभ्यास कराया। गीता पहले की भाँति नियमित पढ़ते ही रहते। भारत माता के रूप में अपनी शैशव कालीन बिछुड़ी माँ मिल

गई पर बेचैनी शान्त हुई ? आश्रम की दिनचर्या में सोचने का अवसर ही न मिलता। विवाह कैसे कर लिया ? घर में बात पक्की हुई। मैं तेरह वर्ष की थी। मेरे पिता स्व० हरिशंकर भट्ट थे। हमारी रिश्तेदारी त्रिवेदी में ही है। पर पिता के न होने पर चाचा श्री मायाशंकर एवं पुरुषोत्तम मेरे अभिभावक बने। पुरुषोत्तम काका अफ्रीका से कोयले के काम से खर्च की व्यवस्था करते थे। विवाह पन्द्रह वर्ष में हो गया पर तेरे भाई जी इस विवाह के निश्चय से परेशान रहने लगे। बापू ने कारण पूछा सो सब बता दिया। फिर बापू ने ही इस कर्त्तव्य को समझकर स्वीकार करने की आज्ञा दी। स्त्रियों के लिए उनके मन में बड़ी करुणा थी। विवाह करके भी इनका स्वास्थ्य गर्मी में ठीक न रहा। इसी समय स्व० बद्रीदत्त पाण्डे जी ने कुली उतार के बाद बापू को पहाड़ आने का निमन्त्रण दिया। भाईजी वहाँ से' २८ में पहाड़ पहुँचे। सन् २९ में मुझे लाये। बारडोली से नमक लाये थे वही क्रान्ति का सन्देश था। खेल में भी बच्चे कहते गोली कहाँ खाओगे ? छाती में या पीठ में ?—छाती में—किसकी—पुलिस की। तब कोई शैतान कहता 'गौर्दा की' गौर्दा लोक कवि थे और वैद्य थे। विद्यालयों के लड़के रातों रात पैम्प्लेट बाजार की दुकानों में बाँटते। सब्जी सामान के साथ कुछ निश्चित शब्दों के संकेत पर क्रान्ति के कार्यक्रम की रूप रेखा का प्रचार होता था। लाठी चार्ज के दिन मैं तो नारायण तिवारी दीवाल में ही थी। शाम तक इन्तजार में थी। रात को बहुत समझा कर मुझे वह लोग तेरे भाई जी के पास ले गये। अस्पताल में खून बहने से बहुत कमजोर हो गये थे। चोट लगते समय लोग कहते थे बचने की आशा ही न थी। आने जाने की दिक्कत के कारण हीरालाल मोतीलाल एवं गोविन्द प्रसाद जी के परिवार में व्यवस्था की गई थी। बाराडोली का नमक लेकर झण्डा आन्दोलन में तेरे भाईजी के हाथ में झण्डा दे दिया। उनको और मोहन जोशी को चोट लगने पर गंगासिंह जी (भूतपूर्व एम. एल. ए. जो तब किशोर ही थे) ललितमोहन किशोरीरमण नेता बने, पर इन लोगों की चोट के बाद फिर अल्मोड़ा खास में हल्ला मच गया। अस्पताल में जब शाम को मुझे लाया गया तो मैं समझ तो गई थी। मन को मजबूत किया। रात को भी बहुत से लोग आये जो सरकारी कर्मचारी भी थे और सहायता करना चाहते थे। बड़बाज्यू पैताने की ओर हाथ जोड़कर आँसू भरे गले से बोले। सरकारी कर्मचारी होने पर भी मैं बहुत दुःखी हूँ, कुछ सेवा करना चाहता हूँ। मंदी आवाज में तेरे भाईजी बोले— अभी तो कुछ करना नहीं पर इनका प्रसवकाल समीप है। इनको देखभाल की आवश्यकता होगी। डा० खजानचन्द ने प्रभुदास गाँधी, भगवती भाई का इलाज किया था। उनकी पत्नी महिला अस्पताल में इंचार्ज थीं, उन्हीं के संरक्षण में मेरा प्रसव हुआ। अस्पताल में एक ही कमरा था, भाईजी को मुँह फेरने को कहा तो उन्होंने असमर्थता बताई। फिर पर्दा डालकर प्रसव कराया गया। लोग उस लड़की को झंडा देवी कहने लगे। प्रसवोपरान्त यशोदा माँ के सिखाये कपड़ों से काम चला, उन्होंने एक बहन का भी मेरी सहायता के लिए प्रबन्ध किया, पर ढीलढाल होने से अनुकूल न पड़ा तो मदर कुक ने

हमारी देखभाल का जिम्मा लिया, वह पहले रामकृष्ण मिशन में रहती थी फिर पास ही ब्राइटन कार्नर में तारा लौज में रहने लगी। एक विद्यार्थी आश्रम भी खोला था। यह बड़े सुन्दर सच्चरित्र दायित्व सम्पन्न प्रगतिशील नागरिक निकले। अब तक श्री श्रीनिवास जोशी जी से भी सम्पर्क हो चुका था। अत्यन्त शालीन उदारमना साधु शिक्षक (बाद में हेडमास्टर भी) थे। वह लड़की तो बाद में रही भी नहीं।

१९४२ में चनौदा की चीजों को हटाने से पुलिस को मना करने वाला डेढ़ वर्षीय पुत्र भी जून १९४५ में नहीं रहा। १९३० से १९४१ तक हुई आठ सन्तान में यह भीखू ही है। यह भी १ मार्च १९३५ कृष्ण पक्ष शुक्रवार को अपनी ताई (प्राण भाई की पत्नी) के संरक्षण में खटाऊ अस्पताल में हुआ। उनके भाई वहाँ डाक्टर थे। मेरा दूध ठीक न समझा गया। बकरी के दूध से ही इसे उन्होंने अपने प्यार से पाला। इसे ठण्डी जलवायु में हमारे अनिश्चित जीवन में न जाने दिया। इसके बिना रह नहीं सकती थी। अपनी मृत्यु के पूर्व इसके अतिरिक्त और किसी की सेवा भी न लेती थी। उसकी दीर्घायु ही हमें चाहिये, वह कहीं हो, किसी का हो। अपने कर्त्तव्य का पालन कर सके। गम्भीरता और उदारता में वह पिता की तरह है। हमारे लिए संसार में सेवा मिलने की पर्याप्त भूमिका है।

१९३९ में खेला में 'नारायण आश्रम' के नारायण से परिचय हुआ वह प्रेम अन्त तक बढ़ता ही गया। १९४३ की गिरफ्तारी के बाद जेल मुक्त होने पर भी दूसरी बार श्री गोविन्द प्रसाद दुकानदार जी के घर से फिर पकड़े गये। इस बार जब मुकदमा चला तो अंग्रेजों के पिट्ठू कुछ सरकारी अफसर या वकील होने पर भी कुछ सरकारी कर्मचारी भी गुप्त रूप से सहायता करते थे। श्री श्री निवास जोशी, श्री कृष्णानन्द शास्त्री जन एवं धन के लिए जनता के विश्वासपात्र थे। जब भाईजी या सरला बेन जेल के बाहर होते तो क्रान्तिकारियों के घर रात-रात में जाकर सहायता करते। बाद में इनके लिए खतरा होने पर इन्हें काश्मीर भेजा गया। वहाँ सुकन्या बहन और श्री रामसुमेर उपाध्याय जी थे। तब फिर गोलागोकरणनाथ में जेल के साथी भुवन ब्रह्मचारी के साथ बजाज सुगर मिल में कार्य किया। यहाँ सात बकरी और आठ गायों का अट्ठाइस किलो दूध होता था। एक दिन समाचार पत्र से चनौदा गाँधी आश्रम के मुकदमा जीत जाने पर ६० हज़ार रुपया एवं सामान मिलने के समाचार मिलने पर मंगसीर (अगहन) के मोक्षदा एकादशी को यह जानकर २५ दिसम्बर को आश्रम खुलते समय यह भी पहुँचे। भाईजी ने उस इलाके के शहीदों के नाम पर वाचनालय और एक स्मारक बनवाया। उसमें सब शहीदों का नाम लिखकर पत्थर पर नीचे से ॐ शान्ति लिखकर अपने को भी उनमें शामिल कर लिया। मोहन जोशी की स्मृति में बागेश्वर डाक बंगला को सामाजिक क्षेत्र बनाने का प्रयत्न उन्होंने किया। बापू के अनासक्ति योग को लिखते समय की याद को अनासक्ति आश्रम बनाने का श्रेय भी इनको है।

प्रश्न—भाई जी के बारे में जब दुग, चौरा, दानपुर, बागेश्वर बोरारौ क्षेत्र में जाओ तो पता लगता है कि कताई के पारिश्रमिक के अतिरिक्त सहायता अनुदान देते

रहते थे, वह स्वयं कातते हुए सभाओं में बैठते जब बोलते तब तो शान्त स्वर में बातचीत करते देश और क्रान्ति के बारे में वह उन्हें जोर से बोलते बोरारौ वाले तो कहते हैं कि इस घाटी को इन्होंने तार दिया है। देवता की तरह उनका मान करते हैं। भाईजी को राजनैतिक सम्मान भी मिल सकता था ?

उत्तर—हाँ इन्हीं लोगों के स्नेह ने उन्हें इस पर्वतीय इलाके में बाँध दिया। चनौदा स्व० देवीसिंह, किशन, श्री बहादुर सिंह आदि कार्यकर्ताओं ने उनकी बड़ी प्रेम से सेवा की थी। सन् १९३० में खाती डाक बंगले में स्व० मोहन जोशी के मस्तिष्क विकार के उपरान्त मैं इतना डरी थी पर इन लोगों के आश्वासन और श्रद्धा भक्ति को देख आश्वासन पा जाती। खर्च का हिसाब रखते मुझे कमी न होने देते पर छात्रवृत्ति सहायता मद में जो खर्च करते बताने की आवश्यकता न समझते। एम० एल० ए० का टिकट १९५२ में दोनों पार्टी देना चाहती थीं, पर बापू के पदचिन्ह में चलने के अनुसार पार्टी से अ ने को अलग बताकर तटस्थ रहे। व्यावसायिकता उन्हें ठीक न लगती न अधिक पैसा होना। घर में कंजूसी पसन्द नहीं थी। प्रवासी मेहमान भारतीय भोजन का आतिथ्य ग्रहण करते मारवाड़ी खीर अक्सर बनती। अपनी चाची को राजकोट मासिक खर्च एवं भोखू की शिक्षा का खर्च हम अपना समझते उसमें नियमित रहते। गाँव से ले जाकर अल्मोड़ा अस्पताल या डा० बिन्दु या डा० खजानचन्द से इलाज करवाते खुराक की व्यवस्था भी करवाते। दुःखी सताई गई स्त्रियों के प्रति उनके मन में बड़ी करुणा थी। आवश्यकतानुसार प्रारम्भ में सरला बेन के पास एवं बाद में गंगा माँ के आश्रम में पहुँचाते। शहीद विधवाओं की पेंशन के शहर के कार्य में सहायता करते। गाँधी आश्रम को अर्थोपार्जन ही नहीं गाँधी विचार के प्रसार केन्द्र की भाँति मानते थे। इसमें जब उनका मत न मिला तो तत्सम्बन्धी सभी संस्थाओं से मन की महान उलझन, अस्वास्थ्य के बावजूद भी तटस्थ हो गये। जन-भावना उनके लिए ऐसी थी कि आज भी माला के स्व० चन्द्रवल्लभ जी बुद्धि वल्लभ जी का परिवार हमारा अपना है। माला भवन में सन् ५५ में आने के बाद से यहीं हैं, यही हमारा सर्वोदय कुटीर है। गुजराती बोलने वाला जयन्ती बहन का परिवार, सास सदृश उनकी बा यहीं मिलीं। गंगा बहन की छाया हमें मेरा मायका जैसी लगती रही। तेरे कारण हममें कितना झगड़ा होता था, वह तुझे बिगाड़ दे रहे थे। लड़की को जो आना चाहिए वह न जानने से बम्बई में तुम्हें भूत कहते। पर तेरे भाई जी तुम्हारे गुण ढूँढ़ लेते। मैं मानती हूँ कि पिण्डारी ग्लेशियर तुम्हें ले जाकर तुझे ऐसा शौक हमने लगा दिया कि समय-समय पर सब चिन्ता करते हैं। हरिद्वार में दीवाली के दिन गंगा स्नान हमने तुम्हारे साथ किया था, उसे एक साल बाद तक भी याद करते थे। मदालसा बहन ने आँख के आपरेशन के समय बड़ी सहायता की थी। देवकीनन्दन वैष्णवजी की मैत्री भी उन्हें आश्वस्त रखती थी। हरिद्वार न जाकर कुछ ऐसा हुआ कि साबरमती बंकिम के पास जाने को गये। साबरमती का दर्शन किया, स्वस्थ ही लगते थे। दिन के भोजन में अपनी प्रिय खीर भी ली। आराम करने

को लेटे फिर उठे पानी माँगा पर पानी का घूंट ले नहीं पाये। चले गये। यह विश्वास ही न हुआ। जहाँ जीवन का व्रत लिया था वहीं देह विसर्जन कर दिया।

— भाई जी नहीं हैं–जनता की निःस्वार्थ सेवा का एक स्रोत नहीं रहा। इतना कठोर व्रत पालन करते हुए कोमल मनवाले सबके भाईजी नहीं हैं—ऐसा समाचार मिला पर विद्यालयों में उनकी आवाज का स्वर अब भी प्रतिध्वनित होना लगता है। उनकी क्रान्ति संघर्ष समाप्त नहीं हुआ था। शहर से लेकर देहात के एक-एक विद्यालय में आजादी की लड़ाई के बारे में बोलना उनका प्रिय विषय था। हम कहते—आपको गुस्सा जैसे आया हुआ लगता हैं पर वह सफाई देते यह 'जुस्सा' है। अपनी पीढ़ी की निराशा से भावी पीढ़ी तक सन्देश सुनाकर असली आजादी की ओर प्रेरित करना चाहता हूँ। जब तक मातृभूमि स्वार्थ से ऊपर न उठ जाय तब तक मेरा वही विषय है। आजादी की मीनार के गारे को लोग न पहचानें, सच्ची आजादी में जीने की इच्छा तो हो। भाईजी की डायरी उनके इस सन्देश को पहुँचाती रहे उनके जीवन का लक्ष्य सिद्ध होता रहे। आजादी की मीनार के गारे को लोग न पहचानें उसकी मजबूती तो काल के क्रम में अक्षय रहे। भाईजी का उद्बोधन उनका स्वर नई पीढ़ी के चरित्र निर्माण के रूप में सफल हो।

भाई शांतिलाल जी

भाई शांतिलाल जी हम सबके अपने थे। यही हमारा सौभाग्य था कि श्री जमना लाल बजाज उनकी प्रेरणा से सन् १९४१ में आनन्द-निवास में लक्ष्मी आश्रम कौसानी को सरला बेन के कार्य के लिए सामाजिक क्षेत्र बनाने की अनुमति के लिए मेरे पिता स्व० पूर्णानन्द जी के पास आये। मेरे सामने उस समय का दृश्य आ गया जब शान्तिलाल जी एवं मोहन जोशी लाठी चार्ज से चोट खाकर अस्पताल में थे। श्री हरगोविन्द पन्त श्री बद्रीदत्त पाण्डे के आह्वान पर अपने बच्चे गृहस्थी सब छोड़ हम स्वतन्त्रता के लिए पागल हो गये थे। सरकारी पदस्थ डाक्टर पति की मर्यादा भी मायके में याद न आई। सरकारी कर्म-चारी होने पर भी सद्यः विधुर मेरे सरल पिता रात में व्यथित होकर बेचैन होकर कहां से आये यह मेरे लिए स्पष्ट था। बाद में कुछ कर सकने को व्यग्र मेरे मन को राहत देने को एक दिन जब उन्होंने मुझसे कहा—शांतिलाल जी की पत्नी कम उम्र की है। कुछ पंजीरी बनाकर अस्पताल जाओगी? मैं वहाँ गई। भक्ति बहुत ही छोटी लगी। लड़की हुई थी। पति-पत्नी एक ही कमरे में अलग-अलग पलंग पर थे। उन्होंने धीरे से कहा—यहाँ बाजार से भी बहुत सामान आया है। अतः अधिक कष्ट न उठाएँ।—तब से भाई जी पहाड़ की प्रथम उद्योग संस्था की स्थापना चनौदा में कर चुके थे। उसके समीप पिता जी ने माँ की स्मृति में एक आश्रम बना लिया था। दार्शनिक, आध्यात्मिक, एकान्तवासियों को स्थान देने के सौभाग्य से आनन्द उठाने को मेरे विधुर पिता वहाँ जाने का आग्रह करते। तब तक मीरा बहन बापू की निकटता के कारण हम सबके आदर की पात्र थीं। अब अपनी उम्र जैसी एक ठोस बहन के वहाँ होने से हमारा परि-वार मातृभूमि के कार्य के लिए सहयोग कर सकने को निर्विरोध तैयार था। अस्थायी

रूप से दिये जाने की उस समय की बात से मन में सदा के लिए ही अब यह तो हो ही गया – हमें ज्ञात था। शांति भाई की कुशल निगरानी में देश के कार्य में सब ठीक होगा ऐसा हमारा ही नहीं सभी का विश्वास था। शान्ति भाई और सरला बेन के जरिये गाँधी आश्रम भी अपनी संस्था हो गई थी – सरला बेन का आश्रम बनाने में मुख्य सहायता शान्तिलाल जी की थी। जनता से सीधे की भाँति वसूली का विचार देकर जनता की शक्ति पर हमारा विश्वास जगाया। वह स्वयं स्व० मोहनलाल जी व सरला बेन के साथ चन्दा करते थे इ। लिए नीचे मैदान भी गये। १९४२ के आन्दोलन एवं उसके बाद भी सरला बेन के साथ जेल में गये वीरों के परिवार की सहायता को रात-रात घूमते थे। जेल तो गये ही। उन्हीं के सहयोग से नारायण आश्रम पिथौरागढ़ में बना अस्कोट में आज नारायण नगर में डिग्री कालेज है। लक्ष्मी आश्रम बहनों की सेवा शिक्षा का केन्द्र बना वहाँ सेव का बाग और उद्योग-शिक्षा केन्द्र है। नैनीताल में ताकुला महिला गृह-उद्योग सदन को स्थापित कराने वाले भाई जी ही थे। पूज्य गाँधी जी के निवास की महिमा जानने वाले हमारे भाई जी ने गंगा बहन की शक्ति काम में लगाने की सहायता के लिए सारे कागज-पत्र तैयार किये। आँधी तूफान से वह स्थान वीरान पड़ा था, कोई वहाँ स्थायी न रह पाता था। हमें उत्साह दिया। आश्रम बना और सैकड़ों अनपढ़ विधवाओं ने वहाँ शरणार्थ शरण, निवास एवं भोजन—शिक्षा की व्यवस्था पाकर आत्मनिर्भर बनने का अवसर पाया। आँधी तूफान में भी निष्ठापूर्वक तपस्या कर जीवन को सँवारा। वहाँ पर अनाथ बालकों को भी भाईजी ने प्रवेश दिलाकर तीन वर्ष से बारह वर्ष तक के बालकों की सेवा की व्यवस्था को भी उत्साहित किया। आज वह बाहर जाकर अपने कार्य में लगे हैं। यह सब भाई जी की शुभ कामना उत्साह व सहायता का फल है। कौसानी अनासक्ति आश्रम के निर्माण में भी उनकी सक्रिय सहायता रही वह पर्वतीय इलाके के हर पक्ष को जानते थे। जन-जन में समाये थे।

हमारे घर एवं आश्रम में प्रारम्भ में महेश की इजा, फिर भगवती दीदी, मुन्नी बहन, शान्ती, विद्या दीदी सभी उनको अपना समझती थी। उनकी सेवा में सौभाग्य मानती थी कतुवा कातते पिता–तुल्य संत जैसे भाई जी के वे क्षण हमारे लिय अमिट हैं जब वे हमें असली वैष्णव लगते थे। विदा लेते भाई जी घर के द्वार पर खड़े नहीं भुलाये जा सके हैं। उन्होंने अपने हाथ से लिखकर १४ मई १९८१ को अवधूत गीता की यह पंक्तियाँ दी थीं, अपनी मधुर गम्भीर वाणी में इन्हें गाकर सुनाते थे कभी गाते-गाते आत्म-विस्मृत हो जाते थे ये हमारी अमूल्य निधि हैं जो उनकी स्मृति मन में सदा रखेंगे–

नहिं मोक्षपदम्, नहि बन्धपदम्, नहि पुण्यपदम्, नहि पापपदम्।
नहि पूर्णपदम्, नहि रिक्तपदम्, किं रोदिषि मानसि सर्वसमम्॥

पं० गंगा देवी जोशी
आनन्द निवास, नैनीताल

शान्ति भाई मानसरोवर में

यात्रिक शान्ति भाई
पर्वत मार्ग में एक
पर्वतीय झोपड़ी
के आगे
१९३१

श्री कैलास अथवा मेरु पर्वत

शान्ति भाई और भक्ति बहिन १९८४

कैलास

साधु आन सिंह कैलास में।
१९२१

नारायण स्वामी
सोसा आश्रम, पिथौरागढ़

कैलास मानसरोवर यात्रा १९३१
सीमान्त, ग्राम–गर्ब्यांग, भोटिया महिला

पवित्रसंकल्प

मूकं करोति वाचालम् पंगुम् लंधयते गिरिम् ।

यद् कृपा तमहम् वन्दे परमानन्द माधवम् ।।

जिसकी कृपा से मूक वाचाल बनता हैं। पंगु पर्वत पार करता है ऐसे परमानन्द माधव की वन्दना करता हूँ।

यस्य में हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्रं रस्या सहाहु ।।

"हिम आच्छादित पर्वत जिनकी महत्ता पुकारते हैं, और जिसकी महिमा समुद्र प्रकट कर रहा है, वह महान वस्तु तू है।"

"अय् हिमालय ! क्या यह तेरी ही गोद है, जहाँ ब्रह्म विद्या रमण करती है।"

"अय् गंगा ! वह पर्वत तेरे ही स्तन हैं कि जिनके पयपान द्वारा ब्रह्म-विद्या का पोषण होता है!"

स्वामी राम तीर्थ के प्रेरणात्मक और ज्वलंत हृदय-स्पर्शी उपदेश पढ़कर पवित्र आदर्श और दिव्य-ज्योति अर्थे जीवन क्रान्ति हुई। सन् १९१९-२० के समय में अद्‌भुत आत्म मंथन हुआ। "ईश्वर क्या ? सृष्टि क्या ? मनुष्य जीवन क्या ?" इन गहरे तत्त्व-ज्ञान के प्रश्नों से हृदय सागर में विचारों की लहरें लहराने लगी। इसी समय हिमालय यात्रा "कैलाश मानसरोवर—दर्शन करने का" पवित्र संकल्प हृदय में स्थापित हुआ।

हृदय की उस पवित्र स्थिति में उत्पन्न हुए विचार का फल आज सादृश हुआ। जीवन में सर्वप्रथम स्वामी "हंसरचित" कैलाश मानसरोवर यात्रा नामक पुस्तक पढ़ने में आई, तभी से उस अद्‌भुत दृश्य के दर्शन करने की उत्कट अभिलाषा, उत्पन्न हो गयी थी। उसी समय बीज बोया गया। परन्तु आम बोते ही तुरन्त आम खाने की इच्छा रखना आकाश-कुसुम वत् हैं। इसके लिए अनेक विध कठिन तपस्या तथा कष्ट सहन करने पड़ते हैं धीरज धारण करना पड़ता है। इसके अनुसार ग्यारह वर्ष तक राह देखनी पड़ी। "राह देखाता हैं, उसे राहत मिलती है", "संयम से पवित्र संकल्प सिद्ध होता है।"

जीवन में इसी बीच अनेक विध आध्यात्मिक अभ्यास और साधना होती रही। इसका सविस्तार वर्णन हर वर्ष की डायरी से मिल सकता है। सन् २१ से पहले से ही डायरी लिखने का अभ्यास रहा। अब सब डायरी उपलब्ध होना कठिन है।

सत्याग्रहाश्रम साबरमत्ती में महात्मागांधी के साथ तीन वर्ष रहे। बापू के आदेश से बारडोली स्वराज्य आश्रम में एक वर्ष नया सौराष्ट्र भाव नगर-मढ़डा उद्योग आश्रम में तीन वर्ष व्यतीत करने के बाद पूज्य बापू जी की प्रेरणा से उनके आशीर्वाद लेकर सन् १९२८ अगस्त माह में हिमालय अल्मोड़ा आया।

कैलाश यात्रा के लिए सीमान्त के भोटिया व्यापारियोंके साथ जाना होता है। वे जून माहमें तिब्बत चले गये थे। अतः अवसर नहीं मिला। सन् २९ के जून दिनांक १८ को महात्मागांधीजी अल्मोडा आये उनके साथ पर्वतीय प्रदेश की यात्रामें साथ रहने से कैलाश यात्रा स्थगित करनी पड़ी।

"मानव जाने मैं करूं, करतल वाले कोय।,,
"आदर्श अधूरा रहे ने हरि करे तो होय॥,,

भारतीय जनता ने बापू की प्रेरणासे सन् ३० में स्वतन्त्रता के लिए जंग छेड़ दिया दिया था। नमक कानून भंग के लिए बापू ने डांडी यात्रा की। ब्रिटिश सरकार ने अपना दमन चक्र जोरोंसे चलाया। बापू को पत्र लिखा कि डांडी यात्रा में मुझे नहीं बुलाया। गिरफ्तारी के पहले बापू ने कराड़ी ग्राम से लिखा—"वहां भी स्वराज्य का काम होना है।" अपने कर्तव्य का पालन करते रहो। बापू का आर्शीवाद प्राप्त हो गया। ईश्वरीय संयोग भी मिल गया।

अल्मोड़ा में दिनांक २७ मई १९३० का दिन राष्ट्रध्वजसत्याग्रह शुरू करना पड़ा। सेनापति बननेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। झण्डे की रक्षा करते हुए गुरखा मिलिटरी सिपाहियों के डंडे पड़े। छाती की पसली तथा पैर की हड्डी टूटी सर फूटा। इस तरह मृत्यु यानी कैलाशवास तो नहीं हुआ पर कैलाश यात्रा स्थगित करनी पड़ी। परन्तु राष्ट्रध्वज सत्याग्रह सफल हुआ।

"स्वतन्त्र भारत की जय"

राष्ट्रपिता बापू सन् ३१ में मई दिनांक २५ को दुबारा नैनीताल आये। उत्तर प्रदेश किसानों के कष्ट के विषय में वायसराय की सूचना अनुसार उ० प्र० के गवर्नर श्री मालकम महोदय से विचार विमर्श करने के लिए नैनीताल पहुँचे। गांधीजी और गवर्नमेन्ट के बीच सन् ३० के सत्याग्रह के बाद गांधी इर्बिन पैक्ट यानी शांति समाधान था। राजनैतिक वातावरण शांत था। इसलिए अब बापू से कैलाश यात्रा के लिए आशीर्वाद मांगा, और मिल गया। बापू ने कहा—कैलाश यात्रा कठिन है। समय भी काफी लगेगा। अतः भक्ति (पत्नी) को हमारे साथ गुजरात भेज दो। उनके आदेश अनुसार भक्ति ने बापू के साथ गुजरात को प्रस्थान किया। इस वर्ष तो कैलाश

मानसरोवर यात्रा करनेका निश्चय किया । "मरजी वहां मार्ग । यादृशी भावना तादृशी सिद्धिर्भवति ।"

अल्मोड़ा जिले में आये तीन वर्ष हुए । इस बीच हिमालय पहाड़ों की गोद में तीन हजार मील लगभग पैदल पर्यटन करने का सौभाग्य मिला । (अब तो लगभग पन्द्रह हजार मील से अधिक हो गया है ।) क्योंकि डिस्ट्रिक बोर्ड की चार सौ पाठशालाओं में ऊन कताई—बिनाई कार्य के निरीक्षण की जिम्मेदारी खादी विभाग के संचालक होनेके नाते थी । लगभग पांच हजार विद्यार्थी कताई—यज्ञ करते थे । विद्यार्थियों के कते हुए ऊन से चादर पट्टी, कम्बल, आसन और गलीचा आदि बनाये जाते थे । बापू सन् २९ में अल्मोड़ा आये तब विद्यार्थियों से बुनी हुई ऊनी चादर तथा चरखा वाले डिजाइन का आसन बापू को अर्पित किया गया था । बापू बहुत प्रसन्न हुए और कहाकि भारत वर्ष में इस तरह का यह प्रयोग अद्भुत है । और सभी विद्यालयों में इसका अनुकरण हो ।

खादी विभाग के संचालक की हैसियत से सारे जिले में—नेपाल तिब्बत गढ़वाल की सीमा तक पर्यटक करना पड़ता था । "एक पंथ दो काज" (Duty with beauty.)

महाराज मैसूर तथा रानी शिंधाई भी इसी वर्ष कैलाश यात्रा को जाने वाले थे । उनके साथ स्वामी शिवानन्द "श्री दिव्य जीवन सोसाइटी" ऋषिकेश के संस्थापक तथा स्वामी रामतीर्थ के गुजराती शिष्य स्वामी स्वयं ज्योति और सुशील महाराज (उत्तर वृन्दावन) जाने वाले थे । वे हमारे शांति कुटीर शैल में भिक्षा लेने आये थे । उन्होंने बड़े प्रेम और आग्रह के साथ अपने साथ कैलाश यात्रा करने का निमंत्रण दिया । परन्तु वे गर्ब्यांग के रास्ते लीपूलेक घाटी से जाने वाले थे और उसी रास्ते से वापस आने वाले थे । मन में यह विचार भी कि राजा व रानी के साथ यात्रा में शायद आनन्द न आवे और मुख्य बात तो यह कि अकेले ही मुस्यारी-मिलम ऊँटाधूरा के तीन हिमालय पार करके तीर्थापुरी होकर कैलाश मानसरोवर की यात्रा करके लौटती बार लीपूलेक धूरा पार करके गर्ब्यांग के रास्ते भारत में प्रवेश करना ताकि परिक्रमा सुलटी हो और दोनों तरफ के दृश्यों का आनन्द लिया जा सके, का विचार इस निमन्त्रण को स्वीकार न कर पाया ।

अल्मोड़ा नगर से उत्तर की तरफ दो मील दूर नारायण तिवारी देवालय के पास शैलग्राम में, "शान्ति कुटीर" में निवास था । बम्बई के एक भाटिया सेठ श्री बल्लभदास, तुलसीदास नैपाल पशुपतिनाथ तथा वद्रीनारायण की यात्रा करके शान्ति कुटीर में ही रहने लगे थे । हमारी कैलाश यात्रा की तैयारी देखकर उन्हें भीअशान्ति हुई और कैलाश यात्रा करने का निश्चय कर लिया । सेठ जी को कैलाश यात्रा जाने से रोकने के लिए उनकी पत्नी तथा पुत्री नौकर के साथ अल्मोड़ा पहुँची । परन्तु सेठ जी

का दृढ़ निश्चय देखकर और उनके यात्रा करके लौटने तक शान्ति कुटीर में रहने का निश्चय किया । भारतीय नारी ने उर्मिला की तरह तपस्या शुरू की ।

"कैलाश कैलाशपति शिवशंकर महादेव" का नाम लेकर सम्बत् १९८७ अधिक आषाढ़ सुदी एकादशी पुरुषोत्तम माह तदनुसार दिनांक २६ जून शुक्रवार १९३१ को कैलाश मानसरोवर यात्रा के लिए प्रस्थान किया । यात्री हम दो थे पर साथ में चार कुली (मजदूर) बोझ के लिए दो नौकर सेठ जी तथा उनकी सवारी के लिए एक घोड़ा इनके संघ में यात्रा के लिए प्रयाण किया ।

"खुश रहो एहले वतन, अब तो सफर करते हैं हम"

"उतिष्ठत । जाग्रत ।। प्राप्य वरान्निबोधत बोधत ।।।"

ॐ शान्ति : (३१ अगस्त १९८३) जन्माष्ठमी

ॐ शान्तिः (११-१-८४)

यात्रा प्रयाण शुक्रवार जून दिनांक २६ जून १९३१

"कैलाशपति शंकर महादेव" का स्मरण करके दिनांक २६ जून शुक्रवार ३१ दोपहर बारह बजे अल्मोड़ा-शान्ति कुटीर से प्रस्थान किया । यह यात्रा, ट्रेन, मोटर, घोड़ा गाड़ी या बैलगाड़ी से नहीं परन्तु बिकट और दुर्गम पहाड़ों में पैदल चलकर करने की थी । इसमें साहस और उससे उत्पन्न होने वाले वीरोचित आनन्द का अनुभव होता है । साथ-साथ कष्ट सहिष्णुता की शक्ति का भी संचय होता है । इस यात्रा में बम्बई कलकत्ता वगैरह नगरों की या सावारण शहरों की बाजार नहीं आने से सारी आवश्यक चीजें साथ रखनी पड़ती हैं । वैसे तो संसार की सारी चीजों का संग्रह हो तब भी सन्तोप न हो । पर इस यात्रा में तो जिन्दे मनुष्य की पीठ पर जड़ और निर्जीव चीजों को ले जाना पड़ता है । अतः सोच विचार करके अपरिग्रह ब्रत का पालन करना यात्री का परम आवश्यक कर्तव्य है ।

यात्रा में निम्न प्रकार का सामान था । गीता, भाजनावली, स्वामी राम तीर्थ (गुजराती) डायरी, नोटबुक, कागज पेन्सिल, बैटरी, गौगल्स, सुइ-तागा, दूध के डिब्बे, गरम मसाला, खटाई चटनी, सूखी सब्जी वगैरह । दवाई में अमृतांजल, टिंचर, क्वीनाइन, युल्कीप्टस स्मेलींग साल्ट सुधासिंधु, तथा कुछ होमियोपेथिक दवाइयाँ भी साथ रखी थी ।

नं० २—कपड़ों में गरम पोशाक—कोट स्वेटर मफलर परन्तु आश्चर्य की बात भी उनी पैन्ट या पायजामा नहीं रखा था—खादी के रंगीन तथा सफेद कुर्ते पायजामे दो धोती, दुशाला तथा ऊनी सूती मोजे, हाथ के गरम दस्ताने, गरम टोपी, रेनकोट।

नं० ३—बिस्तर—१ थुल्मा ३ कम्बल। १ ऊनी चादर। १ गरम शाल शतरंजी—मोमजामा सूर्ता चादर आदि।

अन्य खास चीजों में—लैन्टर्न मोमबत्ती—हल्के बर्तन स्टोव छोटा सा बाक्स कैमरा, दूर्वीन—पेडोमीटर मील नापने का यंत्र—थर्मस, हॉटवाटर वैग, सूखे मेवे आदि आवश्यक चीजें रखी थी। जो अनिवार्य समझी गयी वैसे तो तपस्वी साधु तो इतनी चीजें भी नहीं रखते हैं।

कैलाश यात्रा के भारत के भिन्न-भिन्न प्रदेशों से अनेक रास्ते हैं—मुख्य इस प्रकार है।

१—अल्मोड़ा से मुन्श्यारी–मिलम जौहार के रास्ते से हिमालय पर्वत के निकट कठिन और तीन वर्फानी पहाड़ों को एक के बाद एक ऊँटा धूरा–जयन्ती–और अन्त में कुंगरी वींगरी घाटी १८,३००० फीट की ऊँचाई पर चढ़कर तिब्बत भूमि में प्रवेश करके "कैलाश मान सरोवर" का दर्शन होता है।

२—अल्मोड़ा चौदांस व्यांस—गर्व्यांग रास्ते से सत्रह हजार फीट का लीपूलेख घाटी पार करके तिब्बत भूमि में पहुँचा जाता है। एक ही हिमालय पार करना पड़ता है। अतः यह सुगम रास्ता है। अधिक्तर यात्री इसी रास्ते से ही जाते हैं और लौटते हैं। अब तो चीन ने एक मात्र यही रास्ता यात्रियों के लिए खुला रखा है।

३—गढ़वाल बद्रीनाथ नीति—१६६२८ की तथा माना धुरा १७८९० फीट पार करके तिब्बत थोलींग मठ जाता हैं। इस रास्ते में कामेट नाम का हिमगिरी शृंग २५४४३ की ऊँचा आकाश को स्पर्श करता हुआ भव्य दर्शन देता है।

४—काश्मीर–श्रीनगर से सिंधु नदी के किनारे होकर तिब्बत की गरतोक मंडी पहुँच जाता है। श्रीनगर तथा लद्दाख लेह के व्यापारी इसी रास्ते से तिब्बत की मण्डियों में जाते हैं।

५—नैपाल–पशुपति नाथ–मुक्तिनाथ होते हुए तिब्बत में कैलाश मानसरोवर पहुँचा जाता है।

६—मंसूरी–देहरादून से एक रास्ता टेहरी से होकर गंगोत्री का दिव्य दर्शन करता हुआ नीलांगधुरा घाटी पार करके तिब्बत जाता है। गंगा जी के अद्भुत दर्शन होते हैं।

७—अल्मोड़ा से दारमा घाटी के रास्ते लिम्यांग घाटी को पार करके ज्ञानोमा मण्डी तिब्बत पहुँचता हैं।

इसके अलावा और भी तीन-चार रास्ते हैं। हर एक रास्ते से हिमगिरी के उतुंग धवल गिरी नगाधिराज शृंग आकाश से बातें करते खड़े हैं। इन्हें पार कर तिब्बत पहुँच कर मानसरोवर के दर्शन होते हैं।

कैलाश-दर्शन के लिए हमने तो जोहार-मिलम के रास्ते से जाने को पसंद किया और लीपूलेख गव्यांग के रास्ते भारत में वापस आने का कार्यक्रम बनाया ताकि दोनों तरफ के सौन्दर्य का दर्शन हो। कैलाश की परिक्रमा सुलटी भी मानी जाती है। ताकि यात्रा में कष्ट के साथ आनन्द का अनुभव हो।

स्वामी सत्यदेव तथा श्री नारायण जी पुरुषोत्तम सांगाणी इसी रास्ते से गये थे। मुझे तो अल्मोड़ा जिले की पाठशालाओं में खादी का निरीक्षण करना था। तथा राष्ट्रीय प्रचार का भी नैतिक कर्तव्य था। सबसे उत्तम बात तो यह कि सधी परिक्रमा भी इस तरह होती है। ऐसी सर्वसाधारण की मान्यता है।

महाराजा मैसूर गव्यांग के रास्ते जाकर उसी रास्ते से वापस आये थे। साधारणतः अधिक कष्ट से बचा जा सकता है। क्योंकि एक ही हिमालय "लीपूलेख" धूरा पार करना पड़ता है।

अल्मोड़ा से बागेश्वर के रास्ते से हमें जाना चाहिए था। पर एक मित्र बेरीनाग झलतोला से यात्रा में आने वाले होने से, बीच के रास्ते से प्रयाण किया। अल्मोड़ा से बलडोटी के जंगल से आगे बढ़े। इस रास्ते से बहुत बार गुजरे थे। परन्तु आज तो एक पवित्र–आदर्श, ध्येय सामने रखकर एक-एक कदम आगे बढ़ने में अपूर्व आनन्द आता था। चीड़ के वृक्षों में से सूर्य के किरणें चमकती थी। क्षय के जन्तुओं का क्षय करके तन्दुरुस्ती सुधार कर चेतना लाने की शक्ति चीड़ के वृक्षों में है। अल्मोड़ा से तीन मील चितई जहां गोला देवता का मन्दिर है। वहाँ से पाँच मील चलकर बाड़ेछीना आये। यहाँ से दो रास्ते हैं। एक तो पिथोरागढ़-दूसरा बेरीनाग। हम लोगों ने बेरीनाग के पथ पर प्रयाण किया।

चीड़ के हरे भरे जंगल सीढ़ीनुमा खेत, यहां वहां इधर-उधर बहते झरने उपर नीचे। १०–२० मकान वाले ग्राम देखते हुए अल्मोड़ा से तेरह मील दूर छः हजार फीट समुद्री सतह से ऊँचे "धौलछीना" डाक बंगले यात्रा के प्रथम पड़ाव पर पहुँचे। मजदूर अभी पहुँचे नहीं थें। ठंडे की चमक बढ़ने लगी। डाक बंगले के खिड़की और दरवाजे

के पर्दें निकाल कर ओढ़ने का प्रयत्न किया। पर इससे क्या होता है। अन्त में मजदूर पहुँचे। तब पेट पूजन करके रात ग्यारह बजे निन्द्रा देवी के शरण में आये।

पर्वतीय प्रदेश में पैर की रक्षा करना आवश्यक है। क्योंकि पैदल चलना है तो वही साधन या वाहन है। अगर जरा सा नुक्स आ गया तो विशेष कठिनाई होती है। सावर के सुन्दर चाम से तैयार कराये हुए सुन्दर हीलबूट पहने थे पर श्रीगणेश ही गलत हुआ। यानी पैर में फफोले पड़ने से तथा लाठी चार्ज से टूटे पैर को भारी बूट उठाने में परेशानी पड़ने से पनोती उतारी यानी क्रेपसोल के हलके जूते पहिने।

"परमानंद माधव की कृपा बहीनं।
पंगुम् लङःघयते गिरिम्॥"

ॐ शान्ति ३-९-८३

सरयू गंगा के शरण में दिनांक २७ जून शनिवार ३१

प्रार्थना पूजन के बाद प्रातः छः बजे शंकर स्मरण करके प्रस्थान किया। छोटी सी पहाड़ी की चोटी चढ़कर नीचे उतरे तो सामने ही हिमालय की हार माला की झाँकी हुई। झाँकी इसलिए कि बादलों के आचरण रूपी किले में श्वेत हिमगिरी श्रंग चमकते थे। माता सरयू की शरण में जाने को उतार उतरना पड़ता है। पहाड़ों में जब भी सीधा उतार लाठी की तरह पाताल में पहुँचता हो, तब समझना कि किसी गंगा माता सरिता की शरण में जा रहे हैं।

सेराघाट सरयू गंगा तीन मील रही तब आराम करने बैठे। सामने पहाड़ी की ढाल पर सीढ़ीनुमा खेतों में पहाड़ी किसान हल चला रहे थे। और महिलायें टोकरे भरकर खाद डालती थी। पास में छोटी सी गंगा गान कर रही थी। सामने बादल से बातें करता हुआ "बृद्ध जागेश्वर" का हरा भरा बिहड़ जंगल से छाया हुआ पहाड़ खड़ा था।

पर्वतीय प्रदेश में आम तौर से खेती का तीन चौथाई काम महिलायें करती हैं। कहीं-कहीं तो चार पांच मील दूर से घास और लकड़ी का मनभर बोझ सिर पर लाना नित्य का क्रम है। रसोई धान-कुटाई आदि घर गृहस्थी का कार्य तो संघर्ष ही है। पर्वतीय महिलाओं की इस कष्ट साध्य साधना तथा साहसिकता के लिए धन्यवाद है।

कर्म की सतत साधना होने पर भी कर्मयोग ज्ञानपूर्वक नहीं है। पुरुष वर्ग सिर्फ एक बार दाल चावल बना देना तथा तम्बाकू वाला हुक्का पीते रहना कर्तव्य समझते हैं।

सरयू गंगा माता ने आज भगवी (गेरुवारंग) साड़ी पहन कर पहाड़ी के बीच मदमस्त बहती हुई दर्शन दिये। ऊपर वर्षा होने के कारण लाल मिट्टी के कारण नदी का पानी लाल रंग का बन गया था। यही भगवी साड़ी है।

सरयू गंगा पिण्डरी ग्लेशियर की तरफ से सहस्त्र धारा सरयू के उद्गम स्थलसे निकल कर पहाड़ों को तोड़ती फोड़ती रास्ता बनाती बागेश्वर तीर्थ स्थान की महत्ता बढ़ाती हुई आगे काली शारदा वगैरह नाम धारण करती हुई अयोध्या में पहुँच कर सुरसरि पवित्र सरयू गंगा (पूर्ण गंगा) है।

समुद्री सतह से छः हजार फीट से उतर कर लगभग ढाई हजार फीट सेराघाट पहुँचते ही सूर्य की गरमी लगी। इसलिए सरयू तट पर स्नान करने के लिए गया। सरिता के बीच पुराना प्रेमी पत्थर पर प्रार्थना पूजन किया। पुराना प्रेमी इसलिए कि पहले भी यहां पूजन किया था। आत्म पूजन हो जाने पर भी पेट पूजन करना अति आवश्यक है "भूखो भजन न होई गोपाला"।

भजन के बाद साढ़े चार (४½) बजे सूर्य तट से प्रस्थान किया। अनुभव सिद्ध है कि पहाड़ों में पेट भरने के बाद चलने की मुश्किल पड़ती है। वैसे ही भूखे पेट भी चलने में अशान्ति का अनुभव होता है। तब गीता का मध्य मार्ग ही उत्तम है।

युक्तहार-विहार

शाम का शीतल समय होने से चलने में अब आनन्द आया। संध्या समय की काली छाया के श्यामवर्ण के साथ अषाढ़ी द्वादशी का चन्द्रमा ऊपर चढ़ा था। इन दो विरोधी दृश्य देखते हुए चढ़ाई समाप्त हुई। चांदनी के चांदी जैसे प्रकाश में नीचे उतर कर रतमटिया ग्राम में आये पर वहां रात गुजारने लायक स्थान न मिलने के कारण मील पर मील गिनते-गिनते गणाई गांव में रात को साढ़े दस बजे सत्रह मील की मंजिल तय करके आराम किया। राष्ट्रध्वज सन् ३० में ब्रिटिश सरकार के डंडे शाही से अपूर्व इतिहास बन चुका था। स्वतन्त्रता संग्राम के आन्दोलन ने जनता के दिल में स्थान कर लिया था। राष्ट्र पिता बापू के प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो गयी थी। इस कारण सारे

अल्मोड़ा जिले के, नेपाल व तिब्बत सीमा तक के गांव-गांव में "नम्रसेवक" लेखक का नाम मशहूर हो गया था। अतः जनता श्रद्धा तथा पवित्र प्रेम की वर्षा करती रहती है।

हिमालय के पहाड़ों में पैदल पर्यटन करते हुए परमात्मा की झाँकी होती है। "यज्ञानां जप यज्ञोऽस्मि" 'स्थावराणाम् हिमालयः' जप यज्ञ के साथ-साथ आत्म चिंतन सतत् रहता है। यह परमात्मा की कृपा। समर्थ रामदास स्वामी शिवाजी के गुरु ने यात्रा करके अद्भुत आत्मबल प्राप्त किया। गुरु मत्सेन्द्रनाथ ने गोरखनाथ को तीन कठिन व्रत की साधना के साथ पैदल पर्यटन बारह वर्ष तक करने की आज्ञा देकर 'मस्त योगी बना' दिया। पैदल यात्रा में जो कष्ट सहन करना पड़ता है। तथा मनो मंथन होता है। अभ्यास होता है और कदम-कदम पर पवित्र ध्येय का ध्यान रहने से आत्मबल बढ़ता है। पहाड़ों में चलते स्वयं सहज समाधि भाव और धार्मिक वृति का पोषण होता है। चित्रकाया के अभ्यासी को सुन्दर सामग्री मिलती है। सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक स्थिति का निरीक्षण करते हुए ज्ञान की बृद्धि होती है। समुद्र के (तरंगों) लहरों की तरह पर्वतों की अनन्त हारमाला तथा नगाधिराज हिमालय के धवलगिरि शृगों के दृश्य देखते हुए आतमा आनन्द से नाच उठती है। सन्त तुकाराम ने यात्रा के महात्म्य को उमंग में अमर कर दिया है।

४—झलतोला दिनांक २८ जून रविवार ३१

प्रातः काल प्रार्थना आदि के वाद प्रस्थान किया। इस जिले में वर्तमान समय में लगभग एक हजार मील सड़क की व्यवस्था डिस्ट्रिक बोर्ड के हाथ में है। एक जमादार तथा छः या आठ मजदूर की टोली को ७५—१०० मील लगभग की सड़क सुपुर्द है। इसलिए यात्रियों को चलने के लिए अच्छा रास्ता मिलता है। एक जमादार राष्ट्रीय विचार का तथा स्वदेशी का सच्चा महत्व समझता है। और परिवार वाले ऊन कताई तथा बिनाई करते हैं। घर में चर्खा करघा रखा है। इस तरह बिना प्रसिद्धि के मौन रहकर भारत माता की पूजा करते हैं। इस तरह के राष्ट्र सेवक शिलान्यास के पत्थर की तरह है।

आज का दृश्य मनोहर था। पांच मील चलकर लोखंड के पुल के पास पहुँचे सामने संकरी पगडंडी पर स्वर्ग की सीढ़ी की तरह चढ़ने लगे। एक "इगलुवसधाय" "One step enough for me" एक सौ पांच पाउंड के वजन के देह को उठाकर एक

कदम चलने के बाद दूसरा कदम उठाना और देह धारी अश्व और सवार की तरह भिन्न हैं। यह तत्वज्ञान का अनुभव होता है। कदम-कदम चढ़ते हैं। प्राणायाम के अभ्यास को तो यह सरल होता है। "सोऽहम्-सोऽहम्" का आजया जाप स्वभावतः सहज होता रहता है। एक उच्च शिखर पर आकर चारों तरफ निगाह डालते ही मनमस्त हो गया।

'वो कहा प्रभु, अगम अपारा, अरू कहाँ तू मुग्ध गवांरा'। ललकारते हुए विश्राम करने बैठा। हिमालय की शीतल हवा से थकावट उतर जाने पर ताजा होकर कूच कदम। आज की चढ़ाई में श्वासो च्छवास के साथ 'सोऽहम्-सोऽहम्' का जय चलता रहा।

'जपानां' जप यज्ञोऽस्मि 'स्थावराणामं हिमालयः।

सामने नगाधिराज हिमांचल के श्वेत शिखर देखकर हृदय नाचने लगा। गीता में 'जपानां जप यज्ञोऽस्मि।' स्थाराणाम् हिमालयः। यह एक साथ जुड़ा हुआ है इसमें गूढ रहस्य मुझे मालूम देता है। स्नान सर्वत्र किये जाने से शुद्धि तो होती है परन्तु पवित्र गंगा जल में स्नान करने का अद्भुत और दिव्य महात्म्य है। यह शास्त्र सिद्ध है। भजन ललकारते हुए नौ मील चलकर झलतोला पहुँचे।

दिनांक २९ जून सोमवार जौहार के मिलम ग्राम जो कि भारत की सीमान्त का अन्तिम गाँव है। वहां के निवासी ठा० किसन सिंह जी रावत भोटिया भाई ने तिब्बत मंगोलिया आदि भयानक प्रदेशों में साहस के साथ जाकर सर्वे किया था। बिकट वर्फीले पहाड़ों को पार करके अपरिचित भाषा, स्थान और लोगों से मिलकर जान खतरे में डालकर साहस के साथ शोध खोज करके ब्रिटिश सरकार को नक्शे दिये। बदले में सरकार ने इन्हें रायबहादुर वनाकर भूमि (झलतोला) तथा सीतापुर के पास दो गाँव वक्सीस में दिये।

श्री नैन सिंह रावत को भी इसी तरह के साहस और शौर्य के साथ अति आवश्यक माहीती सरकार को देने के लिए पण्डित का टायटिल देकर भूमि तथा गाँव वक्सीस में दिये।

रायवहादुर ठा० किसन सिंह जी के पुत्र श्री दुर्गासिंह रावत हमारे मित्र रहे, सरकारी नौकरी में सेकेण्ड क्लास मजिस्ट्रेट (तहसीलदार) थे। परन्तु राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत थे। सरकारी नौकरी से त्याग पत्र देकर राष्ट्र सेवा में समर्पित हो गए और हमारे साथ देश भक्तों की तरह जेल भी गये। वे हमारे घनिष्ठ मित्र रहे और कैलाश यात्रा के साथी भी बने। "Change of the wak is rest, Change of the food to fast" नियम के अनुसार आज हमारी यात्रा स्थगित रही। रोज के कार्यक्रम के

अनुसार पैदल चलने के बजाय आज प्रेमी मित्र के यहाँ मुकाम किया। झलतोला का सुन्दर दृश्य देखते हुए स्थित आसन।—

ॐ शान्ति

५—धर्मधर दिनांक ३० जून मंगलवार ३१

श्रीमती तुलसी बहिन (श्रीमती दुर्गासिंह रावत) ने तिलक करके तथा पुष्पहार पहनाकर आशीर्वाद दिया और त्रिपुटी (श्री तुलसी दास भाटिया तथा श्री दुर्गासिंह और ओम् शान्ति ने) कैलाश यात्रा के लिए प्रस्थान किया।

बेनीनाग से एक बीच का रास्ता लिया जो धर्मघर शामाधूरा होता हुआ मुन्स्यारी मिलम के रास्ते कैलाश यात्रा को जाता है।

कैलाश यात्रा में महाराजा मैसूरका पड़ाव बेनीनाग में होने से मेला सा लग गया था। तब हल्की सी वर्षा शुरू हो गयी हम तो वहाँ उसे चौकोड़ी से चाय के बगीचे के बीच से जा रहे थे। विचार तरंगों की भी वर्षा होने लगी।

अल्मोड़ा जिले की सरहद एक तरफ उत्तर में तिब्बत से स्पर्श करती है, दूसरी तरफ नेपाल, तीसरी तरफ नैनीताल और चौथी तरफ गढ़वाल है। सीमा जिला होने से ब्रिटिश सरकार की शुरू से यह योजना रही कि यह जिला संरक्षण के लिए मजबूत बनाया जावे। यानी अंग्रेजों की एक कालोनी बसाहत) स्थापित की जावे। रशिया यानी सोवियत रूस (रीछ) भालू भारत रूपी गाय का हरण करे तो अंग्रेजों को दूध मलाई कहाँ से मिले ? इसलिए पहाड़ों के अच्छे-अच्छे स्थान अंग्रेजों को देकर आबाद बनाया था। हिमालय के अद्‌भुत दृश्य आरोग्य वर्धक जलवायु होने से गोरे अंग्रेजों को बसाकर बिना वेतन के फ्रन्टीअर फौज बनाकर सल्तनत की सीमा की रक्षा करें। इसलिए जहाँ चाय तथा विविध फल सेव आड़ू खमुगानी, अखरोट आदि फल हो सके, ऐसी भूमि इनाम वतोर वक्सीस में दे दी गयी।

कौसानी, द्रोणागिरि, चौकोड़ी, लोध, चौवटिया, बिनसर, बेनीनाग, झलतोला, माउन्ट अबेट आदि अनेक स्थानों पर अंग्रेजों ने अपने वंगले बनाकर, बगीचे आदि के कारोबार जमा लिये थे। परन्तु सन् २१ में अखिल भारतीय सत्याग्रह के आन्दोलन के सिलसिले में पहाड़ों में कुली बेगार प्रथा कलंक के प्रति सत्याग्रह करके जनता की

जागृति से विजय पायी । तब ब्रिटिश सरकार को भय लगा और खड़ी फौज की सारी योजना स्थगित कर दी गयी । अतः अंग्रेजों ने बंगले, बगीचे, भूमि वगैरह हिन्दुस्तानियों को बेची दी । परन्तु वे अंग्रेजों की तरह कुशलता से कारोबार नहीं कर पाये अब भी कुछ स्थानों पर चाय तथा फलों के बगीचे हैं । पर वह पहले की तरह जाहो जलाली नहीं रही । स्वतन्त्रता मिलने पर ही शायद कार्यक्षमता बढ़े यह सन् ३१ में मेरी भावना रही थी ।

पहाड़ों के विविध अनुपम दृश्यों को देखते हुए, भजन गाते हुए, शाम को सात बजे धर्मधर पहुँचे । यहाँ से बागेश्वर, बेनीनाग, शाभाथूरा, तेजम मुन्स्यारी के रास्ते जाते हैं । जंगल बीहड़ होने से शेर भालू आदि जंगली जानवरों का आश्रय स्थान है ।

धर्मधर फोरेस्ट बंगले में रात रहे । ऐसे बिकट पहाड़ों में ब्रिटिश सरकार ने अपनी सुविधा के लिए फोरेस्ट बंगला तथा डाक बंगला बहुत अच्छे-अच्छे स्थानों पर बनाकर सरकार ने शासन तन्त्र का जाल होशियारी के साथ बिछा रखा है । जंगलों से आय के विविध साधन स्थापित कर दिये हैं । जंगलों के चीड़ के वृक्षों में से रस निकाल कर टीनों में भरकर बरेली, टर्पेनटाइन, फेक्ट्री में भेजे जाते जहाँ टर्पेंटाइन बीरोजा तथा राल आदि बनाकर भारी मुनाफा कमाते हैं । जंगल की लकड़ी में से स्लीपर तख्ते तथा कोयले आदि बनाकर भारी आमदनी सरकार को होती है कुदरती बक्शीसों से तथा उदारता का लाभ जाग्रत तथा स्वतन्त्र जनता ही ले सकती है अभी तो भारत को स्वतन्त्र होना है जनता अब जाग्रत होती जा रही है । (सन् ३१ की मेरी भावना) Arise ! Awake !! and stop not till the goal is reached. उतिष्ठत । जाग्रत । प्राप्य वरान्निबोधत ॥

६—दिनांक १ जुलाई बुधवार १९३१

सृष्टि सदा सफर करती रहती है । बदलती रहती है । संसार धर्मशाला है । राही रात रहकर रास्ते पकड़ते हैं । जीवन भी ऐसा ही है । अतः हम भी आगे बढ़ें । हमारे साथ के एक ब्राह्मण पंडित ने पहाड़ी भाषा में पुरुषोत्तम मास की कथा शुरू की । जिससे रास्ता आसान बन गया । संस्कृत, हिन्दी, गुजराती, बंगला आदि की मिश्रित भाषा से पहाड़ी भाषा बनी है । सर्व भाषाओं की जननी तो संस्कृत है ही । पहाड़ी यानी कुमाऊँनी भाषा बोली जाती है परन्तु लिखनेमें मुख्यतः हिन्दी लिपि है ।

शबनम जैसी हल्की वर्षा हो रही थी । आसमान और जमीन का सम्बन्ध बादलों में एकाकार हो जाने से अद्भुत दृश्य था । सर्वप्रथम ऐसा ही दृश्य बचपन में

सौराष्ट्रों में गिरनार पहाड़ (रैवतक पर्वत) में देखा था। पहाड़ों की गोद में बादल दौड़ते नाचते देखकर हृदय भी नाच उठता हो। जंगल के बीच में रंग बिरंगे पुष्पों की पूर्व बहार थी।

"वैश्वानलदेव (जठराग्नि)" ने इन्द्रदेव की परवाह किये बिना अपनी आज्ञा जारी कर दी। यानी जोरों की भूख लग गयी थी। अतः दोपहर को जंगल के बीच घास फूंस के झोपड़े में जाकर रसोई की व्यवस्था की। पेट पूजन तथा आराम के बाद एक बजे प्रस्थान किया। आगे तीन मील चले तो पहाड़ की ऊच्च चोटी पर शिखर का मन्दिर मिला। ग्रामीण जनढोल नगाड़े बजाते हुए पूजा करने जा रहे थे। चारों तरफ पहाड़ी गाँव बसे हुए थे, दो चार घर इधर-उधर उपर-नीचे बनाकर गाँव बन गया। नजदीक में सीड़ीनुमा खेत होते है। मकान पत्थर के, छत पर भी पत्थर यानी चौड़ी स्लेट जमा दी गयी होती है। ताकि बर्फ की वर्षा से बचाव हो सके। स्लेटनुमा पतले लम्बे चौड़े पत्थरों की खान पहाड़ों में बहुत जगह है।

'पवित्र पंचाचूली' के पांच हिमाच्छादित शिखर पांच पांडवों के प्रतिनिधि बनकर नगाधिराज के पांच अंगुली की तरह सुशोभित है। इस दृश्य का आनन्द लेते हुए हरी घास के मखमली गलीचे पर जा बैठे। अल्मोड़े से आने वाली सड़क पतली रेखा सी बनी हुई है। दो वर्ष पहले यानी सन् २९ में इसी रास्ते से प्रथम बार मुन्स्यारी गया था। शामाधूरा के पास आज जढबोला गाँव में पड़ाव किया। काफी रात बीतने पर पर भोजन करके निद्रा देवी की शरण में 'क्या राय क्या रंक क्या पापी या पुण्यशाली, योगी या भोगी, त्यागी तथा रागी सब मान भूल जाते हैं। निंद्रा तो एक संक्षिप्त मृत्यु ही माना जाये। मृत्यु की याद दिलाकर मनुष्य को चेतावनी दी जाती है कि जीवन क्षण भंगुर है। पर इसके लिए भी दिव्य चक्षु चाहिए। यक्ष ने युधिष्ठिर से पूछा—'संसार में आश्चर्य क्या है। उत्तर दिया मृत्यु निश्चित होने पर भी मनुष्य एक मिनिट के लिए मौत को सोचता नहीं, यही आश्चर्य है। जीवन अनिश्चित है इसके लिए सतत सोचता रहता है।, गुरु बिना ईश्वर कृपा बिना सुसंकार बिना चित शुद्ध और आत्म शुद्धि बिना यह अनुपम दिव्य और अपूर्व आत्मिक शान्ति लभ्य नहीं हैं।

'जिन खोज तिन पाया," खोज खोज अन्तरगत तेरा।'

(६) रामगंगा–दिनांक २ जुलाई गुरुवार ३१

अल्मोड़ा से शामाधूरा पैदल बावन मील दूर है। उस समय तो वहाँ कभी मोटर

रास्ता बनेगा यह कल्पनातीत बात थी। पहाड़ों में १०-१२-१५ मील की यात्रा का अर्थ पूरे दिन समझना चाहिए। डाक हर स्थान पर हरकारों के हाँथ पहुँचाइ जाती है। पर अन्तर्भाग में तो हफ्ते में एक या-दो बार ही डाक मिलती है।

आज प्रातः सात बजे प्रस्थान करके दो मील चलकर एक धार पर पहुँचे इस धार को बांखार धार कहते हैं। दोनों तरफ का दृश्य देखकर आनन्द हुआ। नीचे और नीचे पाताल में पतली धार सी 'रामगंगा' का दर्शन हुआ। रामगंगा के एक किनारे गन्धक का पानी था। अब सीधा लाठी की तरह का उतार आया। अधिकांश लोगों को चढ़ाई कठिन मालूम देती है। पर मुझे तो उतार अधिक कठिन मालूम देता है। चढ़ाई में श्वाँस फूल जाती है। दम भर जाता है पर देह दुखती नहीं। उतार में तो सारे शरीर में पीड़ा होती है। विशेष करके पैरों में अणनम राष्ट्र ध्वज सत्याग्रह में लाठी मार से पैर टूटा था। वह आज अधिक दर्द करने लगा। "झण्डा ऊँचा रहे हमारा।" रामगंगा के पुल के पास पहुँचा था। किस्मत अच्छी कि कच्चा पुल अभी तक नहीं टूटा था। पक्का पुल बनाने की योजना है। धीमे धीमे साहस के साथ सामने मार्ग पर पहुँचे बर्फानी शीतल जल से तृष्णा शान्त की। पास ही के बर्फानी पहाड़ से रामगंगा बहती होने से पानी बहुत ही ठंडा था। वहाँ से एक मील चलकर तेजम गाँव के कोट किले के नीचे की दूकान में डेरा डाला।

यात्राओं के लिए इन पहाड़ों में दूकान एक अच्छा आश्रय और विश्राम का स्थान है। बद्रीनाथ केदारनाथ की तरफ इन्हें चट्टी कहते हैं। दस बारह पन्द्रह मील की दूरी पर दूकाने मिलती हैं। वहाँ पर सीधा पानी तथा रसोई के लिए वर्तन जलावन (लकड़ी) तथा भोजन सामग्री मिलती है। और रात रहने के लिए स्थान भी मिलता है।

जाकुला नाम की गंगा रामगंगा को मिलने वाली बालसखी है। तीन बड़े और उच्चे कूदरती पत्थरों के पीलर की तरह उपयोग करके पुल खड़ा कर दिया है। पत्थरों के बीच में एक हरा-भरा पौधा उगा था। मनुष्य नहीं कर सकता वह कुदरत करामात करती है॥

"कहाँ पर्वत शिखर के उपर कर दिये खड़े जहाँ तरुवर।"
"उनका भी वहाँ निरन्तर पहुचावत है जीवन भर॥"

"काठियाबाड़ी" होने पर भी अब अभ्यास से पहाड़ी बन जाने से इस दो पहाड़ों की घाटी में गरमी लगने लगी। अभ्यास से तो आदत बन जाती है। इसलिए फिर दुबारा रामगंगा में स्नान करके मस्त बनकर परम आनन्द का अनुभव किया। हृदय की यह अवर्णनीय स्थिति थी। संक्षिप्त में परम शान्त हुआ।

—"रामबाण वाग्यां होय ते जारये।"

सत्याग्रहाश्रम साबरमती तथा सौराष्ट में उद्योग आश्रम में रहते हुए शत्रुंजय तथा गिरनार पर्वत की सात से अधिक बार यात्रा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आबू पर्वत पर भी दो बार हो आया था। अंबा जी आरासुरामाता गब्बर पहाड़ तथा बाला-राम आदि स्थानों का पर्यटन करके परमात्मा की प्रकृति झांकी की थी। समुद्र और हिमालय पर्वतीय दृष्य जंगल, झरने, स्रोत गंगा आदि देखते ही हृदय की अद्भुत स्थिति हो जाती हैं। तेजम गाँव में ५०-६० मकान हैं। शीत काल में जौहारी भौटिए परिवार सहित रहते हैं। नदी किनारे की भूमि खेती के लिए अच्छी मानी जाती है। जहाँ सिंचाई का प्रबन्ध सहज हो वह तलाऊ यानी उपजाऊ जमीन हैं। भोटिया पुरुष व्यापारी अल्मोड़ा, हल्द्वानी, देहली, कानपुर, कलकत्ता आदि स्थानों पर माल खरीदने जाते हैं। उसे लेकर गर्मी में तिब्बत जाते हैं।

दिनांक ३ जुलाई शुक्रबार ३१

झरमर, झरमर मेहुला वर्षा बरस रही थी। प्रातःकाल का समय था। तब जाकुला गंगा के किनारे चल रहे थे। पहाड़ों में छोटी मोटी सभी नदियों को साधारणतः गंगा कहा जाता है। वैसे विशेष नाम भी होता है। पहाड़ों में नदी किनारे चलने में अक्सर सीधा रास्ता है। यानी चढ़ाई, उतार साधारण होता है। रास्ते में चूरा नाम के विशाल वृक्ष देखे थे। नेपाल में इन वृक्षों के फल रस फूल आदि में से गुड़ घी बनाते हैं। शहद भी होता है। जौंलजीवी मेले में नवम्बर दिनांक १४ लगभग संक्रान्ति के दिन विक्रयार्थ आते हैं।

पहाड़ निचोड़ कर ५०-१००-२०० फीट की उचाँई से पानी के धोध जल प्रपात पड़ते हैं। मानो चाँदी का रुपहला रस नितरतन है। बरसाती वर्षा में किसान, बालक, महिलायें पत्तों से खास तरह की बनायी छतरी ओढ़कर घूँटने तक कीचड़ में धान की रोपाई कर रहे थे। ऐसी पहाड़ी, पत्थरीलो जमीन में सीढ़ीनुमा खेत बनाकर फसल उत्पन्न करने में भारी मुश्किल पड़ती हैं। पेट पालने के लिए सृष्टि में कितना सख्त श्रम करना पड़ता है। वह दूसरों के पसीने से पोषण प्राप्त करने वालों को क्या अनुभव है "श्रम निष्ठा की उपासना ईश्वर पूजा है।" पर इसका महत्व श्रम करने वालों को शायद समझ में आता होगा क्या ? जिले भर में एक ही शब्द का ला" पुल के पास पहुँचे। यहाँ से

सीधी चढ़ाई चढ़कर "गिरगाँव" पहुँचे। आठ दस झोपड़ों के बने गाँव में अनजानें को शायद ही आश्रय मिले। पर हमें डेरा तम्बु डालने की अच्छी सुविधा मिली।

वर्षा बरस रही थी। गाँव वालों की मदद से एक सुन्दर स्थान "बीरथी" जल प्रपात के सामने ही भोटिया पाल यानी तम्बू खड़ा किया। पाल यानी जीन जैसे मजबूत कपड़ों से बने मध्य में एक बांस लम्बा रखकर दो तरफ ढ़ालू करके जमीन में चारों तरफ खूंटे गाड़ कर डोरी से वाध लिया जाता है। जिससे भीतर पानी न आवे। जिन्दगी में प्रथम बार ऐसा तम्बू यानी श्वेत वस्त्र कुटीर में रहने का अवसर मिलने से आनन्द आया। दूर्वीन से चारों तरफ की प्रकृति की लीला निहार रहे थे। वर्षा बन्द होने के बाद तम्बू से बाहर निकला। पहाड़ का रंग निखर गया था। वर्षा से पृथ्वी माता सद्यस्नाता बन जाने से हरियाली चमक रही थी। बादल चारों तरफ चोपड़ खेलते हुए नाच रहे थे। काले जंगल वर्षा होने से अधिक श्याम दिखाई दे रहे थे। उनकी मनोहर सौन्दर्य छटा सर्वत्र दिखाई देती थी। पर्वतों की छाती पर वादलों का नृत्य, देखते-देखते बादलों से घिर जाना, मेघ का गर्जन-तर्जन, बिजली के चमकारे, कड़कन वर्षा का रिमझिम बरसना, प्राकृति का स्नान करके शुद्ध बनना, आकाश रूपी नववधु का घड़ी में रोना घड़ी में हंसना यह सब परमात्मा की अद्‌भुत लीला है। ऐसे पवित्र वातावरण में रहते हुए अंतःस्फुर्णा से आनन्द की लहरे उठती रहीं। भारत माता, जननी जन्म भूमि में ऐसा अनुपम सृष्टि सौन्दर्य, ऐसे सुरम्य पर्वत और नगाधिराज हिमांचल के उच्च श्वेत शृंग हैं। ऐसी है—

"जननी जन्म भूमिश्च, स्वर्गादपिगरीयसी।"
"अई मातृभूमि तेरे चरणों में सिर नमाऊ।
सेवा में तेरी सारे भेदों को भूल जाऊ॥
वह पुण्य नाम तेरा प्रतिदिन सुनु सुनाऊँ।
तेरे ही काम आउं, तेरा ही मंत्र गाऊं॥

मन और देह तुझ पर बलिदान में चढ़ाऊँ—अई मातृ-भूमि उपरोक्त राष्ट्र गीत गाते हुए मस्ती चढ़ आयी। साढ़े तीन करोड़ रोम खड़े हुए। रोमांच हृदय हर्षित हुआ। आत्मपूजन करते हुए वह वर्णनातीत स्थिति में दो घंटे व्यतीत करके संकल्प जागृत समाधि का अनुभव किया। हालांकि यह स्थिति जीवन में विशेष परिस्थिति में हुआ करती हैं। इसके लिए सतत साधना रहती हैं। पर अन्तिम शान्ति या निर्विकल्य समाधि में सों—

"यतो वाचो निर्वतन्तें, अप्राप्य मनसा सह, ॥"

(७) मुन्स्यारी जोहार—दिनांक ४ जुलाई शनिवार ३१

प्रार्थना पूजन के बाद सात बजे प्रातः प्रस्थान किया। चढ़ाई स्वर्ग की सीढ़ी की तरह सीधी आने लगी। परन्तु आस पास के सुन्दर दृश्य होने से कठिनाई कम मालूम दी। झालतोला तथा लंकेश्वर के पहाड़ों के दर्शन दूर से हुए। बनीक नामक स्थान पर एक प्रेमी भाई किसान ने भैंस के ताजे दूध तथा दही से स्वागत किया। वैश्वानल अग्नि को शान्त किया अगर यहाँ भूख शान्त न होती तो जोगेन्दर जैसे काला मुनि पहाड़, की कठिन चड़ाई पार करने में कठिनाई होती। परन्तु ईश्वरीय विधान के अनुसार सब होता है।

"कालामुनि" पहाड़ अपना नाम सार्थक करता है। काला रंग का हरा भरा बीहड़ विकट जंगल से भरपूर पहाड़ है। जहां सूर्य नारायण के किरण भी मुश्किल से प्रवेश कर सकती है ऐसे जंगल के बीच काला मुनि ऊँचाई तक पहुँचने में कठिन चढ़ाई आती है। कदम कदम चढ़ते गये "ला" पुल से यहाँ तक की सीधी चढ़ाई लगभग पाँच मील की चढ़कर साढ़े आठ हजार फीट की ऊँचाई पर पहुँचे वहाँ झण्डी धार का दर्शन हुआ। हर कठिन चढ़ाई के अन्त में विजय के रूप में ध्वजा चढ़ाने की रश्म है। पवित्र पंचाचुली हिमांचल नगाधिराज के पाँच श्वेत हिमगिरी श्रृंगों के दिव्य दर्शन हुआ। मुन्स्यारी पंचाचुली की जड़ में बसा हुआ है।

"सारा संसार आधा मुन्स्यार" कहावत के अनुसार मुन्स्यारी में अलग-अलग कई गाँव हैं। खुशहाल सिंह रावत नामक भोटिए भाई ने यात्रियों के लिए यानी टिकसेन गाँव में एक धर्मशाला बनायी है। सेठ बल्भदीन भाइ भाटिया प्रथम से ही यहाँ ठहरे थे। कैलाश यात्रा की त्रिपुटी त्रिवेणी संगम टिकसेन गाँव में हुआ। भाटिया सेठ श्री बलभ दास तुलसी दास बम्बई के गुजराती सज्जन, भोटिआ सेठ श्री दुर्गा सिंह रावत यहाँ के तथा स्वयं लेखक बनकर त्रिपुटी हुई।

भविष्य की कठिन यात्रा की भयानकता तथा यात्रा के लिए घोड़े और मजदूर तथा तबुंओं के प्रबन्ध आदि कार्यक्रम के—विषय में मित्रों से परमर्श हुआ। एक सुझाव यह आया कि मुन्स्यारी से मिलम होते हुए ऊँटाधूरा हिमालय

का शिखर पार करके "टोपी ढुँगा" से थोलींग मठ होते हुए तीर्थापुरी दर्शन करते हुए ज्ञानीमां मण्डी से जाकर कैलाश मानसरोवर दर्शन व परिक्रमा करके खोचर नाथ की यात्रा के बाद ताकुलाकोट से लिपुलेख हिमालय पार करके भारत प्रवेश गर्ब्यांग गाँव यानी अल्मोड़ा जिले में प्रवेश किया जावे—

टोपीढूंगा का रास्ता कुछ लम्बा पड़ता है और चंबर गाय याक्, लप्पू खच्चर घोड़े वगैरह का एक साथ प्रबन्ध हो सकेगा, या नहीं एक समस्या यक्ष प्रश्न सामने रहा। इसलिए प्रथम तो 'मिलमग्राम' भारत के अन्तिम गाँव तक जाना यही प्रस्ताव सर्वानुमत से पास हुआ और आगे का कार्यक्रम इसके बाद बनाना उचित है। "आगे-आगे गौरख जागे।"

एक कदम बस हो।
One Step enough for me Lead kindly light।
सन्ध्या समय पास की चोटी पर टहलने गया।
सायं प्रार्थना का दृश्य आकर्षक था।
'आकाश लहरी वायुनीनदी झरण पुष्प गुलाबनां'।
निज कारणे धरत्तों आबां झीणा वस्त्रोधणां।'

दिनांक ५ जुलाई रबिवार ३१

प्रातः काल एकान्त में सुन्दर श्रोत पर स्नान करने गया। चारों तरफ अनेक झरणे दौड़ रहे थे। अल्मोड़ा और रानी खेत में तो गरमी में एक टीन पानी का छः-आठ आना खर्च करना पड़ता है। मरुभूमि भाखाड़ जैसी पानी की तंगी इस पहाड़ में कहीं-कहीं पड़ती हैं। यह आश्चर्य है पर यह तो कलयुग का प्रताप है। बाद में तो नल-कल मशीन से दूर-दूर से कल द्वारा इन शहरों में पानी पहुँचने लगा। 'ऊर्ध्वोकर्मण की गत न्यारी'। अल्मोड़ा से मुन्स्यारी पैदल रास्ते ८० मील दूर है। "सारा संसार आधा मुन्स्यार", के जोहारी भोटिए गरमी में मिलम लगभग बारह हजार सात सौ फीट में रहते हैं। वहाँ तीन माह में तैयार हुई फसल लेकर अक्टूबर नवम्बर में मुन्स्यारी उतर आते हैं। यहां भी मकान खेत घर गृहस्थी का सामान रहता है। फसल यहां भी पैदा कर लेते हैं। अति शीतकाल में यहाँ से नदी किनारे के घाटियों के गाँवों में तेजम भैंसखाल, थल आदि गाँवों में आ जाते हैं। यहाँ उगायी फसल तैयार कर

लेते हैं। इस तरह यह साहसिक काम वर्ष भर में तीन स्थान पर घुमाते हैं। खाना बदोश कैसे कहाँ जावे। तीनों स्थान पर अपने मकान खेती लायक भूमि और गृहस्थी का सामान वगेरह होता हैं। यानी एक तरह से 'स्वर्गलोक' 'पृथ्वीलोक' तथा 'पाताल 'लोक' का अनुभव कर लेते हैं। बाल बच्चे महिलायें इन जगहों में रहते हैं और पुरुष वर्ग शीत काल में दिल्ली, कानपुर, कलकत्ता से व्यापार का सारा सामान खरीदकर गरमी में तिब्बत जाते हैं। इस तरह घूमन्तू जीवन व्यतीत करते हैं। यह कौम तीनों स्थान पर विविध फसल उत्पन्न कर लेती हैं। मुन्स्यारी में आलू की पैदावार अच्छी है। घाटी में तथा मिलम में उगल, काफर, जों, गेहूँ, सरसों, मण्डुवा वगैरह फसल उगा लेते हैं। मुन्स्यारी में एक डाक बंगला भी है। पोस्ट आफिस है। तीन-चार प्राथमिक पाठशालायें भी हैं। अब तो वहाँ हाईस्कूल, इण्टर कालेज भी हैं। जौहांरी भौटिए अन्य सीमान्त इलाकों से शिक्षित हैं। हस्त लिखित इतिहास में पढ़ा कि ये लोग 'राजपूत शक वंश के हैं। तिब्बत और भूटान के साथ व्यापार संबंध और सम्पर्क के कारण भोटिए कहे जाते हैं।

कैलाश यात्रा जीवन में एक ही बार होती हैं। कोई-कोई तो अनेक बार यात्रा कर लेते हैं। पर कठिन है। अतः आज जीवन में प्रथम बार कैमरे से फोटो लेना सीखने के लिए सेठ जी के शिष्य बने। एक मित्र ने अहमदाबाद से आगफा बक्स कैमरा भेजा था। इससे ३०, ४० फोटो लिए थे। धोने की प्रक्रिया भी सीख ली। इसलिए अधिकांश फोटो अच्छे आये।

कैलाश यात्रा में 'कताई-यज्ञ' यानी ऊन कतुवे से कातने का कार्य नियमित होता रहा। दो एक दिन शायद छुटा हो। पर इस कताई-यज्ञ के साथ-साथ 'जपयज्ञ' गायत्री-मंत्र के साथ या राम नाम जपते हुए लगभग पैंतालीस वर्ष से (पहिले रूई बाद में ऊन) चलता रहा है। सौराष्ट्र मढड़ा उद्योग आश्रम में तो श्रावण मास में दूध पीकर उपवास करके कताई व बिनाई कार्य करते रहे। यह एक अद्‌भुत अनुभव है।—'तारे तारे देख्यो भारत वो उद्धार'—राष्ट्र-पिता बापू का मंत्र है। 'सूत के तंतु से स्वराज्य' इसमें गूढ़ रहस्य भरा है।—स्वराज्य यानी आत्मराज्य।—'झीनी रे झीनी बीनी चदरिया।' कबीर के भजन में पूरी आध्यात्मिकता भरी पड़ी है यह अनुभव सिद्ध हुआ।

ॐ शान्ति १८–९–८३

गरजती गोरी गंगा—दिनांक ६ जुलाई ३१ सोमवार

"शक्तिशाली नदियोंकी जन्मदात्री" "ऋषि मुनियों ने तेरी आराधना की है।" "अत्यन्त प्रिय तथा अमुपम गंगा ! तेरी कीर्ति चिरकाल से व्यापक है।" "तेरी तरंगे अचेतन रूप से बहती जा रही है।" पर उनकी तरह तुम अचेतन नहीं हो।" "तेरे गर्जन करते प्रवाहका यह भयानक रूप", "चिरकाल से ईश्वरतुल्य पुजता आ रहा है।" "तेरी पूजा मूर्ख और दासों ने नहीं। पर सर्वोच्च प्रतिष्ठा वाले ऋषि मुनियों ने की है।"

"गौरीशंकर का स्मरण करके सात बजे प्रस्थान किया। मुन्श्यारी से मिलम तक पैंतीस मील का प्रति मजदूर साढ़े पांच रुपया अधिक नहीं है। मुन्श्यारी से मिलम का रास्ता मृत्यु के मुख में जाने जैसा होने से घोड़े की सवारी खतरनाक गिनी जाती है। अतः सेठ जी ने पैदल चलना स्वीकार किया। बम्बई में बिना मोटर कार के कदम नहीं धरने वाले को पहाड़ में चलने की आदत नहीं, फिर स्थूल शरीर (लगभग दो सौ पाउण्ड से अधिक) रास्ता भी खराब होने से धीरे-धीरे कदम भरते हुए, गोकुल की गाय की चाल को भी मात (म्हान) करते हुए सेठ जी पैदल चले। चित्रगुप्त के चोपड़े में (पुस्तक में) इनकी यात्रा का पुण्य अधिक लिखा जाना चाहिए। क्योंकि अधिक कष्ट सहन करके जो यात्रा हो उससे अधिक पुण्य प्रकट होता है।

श्री काका कालेलकर ने "हिमालय के प्रवास" में लिखा है कि रेलवे तथा मोटर की यात्रा से पुण्य कम मिलता है। गाड़ी घोड़ा या बैलगाड़ी से होने वाली यात्रा में पुण्य ज्यादा मिलता है। परन्तु पैदल चलने कष्ठ सहन करते हुए जो यात्रा हो वही श्रेष्ठ है। इस तरह कनिष्ठ, मध्यम और श्रेष्ठ त्रिविध यात्रा कही जावे। पैदल यात्रा का रहस्य यह है कि कष्ट सहन करते हुए कदम-कदम चलते हुए यात्रा के पवित्र आदर्श के प्रति आत्म-चिन्तन होता रहता है। शुद्ध भावना सतत अखण्ड रीति से रहती हैं। हृदय में आत्मानन्द की अनुभूति होती रहती है। क्योंकि भारत भर में "कैलास–मानसरोवर यात्रा" अति कठिन कही जाती है और कैलासवास होने के अनेक प्रसंग प्राप्त होते रहते हैं।

तीन मील का उतार उतर कर गौरी गंगा के किनारे पहुँचे। गौरी के दाहिनी तरफ गर्जना सुनते हुए चले जा रहे हैं। सतत कलरव ध्वनि में "शिवहर शंकर गौरीशम् वन्देगंगाधरमीशम्" जप चलता रहा।

पर्वत की उच्च चोटी पर से एक जगह पत्थर पड़ने लगे। ईश्वर कृपा से हम

लोग बच गये। वर्षा ऋतु में इस तरह पहाड़ों के ऊपर से पत्थर पड़ते रहते हैं। क्योंकि वर्षा से मिट्टी धुल जाने पर पत्थर अलग होने लगते हैं। छोटी बड़ी तथा कई बार तो हजारों मन की चट्टाने भी गिरने की तैयारी में तुली रहती हैं। समय आते ही नीचे खिसक कर सृष्ठि की रचना में फेर बदल कर देते हैं। छोटे पत्थर तो कच्चे पहाड़ों से हर समय गिरते रहते हैं। अतः यात्रियों को सावधान रहना चाहिए। नहीं तो कैलासवास भी हो जावे। एक छोटा सा पत्थर भी उतने ऊँचे से गिरते हुए 'बाम्ब' (बम) का काम करके सारे वर्ष समाप्त कर दें (ऐसी कई घटनायें बन चुकी है)।

गंगा किनारे चढ़ाई उतार साधारण होती हैं पर सेठजी की ऐतिहासिक धीमी चाल के कारण काफी देरी हुई। भूख की भयंकर ज्वाला जलने लगी। भूख तो पेट में लगी होती है तो पैर क्यों अशक्त बन जाते हैं? यह तत्त्वज्ञान समझने के लिए सिर में भी चक्कर आते रहे। प्यास भी खूब लगी थी। पातालमें सवा सौ फीट गहराई में गौरी गरजती रहती थी। सामने के पहाड़ों से अनेक जलप्रपात (धोधभार) गति से नीचे पड़ते हुए दिखाई दिये। परन्तु इससे प्यास कैसे बुझे? कैसे शान्त हो "Water water all around water but not a single drop to drink।" इतने में रास्ते में ही पानी का एक झरणा देखा। दौड़कर गये। हिममय शीतल जल ने पेट भर दिया। स्फूर्ति आई। भजन ललकारते हुए झरने के बीच में ही एक पत्थर पर आसन जमाकर बैठ गया। आधे घंटे बाद सेठ जी आये। छोटी सी नाजुक पर सुन्दर डिब्बी में से बदाम पिस्ता, किशमिश निकाल कर दिया; यानी चरवा मात्र। पर उससे तो भूख अग्नि की तरह धधकने लगी। वह शान्त कैसे हो? चढ़ाई चढ़कर भूख भूलने के लिए ऊन कताई मंत्र सहित करने लगे। पर मन को शान्ति कहाँ, कूदती, फांदती, उछलती, गरजती गौरी के अद्‌भुत दृश्य का फोटो लिया। इस तरह प्रति घंटे एक मील की तेज चाल से चार बजे सात मील पर "मालचू" नामक गुफा में डेरा डाला। पहुँचते ही सुखड़ी (कसार, गुड़पापड़ी, मीठा गेहूँ का सत्तू) से भूख के दुखड़े को शान्त किया। तब जीव में जीव आया (जी में जी आया) भूख कितनी भयंकर है? इसका अनुभव हुआ। "कलयुग में अन्न समा प्राण है।" "भूखे भजन न होय गोपाला" यह सत्य सिद्ध हुआ।

सच्ची यात्रा मेरे लिए तो आज से शुरू हुई—ऐसा कहा जावे। मुन्स्यारी तक तो कर्त्तव्य अर्थे पहले पर्यटन कर चुका हूँ। आज का दृश्य अपूर्व था। गौरी किनारे से पचास फीट ऊँचे पर्वत के पिटार में—उड्यार—यानी गुफा में बिस्तर बिछा दिये। नीचे गौरी के उग्र स्वरूप का दर्शन हो रहा था। उसकी गर्जना इतनी जोर से होती थी कि कान पड़ा कुछ सुनाई न दे। बातें भी जोर से करनी पड़ती थीं। भोजन करके गुफा में सोये। भयानक गर्जना, घोर अँधेरा, हम पर्वत के पेट में यानी गुफा में—आज ही कैलास यात्रा की झांकी का अनुभव तन और मन को हुआ।

"ग्रीक दन्त कथा में सौन्दर्य की देवी फेन से उत्पन्न हुई बतलाई जाती है "परन्तु वह तो कान से सुना था। आज आँख से देखकर सत्य प्रतीत हुआ। यहाँ नदीके फेन स्वयं प्रत्यक्ष नृत्य कर रहे हैं। बहती हुई नदी सृष्ठिकर्ता के भजन बिना और क्या गाती है ?"
"गंगा का सुन्दर तट हैं। अलौकिक हरियाली बिछाई है। बादल के मनोहर दृश्य है। वायु सुखकर है और सुन्दर पर्वतों पर से जल-प्रपात पड़ रहे हैं। गंगा का गान कैसा सुरीला, मधुर और मनोरंजक हैं। संसार की शैतानी कोलाहल के त्याग के बाद शान्त, सात्त्विक वातावरण में कैसा आनन्द हैं।

दिनांक ७ जुलाई मंगलवार १९३१

प्रातः छः बजे गौरी गंगा की गोद में आगे बढ़े। गौरी (गंगा) यानी पार्वती का एक नाम अथवा इस सरिता का जल सफेद मिट्टी के रंग के कारण गोरी, श्वेत दिखाई देता हैं। शायद इसलिए गौरी नाम दिया होगा।

आज की यात्रा में गौरी मैया की विकराल उग्र मूर्ति महिषासुर मर्दिनी यानी काली माई की कराल मूर्ति का सा भयंकर स्वरूप दिखाई दिया। पन्द्रह हजार फीट की ऊँचाई पर से तीन हजार फीट पर उतरती गोरी गंगा विकराल स्वरूप धारण करती, जबरदस्त पत्थरों को तोड़ती, फोड़ती इन पर से उछलती, कूदती, फाँदती, भयंकर जल प्रवाह के रूप में कहीं उग्र तो कहीं सौम्य और शान्त स्वरूप कहीं साधारण या कहीं विशेष रूप ऐसे विविध रूप धारण करती दौड़ी जा रही है। सागर समुद्र में अपने स्वरूप को संयम में विलय कर देती हैं।

"यह जल प्रपात घोष नहीं है पर रजत देह धारी नाच रहा है। नाद तो जैसे झंकार करता है। 'अनाहत ध्वनि' पर्वतों के खंड जैसे नीलम के टुकड़े बिखेर रहा है।"

अपने आत्म स्वरूप में लीन होना–आत्म दर्शन करना यह स्वधर्म और सर्वोत्तम साधना है। आत्मशुद्धि अर्थे तपश्चर्या करना वह भी देश सेवा है न ? शुद्ध और पवित्र आदर्श ही जीवन का ध्येय है।

सरिता सर्वोत्तम सिद्धान्त सिखाती है, यह है "निष्काम कर्मयोग हिमालय नगाधिराज पर्वतों से सरिता–सरंती–प्रवाहित होकर अनेक नगर, देहातों को पोषती भूमि को उपजाऊ बनाकर आबाद करती, सींचती हुई अन्त में समुद्र में समा जाती है। हजारों नदियों का लाखों गैलन जल उस समुद्र में जाते हुए भी नमकीन बना रहता है। परन्तु

सरिताओं का जीवन "निष्काम कर्मयोग के आदर्श अनुरूप वहता रहता है। फलस्वरूप समुद्र में से भाप रूप जल ऊँचे चढ़कर बादल बन कर वर्षा और बरफ रूपमें हिमालय में पड़कर सरिता को सतत अखण्ड बहती रखते हैं। "स्वल्पंम् धर्मस्य त्रायते महतो भयात" सदा स्वच्छ और निर्मल जल बहाकर (संसार) विश्व को 'निष्काम कर्मयोग' का ज्वलन्त दृष्ठान्त देती रहती है—सरिता–गंगा।

'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदांचन'

उपरोक्त विचारों में तल्लीन होकर सात्विक प्रेरणा प्राप्त करते हुए चार मील चले तब हिम भरे बरफ पर चलने का रास्ता मिला। बरफ से जमे हुए पहाड़ चारों तरफ दिखते हैं। बरफ पर चलते हुए हृदय नाच उठता था। पर कौन न नाचे ? सारी सृष्ठि नाच रही थी। एक स्थल पर ऊपर से पत्थर गिरने की सम्भावना थी। अतः वहाँ से राम-राम कहते हुए सावधानी से आगे बढ़े। बड़ी-बड़ी चट्टानें इस तरह गिरी पड़ी थी। कि उसमें सुरंग बनकर गुब्दा गुफा में जाते हैं ऐसे रास्ते बन गये थे।

सात मील चलकर एक बजे बगउड्यार गुफा के पड़ाव पर पहुँचे। आज तो सुखड़ो (गु पापड़ी) यथा समय मिलते रहने से भूख या तृषा का कष्ट नहीं हुआ। बगउड्यार गुफा गोरी गंगा से एक फर्लाङ्क दूर होने से "कान पड़ा सुनाई न दे" ऐसी बात नहीं थी शाम को पेट पूजा करके बगुड्यार गंगा पार करके दूसरी गुफा में डेरा डाले हुए भोटिया भाइयों से मिलने गया। वापस आते जोंक पैर पर चिपक कर पेट भर खून पीकर कब टपक पड़ी उसका पता ही नहीं लगा। सिर्फ खून की धार दिखी। ब्रिटिश सरकार का शासनतन्त्र भी इसी तरह भारतीय जनता का खून पी रहा है–यह बात पूज्य बापू तथा अन्य राष्ट्र सेवकों ने समझाई।

प्रार्थना नियमित रूप से करने की आदत रही। आज काफी रात बीते करने के बाद कच्छी काठियावाड़ भाटिया सेठ तथा पहाड़ी भोटिया सेठ के सत्संग में आराम किया।

पहाड़ के पेट में गुफा जैसी बन जाती है। उसे उड्यार कहेते हैं। सौराष्ट्र में गिरनार की गुफा या साणा के डुंगरों के ऐतिहासिक खंदकों की तरह हिमालय में भी ऐसी गुफायें देखने में आती हैं।

पूर्वजों ने यानी ऋषि मुनियों ने इन पर्वतों में, जंगलों में परमात्मा का भजन किया है। पाश्चात्य तत्त्व-ज्ञान का जहां अन्त होता है, वहां से भारतीय तत्त्व ज्ञान का श्री गणेश होता है। भारत वर्ष की उस उन्नत अवस्था का आज कितना भयंकर पतन हो रहा है। यह देखकर भारत वर्ष की सरिताएं अथाह आँसू बहा कर शोक प्रकट

करती हैं। इसलिए 'ओ भारत संतान उठो जागों की पुकार हृदय से निकलती है।
'उत्तिष्ठत। जाग्रत ।। प्राप्य वरान्निबोधत ।।।

ॐ शान्ति।

दिनांक ८ जुलाई १९३१

इंद्रदेव के आशीर्वाद के रूप में कल रात अच्छी वर्षा हुई। सामान की रक्षा मोमजामे से हो सकी नहीं तो भींग जाता। गुफा में सोने से वर्षा की बौछार से हम लोग बच गये। आज स्वामी रामतीर्थ पुस्तक पढ़ने में और आनन्द आया। इनकी प्रेरणा से जीवन का मोड़ही बदल गया था। Turning point of life वर्षो से सतत स्वाध्याय भी चलता रहता है। बीच में छुट जाता है, फिर शुरू हो जाता है। आँख या हाथ हर समय पास ही है, शरीर का अंग बने रहने पर भी स्मरण नहीं होता। परन्तु जब दर्द उठता है तो सतत स्मरण बना रहता है। गुरु की ईश्वर की कृपा से ऐसे प्रसङ्ग जीवन में उपस्थित होते रहते हैं। यही उन्नत होना, अवनत होना—यह सब जाग्रत साधक की साधना कहलाती हैं।

गौरी गंगा की सखी बगुडयार गंगा में प्रातः स्नान किया। पानी ऐसा ठण्डा जैसे बिच्छू के डंक—पर बाद में स्फूर्ति अच्छी आई। तैयार होकर दस बजे राम नाम स्मरण करते हुए प्रस्थान किया। आज तो बरफ के ऊपर से ही सवा घण्टे से अधिक चलने का सुअवसर मिला। नदी के दोनों तरफ से ऊँचे पहाड़ों में से बरफ नीचे की घाटी में पड़ती रहती हैं; सौ दो सौ फीट की पर्त जम जाती हैं। पर्त के नीचे गौरी गुप्त रूप से बहती रहती है। गौरी गंगा के इस पार से उस पार बर्फ के ही पुल पर से गंगा को–उसके गर्भ में रहने पर–चलने में और आनंद आया। कैलाशेश्वरी या बागेश्वरी ऐतिहासिक चिरसंगिनी लाठी से बरफ के रास्ते पर इधर-उधर अपूर्व भाव-विभोर होकर चल रहा था। ऐतिहासिक लाठी इसलिए कि १९२८ में अल्मोड़ा आते ही वह (तीमूर) तेजबल की लाठी मिली तब से चिरसंगिनी रही है। (अब सन् ८३ तक हिमालय में पन्द्रह हजार मील उसी के सहारे हो चुके हैं) स्वर्ग की सीधी चढ़ाई में या बेदब लाठी के से सीधे उतार में, एक माता की तरह इस लाठी ने रक्षा की है। 'कैलाश-मानसरोवर बद्रीनाथ पिंडारी ग्लेशियर में, तथा हिमालय पहाड़ों में अल्मोड़ा-गढ़वाल-नैनीताल-नेपाल-तिब्बत की यात्रा में जप-यज्ञ, भजन-कीर्तन करते हुए या आत्म-

चिन्तन भी लाठी हाथ में लिए करता रहा। छः फुट ऊँची, नीची लोहखण्ड की नोक वाली खोली सहित वह ज्येष्ठिका (जटिया) ऐतिहासिक बन गई है। अब तो वर्षों से सर्वोदय कुटीर में स्थित आसन है—(वंदन हो)।

नदी के ऊपर इस बर्फानी पुल पर या रास्ते में चलते हुए विशेष सावधानी रखने की आवश्यकता है। क्योंकि कहीं ठोस, सख्त बर्फ न हो तो यानीं नर्म बरफ हो तो सदा के लिए गौरी-गंगा में समाधि एक जगह तो बरफ की गुफा-यानी खंदक में ही घुस पड़े।

यहाँ वहाँ सर्वत्र बरफ ही बरफ। ऐसी अनेक गुफाओं में से कहीं 'गुप्त होती कहीं' इधर-उधर प्रकट होती गौरी गंगा 'Hide and Seek' 'संता कुकड़ी' का खेल खेलती बहती जा रही है। एक स्थान पर भयानक पुल को पार करके गौरी के बाये किनारे गये। एक-आध फलांग चल कर दूसरा खतरनाक पुल पार करके गौरी के दाहिने किनारे आ गये।

पुल भयानक क्यों? गोरी के वह प्रचण्ड प्रवाह पर लकड़ी के दो लट्ठ डालकर उस पर छोटे-छोटे लकड़ी के टुकड़े तिरछे रखकर बांध दिये। बस पुल बन गया। इस पुल पर से पखारने नीचे का प्रचण्ड प्रवाह जोरों से बहता दिखाई देता है। मानों सारी पृथ्वी उलट पलट हो रही हैं। और पुल भी हिलता रहता है। शरीर को समतोल रखाकर चक्कर न आवे इसलिये नीचे पानी की तरफ निगाह न डालते हुए लक्ष्य की तरफ ध्यान देकर "राम राम" जपते हुए पर बहादुरी से फिर भी डरते डरते कांपते हुये भी साहस के साथ चलते रहे। कैसा विरोधाभास। फिर ऐसे पुलों का सहारा न होता तो कैलास यान अशक्य हो पड़ता। पर "राम राखे एने कोण चाखे"

ऊँचे ऊँचे पर्वत, सीधी तट भूखण्डो, आकाश को स्पर्श करती हुई, बाते करता, देखकर फिर बरफ पर चले। अब इन्द्रदेव बरसने लगा। छत्री और रैन कोट आगे चले जाने से भीगते हुये हम लोग आगे बढ़े। शाम को ४.३० बजे ७।। मील चलकर नौ हजार फीट की ऊँचाई पर रीलकोट नाम की गुफा में डेरा डाला। इतनी ऊँचाई पर वृक्ष तो कहाँ से हो। मुश्किल से थोड़ी सी लकड़ी रसोई के लिये मिल सकी। भोजन और प्रार्थना के बाद इस गुफा में गाढ़ निद्रा में समाधिस्थ हो गये।

मुन्स्यारी छोड़ने के बाद इतने दिन में यहाँ देहात तथा घर देखने में आये। वनकटा यानी परशुराम हिमांचल से निकलती हुई गंगा को आज पार करना पड़ा था। परशु यानी फरशु (कुल्हाड़ी नुमा बनकटा) ऊँचा हिमगिरि शृंग यहाँ से नजदीक ही है।

गौरी गंगा में (यानी पहाड़ की नदियों में) दोपहर दो बजे बाद पानी बढ़ जाता

है । क्योंकि ग्लेशियर पर दोपहर की गरमी से बरफ पिघलती रहती है । बड़े-बड़े बर्फानी टुकड़े नदी के पत्थरों के साथ टकराते हुये "गड्डुम गड्डुम" जैसी तोप की गर्जना होती रहती है । गौरी का प्रचण्ड और उग्र मध्यम, सौम्य शान्त ऐसे विधि स्वरूप विविध स्थानों पर देखाते हुए परमात्मा की प्रकृति की विचित्रता पर विचार करते हुए तो—

"यतो वाचो निषर्तनों अप्राप्य मनसा सह"

जैसी स्थिति हो पड़ी है जहाँ विचार वाणी मन आदि शान्त हो जाते हैं ।

पानी जैसी नरम वस्तु सख्त पर्वतों को तोड़ फोड़कर एन्जीनीअर बनकर अपना रास्ता बना लेती है । यह दृश्य देखकर अहिंसा जैसा नम्रतत्त्व "हिंसा" जैसे धधकते हुये ज्वालामुखी तत्त्व पर कैसे विजय पाता है । इस रहस्य का विस्फोट यहाँ होता है । अहिंसा परमोधर्म"

"यत्र गंगा च यमुना च यत्र प्राची सरस्वती ।
यत्र सोमेश्वरो देवः तत्र माभृत्तम कृथियम ।।" (ऋग्वेद)

सर्व तीर्थ मयी गंगा सर्व देव भयोहरिः ।
सर्व शास्त्र मयी गीता सर्व धर्म दया परः ।। (नरसिंह पुराण)

(९) भारत की सीमान्त पर अन्तिम ग्राम मिलम
दिनांक ९ जुलाई १९३१ (गुरुवार)

प्रातः ६ बजे प्रस्थान किया । मुन्स्यारी से मिलम पैंतीस मील दूर है । रास्ते में देहात या दुकान न होने से चार दिन की भोजन सामग्री साथ रखना उचित है । आधे मील की कठिन चढ़ाई हाँफते-हाँफते चढ़कर रीलकोट गाँव पहुँचे । इस समय समुद्री सतह से लगभग बारह हजार फीट से अधिक ऊँची धार पर खड़े-खड़े रहकर चारों तरफ निगाह डाली । तो वाह । कैसा अपूर्व दृश्य सामने आगे पीछे सर्वत्र दांये बांये सर्वत्र हिमगिरि के धवल शिखर चांदी की तरह चमकते थे । प्लेन्स में तो जुलाई माह में भी कभी लू चलती है । तब यहाँ बरफानी ठंडी हवा की लहरें आ रही थी ।

समुद्री सतह से दस बारह हजार फीट से अधिक ऊँचाई पर चलने से श्वास (दम) फूल जाता है । धीमे-धीमे एक एक कदम दम व दम चलते हुए एक डगलू बस थाय । प्रेम

प्रेमल ज्योति तारो पंथ उजाल।

गाते हुये बढ़ते चले।

गंगा के उस पार भोटिया ग्राम टोला दिखाई दिया। पत्थर के श्वेत खड़ीया मिट्टी से पोते हुये मकान वाला गांव जैसे पहाड़ की गोद में छोटे छोटे गोले रख दिये हों। जंगल वाला प्रदेश बीहड़ भयंकर घटाटोप जंगल का दृश्य यहाँ नहीं दिखाई देता। परन्तु इतनी ऊँचाई के इन पहाड़ों पर कोमल बारीक तृण घास से छाये हुये हरी हरी मखमल बिछाई हो ऐसे दिखाई दे रहे थे। ऊँचे गिरि श्रृगों पर श्वेत बर्फ तो कहीं बिरान, सूखे, कोरे पहाड़ देखाते हुये "बुर्फू" नामक गांव के पास पहुँचे।

जौहार नव युवक संघ के मंत्री तथा ग्रामीण जनता ने यात्री संघ का प्रेम भरा स्वागत किया। उन्होंने हमारे लिये खड़े किये तीन तम्बुओं में डेरा डाला। भोजन के बाद बुर्फू गाँव की कचहरी (चोपाल) में गये। सौराष्ट्र के गांवों में भी ऐसे मिलन स्थान मन्दिर या चौरा होते हैं। वैसे यहाँ उसें कचहरी कहते हैं। पाठशाला देखकर ग्राम परि-क्रमा करके आगे बढ़े। विलंजू गांव से होकर सीधे आगे चलते गये। गौरी गंगा के सामने पार गनाधार पांछू गांव दिखाई दिये। इन दो गांव के बीच में काले रंग का पानी का झरना बहता है। काली मिट्टी होने के कारण श्याम रंग था। क्योंकि नजदीक के बर्फानी ग्लेशियर पहाड़ से उद्गम स्थान रहा। आगे चलकर ऊँटाधूरा पहाड़ से निकलती गुम्खा नदी पार करके सामने पार गये। यह नदी गौरी में मिलती है। थोड़ा आगे बढ़े तो भारत की सीमा पर के आखिरी गांव मिलम में यात्रियों ने प्रवेश किया।

जीवन में प्रथम बार अल्मोड़ा से १०५ मील दूर १२७६० फीट की ऊँचाई पर हिमालय के बीच सीमान्त गांव के मकान में डेरा डाला।

बीलजू से मिलम आते गोरी किनारे रानीकोट नाम का छोटा सा किलानुमा कोट दीखता है। इस विषय पर एक दन्त कथा प्रचलित है।

एक रानी थी जिसने पुरुष वेश धारण करके लड़ाई में बहादुरी से दुश्मनों को हरा दिया था। एक सुबह रानी गौरी गंगा में मुँह धोने बैठी। स्त्रियों के स्वभाव अनुसार दो हाथ से मुँह धोते हुए शत्रु के गुप्तचर ने देख लिया। सेना में जाकर कह दिया। वह तो स्त्री है। फिर से लड़ाई होते रानी को मारकर विजय पा लिया। क्या स्त्री पुरुषों की ऐसी भिन्न-२ विशेष प्रकृति जन्म जाते हैं। सौराष्ट्र में इस तरह की अन्य बात प्रचलित है।

पति पत्नी ने व्रत लेकर बादशाह के वहाँ नौकरी कर रहे थे। बेगम भांप गई कि एक स्त्री है। जांच की। एक अंगीठी पर दूध गरम रखकर दोनों को बुलाकर बाते करने लगे। इतने में दूध में उफान आते बाहर निकलने लगा। एकदम एक व्यक्ति ने

खड़े होकर दूध के बर्तन को नीचे उतार लिया। बेगम ने कहा—यह स्त्री है जो भी हो स्त्री जाति की रानी झांसी की सी बहादुरी का गान करता हुआ वह किर्तिकोट हिमालय के बीच में अडिग खड़ा है।

गौरी ग्लेश्यर–शांडिल्य कुंड दिनांक १० जुलाई, शुक्रवार १९३१

"सांई लोग पुकार दे, कर कर लम्बे हाथ।
तू परमातम् देव है, तू त्रिलोकीनाथ॥"

गौरी गंगा में स्नान करने की हिम्मत करके प्रातः छः बजे गया। पहिले एक जबरदस्त पत्थर को आत्म पूजन के लिये अच्छी तरह जमा किया। इससे जो कसरत हुई उससे शरीर में गरमी आ गयी। फिर तो बस हिमालय के बर्फानी शीतल जल में बहादुरी से स्नान किया तो स्फूर्ति आ गई। नगाधिराज हिमांचल की गौरी गंगा के किनारे लगभग बारह हजार फीट की ऊँचाई पर आत्म पूजन करने का सद्भाग्य मिला। सरिता के सुमधुर नाद के साथ "अनाहद्ध्वनि" का अनुभव करते हुये "परम शान्त" बना। "मणि ते जाणे बीजा शंपुरमागे। राम बाण वाग्या होय ते जाणे।"

हिमालय से छोटे मोटे बर्फ के टुकड़े जैसे शुभ श्वेत स्फटिक के टुकड़े तैरते हुये गंगा में बह रहे थे। उन्हें किनारे पर लेकर फिर से गंगा में अर्पण करते हुये आनन्द आया।" तू ही जल तू ही हिम" "वेद तो हम बदे, श्रुति स्मृति शाखा दें, कनक कुंडल विषे भेद न होये"

हिम के स्फटिक से पार दर्शक टुकड़ों को शहद या गुड़ के साथ पेट में वैश्वानल अग्नि को अर्पण करने में आनन्द आया। जैसे मुनि अगस्त्य ने समुद्र को पेट में समाया। वैसे हम हिमालय को पेट में समर्पित करते हैं।

गौरी के ग्लेश्यर तक जाने का कार्यक्रम होने से केमरा, गोगल्स, दुर्बीन, लाठी तथा पेट पूजन अर्थे सुखाड़ी (गुड़ पापड़ी) साथ लेकर पंच परमेश्वर यानी पाँच व्यक्तियों ने प्रस्थान किया। अल्मोड़े से अस्सी मील दूर पिंडारी ग्लेश्यर देखने के लिये बहुत से भारतीय तथा विदेशी जाते हैं। वहाँ डाक बंगले तथा दूकान की सुविधा होने से सब वहाँ जाते हैं। पर "गौरी ग्लेश्यर" दूर है तथा रास्ता कठिन होने से कम साहसिक पहुँच पाते है। रास्ता चढ़ाई उतार वाला और उबड़ खाबड़ पत्थरीला था। सावधानी

से लगभग सवा मील चलने के बाद गौरी के उद्गम स्थान का दर्शन हुआ। गोरी के जन्म स्थान में क्या देखना है। दुर्गन्धमय खाद में से आम्रफल, सेव आदि फल उगते हैं। अशुभ के अन्त में शुभ ही है। रामायण में से मंथरा को निकाल देने से रामायण का रहस्य क्या रहे। पत्थर मिट्टी से ढँके हुये विशाल पहाड़ों के बीच में एक गुफा जैसे शंकरेद्वार में से गौरी की साधारण पतली धारा बहती है। जैसे श्वेत खांदक यानी बुग्दा में से रेलवे ट्रेन निकलती हो। गोरी के अनेक विध के दर्शन इस यात्रा में होते रहे। छोटी सी जीवन बच्ची के रूप में, बालिका के रूप में, कन्या के रूप में, मुग्धा के रूप में, मदमस्त युवति के रूप में तथा प्रौढ़ा के रूप में, और अन्त में काली गंगा में प्रेम से शान्त होती सखी के रूप में दर्शन करके अनेक प्रेरणा प्राप्त की है। बंदन हो उस पवित्र गौरी गंगा को।

हिमालय में से प्रवाहित गंगा बार्फानी पहाड़ों में से बहते झरणे, पर्वतों को निचोड़ती, बहती सरिताएँ, शान्त सौम्य रूप नृत्य करती देवियां मालूम देती है। पर स्नान करते दूसरे रूप में नाग नागिनी मालूम देती रही। अत्यन्त शीतल जल से काटती सर्पिनी है। झोला खाती घुमाव फिराव, लौटती, फिरती सुसवार करती सर्पिणी चली जा रही हैं। शिवशंकर, नगाधिराज–रूप महादेव ने अपने पार्श्वद सर्पो को भेजकर आज्ञा दी है—"जाओ जगत को अपना तांडव नृत्य दिखाते जाओ। और आध्यात्मिकता का संदेश दो।"

परन्तु सामने ऊँचे निगाह तो डालो। बड़े बड़े ऊँचे पर्वतों के शिखर बर्फ के कांरण श्वेत बने हैं। जैसे वृद्ध ऋषि मुनियों के शिर पर श्वेत केश।

केश तो श्वेत किये हैं, पर युवावों का सा उत्साह भरा पड़ा है। यानी उनके हृदय तो हरा भरा है। यानी ऊपर तो श्वेत वर्ण है। पर बीच में हरीघास रूप हरियाली छायी है।

ग्लेश्यर से शांडिल्य कुंड के दर्शन अर्थे आगे बढ़े। इतनी ऊँचाई पर हवा पतली होने के कारण श्वास लेने में कष्ट होता ही है। और फिर कठिन चढ़ाई? इसलिये बम्बई के सेठ जी तो वापस डेरे पर लौट गये। हम लोग आगे बढ़े। जहां तहां से बर्फान में से बहते झरणों के फौटे लेते रहे। आस पास बर्फानी, जबरदस्त खंदक गहरी खाइयां देखी। कहीं तो वर्फानी गुफायें कहीं पानी के कुंड, उसमें इधर उधर से बर्फ गिरता रहता है। साथ-साथ कंकड़, पत्थर, मिट्टी पड़ा करता था। यह देख कर दिल धड़कता रहता कि हम चल रहे हैं, वह रास्ता यानी जमीन ढ़ह न पड़े।

खतरनाक रास्ता तो अब आने लगा। तदन संकरा, और बारीक गोल पत्थर नर से तो बार-बार फिसल पड़ते थे। इसमें अगर चूके तो गये। मृत्यु और जीवन

के बीच एक ही इंच की दूरी 'जो एक में है वह दूसरे में नहीं है' तत्वज्ञानी इर्मसन की यह उक्ति सच्ची है। शांडिल्य कुंड के रास्ते में रंग बिरंगी पुष्प देखकर परमेश्वर की प्रकृति पर मुग्ध हो जाना पड़ता था। यहां तो हमने देखा, अनुभव किया। वह कागज पर उतारने की काव्य शक्ति या साहित्य शक्ति नहीं है। गूंगा, लाटा, काला ने शक्कर खाई या अच्छा स्वप्न आया तो शब्दों में कैसे वर्णन कर सके ?

'गिरा अनयन, नयन बिनु वाणी।'

समुद्री सतह से चौदह हजार फीट की ऊँचाई पर दो तीन फर्लांग के व्यास में निर्मल जल से भरा यह 'शांडिल्य कुंड' के सौन्दर्य के विषय में क्या कहना ? शांडिल्य ऋषि ने यहाँ तप किया है ऐसा कहा जाता है, शांडिल्य सूत्र के सृष्टा यही हैं न ? तय करने लायक प्रेरणादायक पवित्र भूमि है। जन्माष्टमी के दिन यहाँ पर भोटिया जनता का मेला लगता है। कुंड के जल में दीपक जलाकर जल में ज्योति को तैराते हैं यही पूजन हैं।

'अय श्वेत हिमालय धवल नगाधिराज ?

अय भारत माता का मुकुट, शिरताज, किरति मय हिमांचल तेरी पवित्र भूमि पर ऋषि-मुनियों ने तपस्या करके आत्मदर्शन करके आत्मानंद का अनुभव करते थे। श्रुति, स्मृति, वेद उपनिषद आदि के सृष्टा-दृष्टा ऐसे संत पवित्रात्मा की भूमि का दर्शन करके हर सहृदयी हिन्दु या मानव का हृदय हाथ-हाथ उछलकर भाव विभोर होकर आत्म-शान्ति प्राप्त करते हैं।

शांडिल्य कुंड के पास के कोट पर मुश्किल से चढ़कर दूर बर्फ से छाया हुआ 'सूरज कुंड' का दर्शन किया। जाने की उत्कट अभिलाषा पर सूर्य अस्ता चल जा रहा था। संध्या नजदीक थी। अतः कोट पर के वर्ष में विसर्पण करते हुये नीचे उतरे। कुंड में स्नान करके आत्म पूजन किया। सुखड़ी से पेट पूजन करके शीघ्रता से चलकर यथा कुटीरे सकुशल पहुँच गये।

'स्थावराणाम् हिमालय' की महत्ता के विचार में 'परमशान्त'

'मिलम' दिनांक ११ जुलाई १९३१

हिमालय गौरी गंगा किनारे प्रातः काल स्नान किया। पूजा के पत्थर पर बैठते ही गंगा के प्रवाह की तरह विचार प्रवाह चलने लगा।

'अन बोलत मेरी ब्यायी जानत' । 'अपना नाम जपाओ ।

मनुष्य जीवन में द्वंद अनिवार्य है । द्वंद यानी दुनियां । सुख-दुख, शान्ति-अशान्ति, उन्नति-अवन्नति, शीत-उष्ण आदि । मन स्थिति किसी समय अधिक श्रद्धान्वित और सात्विक बन जाती है । अवधूत की मस्ती और खुमारी चढ़ती हैं । किसी समय दीन भाव या नम्रता—'मो सम कौन कुटिल खल कामी' 'निर्बल के बल राम' 'जीवन यानी मंथन संघर्ष' Life is straggle, हिमालय के बीच भारत और तिब्बत की सीमा पर अंतिम ग्राम मिलम है । अल्मोड़ा से पैदल रास्ते एक सौ पांच मील दूर १२७६० फीट की ऊँचाई पर होने से अच्छा है कि कैलास मान सरोवर के यात्री यहाँ हफ्ता दो हफ्ता रह कर ठण्डे हवा पानी की आदत डालने और आगे बर्फानी प्रदेश हिमालय की यात्रा को आसान बनाने यहाँ रहते हैं । जिससे पन्द्रह बीस हजार फीट के हिमांचल के हवा पानी को सहन करने में सुविधा हो ।

मिलम गांव में लगभग तीन चार सौ (उस समय) मकान हैं । इस प्रदेश में यह बड़ा गांव गिना जाता है । मकान की छत पर पतली वाली पत्थर की स्लेट बिछाई जाती है, ताकि बर्फ के बोझ से छत टिकी रहे । बर्फानी ठंड से बचने के लिए खिड़की तथा दरवाजे बहुत ही छोटे बनाते हैं । गाँव के प्रशाण में (अनुपात) गलियों की भरमार है । जैसे काशी की गालियाँ । सारे दिन भोटिया भाई हाथ में कतुवा लेकर चलते फिरते घूमते उठते, बैठते ऊन कातते रहते हैं । चाहे घराट (पनचक्की) पर गेहूँ अनाज वगैरह पीसने जावे, वहाँ बैठे-बैठे भी कताई सतत् चलती रहती है । जंगल में जानवर चराने या पड़ोस में या दूर के गाँव में किसी से मिलने, जाना हो 'कताई-यज्ञ' चलता रहता है । धर के आंगन में महिलायें कमर पर ऊनी शाल फस कर बिनाई कार्य करती रहती हैं । वह छोटा सा करघा पीठ पर बाँधकर प्रयोग किया जाता है, इसे पीठिया चान कहा जाता है । उस प्रदेश में बिनाई कार्य महिलाए करती हैं, पुरुष नहीं; पर कताई कार्य पुरुष, महिला बालक सभी करते हैं । सौराष्ट्र में कताई कार्य पानी चर्खा चलाना स्त्रियों का काम माना जाता है, वैसे यहाँ बिनाई स्त्रियों का स्वधर्म माना जाता है । पर अब इस मनो वृत्ति में क्रान्तिकारी बदलाव होता जा रहा है ।

सारे भारत में कताई, बिनाई, गृह उद्योग अदृश्य होता जा रहा है । तब इस भोट प्रदेश की जनता हजारों फीट की ऊँचाई के पहाड़ चढ़ते उतरते हाथ में कतुए से ऊन कातते हुए भारत माता की पूजा अनजाने में भी करते रहते हैं । राष्ट्र-पिता बापू की पवित्र भावना 'सूत के तंतु से स्वराज्य' यहाँ सत्य सिद्ध है ।

पुरुषों की पोशाक में गरम पायजामा, ऊपर अंगरखा (अचकन जैसा) सिर पर साफा पगड़ी, कमर पर कमर बन्द—गरम या सूती कपड़े से लपेट लेते

हैं। टंढ में कमर कस कर बाँधने से गरम रखना आश्यक है यानि कमर कसकर हिमाचल की शीतलता का सामना करने को तैयार रहते हैं। स्त्रिया भी गरम कपड़े से कमर बांध लेती हैं। स्त्रियाँ—पोशक में–मारवाड़ी राजस्थानी की तरह घेरदार घाघरा, ऊपर गरम चादर यानी कम्बल कस करे लपेट लेती हैं पूरी आस्तीन का आंगड़ा (ब्लाउज) पहनती हैं। गहने अधिकांश तो चांदी के होते हैं, पर काला, लाल या हरे रंग के मोती मूंगा की माला के साथ गले में होती है। सोने का गहना कम दिखाई देता है। घर में कांसे के बर्तन भी होते हैं। इसके अलावा नमकीन चाय पीने के लिए तिब्बती ढंग के लकड़ी के कटोरे के भीतर चांदी मढ़ी रहती है। बर्फानी प्रदेश की भूमि में ढाल पर लम्बे चौड़े खेत हरियाली से लहराते हुए मनोहर मालूम देते हैं। उगल (कूटू), आलू फाफर, सरसों आदि की मार्छा (चौवाई पैदावार ही फसल होती है। समुद्री सतह से इतनी ऊँचाई पर गाँव में स्वच्छता का अभाव होते हुए भी मक्खी, मच्छर, पिस्सू खटमल बिलकुल नहीं होते। जिदा रह ही नहीं सकते। मनुष्य या जानवर मर जाने पर महीनों तक मुरदा सड़ता नहीं है, लगभग रेफ्रीजरेटर की तरह रक्षित रहता है। यह तो देव-भूमि।

गोरी गंगा और गुम्खा के बीच गांव बसा होने के कारण मैदान खूब लम्बा चौड़ा हैं। पहाड़ों में ऐसी मैदानी समतल भूमि बहुत कम होती है। पूज्य बापू सन् २९ में अल्मोड़ा आये तब जनता की विशाल सभा कहां हो–यह समस्या खड़ी थी। अन्त में दूर लक्षेश्वर में सभा करनी पड़ी थी।

साधारणतः यहाँ वर्षा इतनी ऊँचाई पर बहुत ही कम होती है। कहा जाता है, कि यहां से यानी हिमालय से मानसून–वर्षा ऋतु वापस लौटती है। वर्पा 'शबनम' जैसी होती है।

क्रिश्चियन मिशिनरियों ने काफी बरस पहिले इस प्रदेश में काम शुरू किया था। लंदन मिशन और अमेरिकन मिशन ने हास्पिटल-स्कूल तथा बोमार कुष्ठ रोगियों की सेवा करके जनता को आकर्षित करके कुछ को क्रिश्चयन बना लिया। मिशन की तरफ से मिस टर्नर, मिस बडन, मिस सुलिवान आदि महिलाओं ने साहस के साथ वर्षों तक प्रचार किया। यह 'मिशिनरी स्पिरिट' प्रशंसनीय है, परन्तु इनका उद्देश्य इसाई संख्या बढ़ाने का तथा इनके पास Rice, Price & wife—अनाज, धन, स्त्री–देने का साधन भी हैं– परन्तु अब अधिक लोग आकर्षित नहीं होते।

दिनांक १२ जुलाय १९३१ रविवार

सभा का कार्यक्रम आज यहां रखा गया था, पर झब्बू (बैल) में रोग फैलने से वैटरनिटी डाक्टर इंजेक्शन देने के लिए आये थे । अतः स्थगित रखा गया ।

भोट प्रदेश भारत की उत्तर सीमा पर है । अल्मोड़ा जिले में भोटियों की लगभग तीन जातियां हैं—जोहार, दारमा और ब्यांस । जोहार प्रदेश तेजम से मीलम तक माना जाता है । यहां लोग शिक्षित और सभ्य माने जाते हैं । आबादी भी लगभग पच्चीस हजार की है । महिलाओं में पर्दे का रिवाज है । पर इसके सुधार की मनोवृत्ति वाले समाजसुधारक भी हैं । यह हिन्दू धर्म को मानते हैं, पर लग्न (विवाह) विधि अजीब है । मांसाहारी अधिकांश हैं । शराब का उपयोग काफी करते हैं । शराब बनाने का लाइसेन्स देने का सरकार ने रखा नहीं है, क्योंकि घर-घर में जौ, चावल, मडुए, आदि से घरगथु शराब बनाई जाती है, उसे 'लाण' कहा जाता है ।

प्रजा के चेहरे मंगोलियन से मिलते जुलते हैं । नाक कुछ नोंकदार कम है चेहरा चौड़ा होता है । वर्ण गौर अधिकांश है । ठंडी आब हवा के कारण शरीर मजबूत और स्फूर्तिवान है । सतत मेहनत के अभ्यासी हैं । तिब्बत प्रदेश में प्रति वर्ष जाने के कारण हिम्मतवान होते हैं ।

नदी किनारे से जल ले आती महिलायें घड़े को रस्सी से बांधकर पीठ पर रख कर रस्सी को सिर पर लपेट लेती हैं । पानी अतिशय शीतल होने से हाथ खुला (खाली) रहें, यह चढ़ाई में आवश्यक है । दंत-कथा है कि "वसिष्ठ अयोध्या में" थे, तब तो त्रिकाल स्नान करके संध्या करते थे । परन्तु वे हिमालय में—पहुँच कर एक बार स्नान, करते थे कैलास मानसरोवर पहुँचते तो अंजलि में जल भर "ॐ अपवित्र-पवित्रं है, से विधि सम्पन्न होती थी । देश, काल का महत्व है ।"

(१२) हिमालय में राष्ट्रध्वज, सोमवार दिनांक १३ जुलाई १९३१

प्रातः स्नान, प्रार्थना पूजन आदि से, निवृत्त होकर तैयार हुए । ठीक नौ बजे "स्वतंत्र भारत की जय" "महात्मा गांधी की जय" के जय-घोष से चारों तरफ के

हिममय पहाड़ गूँज उठे। एक लम्बे ऊँचे बांस पर "तिरंगा राष्ट्रध्वज" लहराते हुए जोहारी नवयुवक, बालक, वृद्ध काफी संख्या में राष्ट्र-गीत गाते हुए यात्रा—कुटीर के पास के मैदान में आये। लगभग बारह हजार फीट की ऊँचाई पर श्वेत हिमालय-बर्फानी धवल गिरिश्रृङ्गों के बीच सीमान्त के ग्राम में राष्ट्र-ध्वज लहराता हुआ देखने में तथा स्वतंत्रता जय घोष, सुनते हुए मेरा हृदय प्रफुल्लित हुआ। हिमालय के उच्च शिखरों पर हिमाचल के शिखर पर राष्ट्र-ध्वज लहराते हुए ही दिल भी लहराने लगा। सन् ३० मई २७ को गोरखा मिलिटरी से डंडे खाते हुए हड्डियां टूटने पर भी बुलंद आवाज से पुकारते रहे—"इसकी शान न जाने पावे, चाहे जान भले ही जावे। अमर रहे राष्ट्र-ध्वज।"—स्वागत हुआ, जुलूस व्यवस्थित हुआ। फोटो लिये गये। जनता के निष्काम प्रेम से हृदय हर्षित होकर झुक गया। राष्ट्र गीत गाते हुए—जयघोष की गर्जना करते हुए, राष्ट्र-ध्वज लहराते हुए जुलूस धीरे धीरे सभा-स्थल पर पहुँचा। भोट प्रजा स्वदेशी वस्त्रों की पूजक है। स्वयं के कते व बिने वस्त्रों का प्रयोग करते हैं। हाथ के कते व बिने हुए सुन्दर रंग-बिरंगी डिजाइन के गलीचों से सभा स्थान सुशोभित था। मंगलाचरण बाद सभापति की आज्ञा से बोलने खड़ा हुआ।—("मूकं करोति वाचालं" प्रार्थना मनो-मन की) "प्यारे जोहारी बहन व भाइयों! कैलास-यात्रा के निमित्त से भिलम ग्राम में आपके दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। गत वर्ष इसी माह में राष्ट्र-ध्वज सत्याग्रह में गोरखा मिलिटरी के डंडे से हड्डी टूटने पर भीष्म शैय्या पर पड़ा था। करवट भी नहीं बदल पाता था। उस समय कैलासवास होते बच गये थे, और आज कैलास यात्रा के लिए चल पड़ा हूँ। "पंगु लंघयते गिरीम्" [इसके बाद इस प्रवेश की पांच मुख्य समस्या पर अंतरात्मा की प्रेरणा से फड़कती भाषा में प्रवचन दिया।]—

१. बाल-विवाह—बाल-विवाह करने से बाल विधवा होती है। उनका अपहरण करने से अदालत बाजी होती है और आपस में विद्वेष से झगड़े खड़े होते हैं। शारदा बिल-अनुसार बड़ी उम्र में कन्याओं का विवाह होना चाहिए।

२. कन्या विक्रय—कन्या बेच कर उस पैसे का उपयोग करने का अर्थ है—कन्या का खून चूसना। यह अनुचित रिवाज बन्द करना चाहिए।

३. शराब—श्रीकृष्ण के यादव वंशी सुरा पान से आपस में कट मरे और निर्वंश हुए। शराब से मनुष्य निर्वीर्य और अशक्त बन जाता है। शराब पर पिकेटिंग किया जाता है। स्वराज्य में शराब बन्दी होगी। दुःख की बात है कि स्वराज्य के बाद शराब से सरकार अधिक आमदनी करती है। अतः शराब का सदंतर त्याग करने में कल्याण है। वैसे भी किसी तरह का नशा अच्छा नहीं है।

४. कैटल रेवेन्यू—जोहार के सिवाय अन्यत्र मोट प्रदेश में बकरी खच्चर झब्बु आदि पर कैटल रेवेन्यू नहीं लिया जाता तो यहाँ जानवर चराई पर टैक्स क्यों है ? प्रथम एक शिष्ट मंडल भेजकर सरकार से मिलें। सफलता न मिलने पर संगठन किया जावे। शक्ति संचय होने पर "सत्यग्रह शस्त्र है" इसलिए अन्याय के प्रति लड़ने की शक्ति प्राप्त करना आवश्यक है।

५. संगठन—ऊन के एक एक रेशे का संगठन करने से सूत तैयार होता है। अनेक सूत मिलाकर मजबूत रस्सी बनती है, जिससे मस्त जानवर को वश में किया जाता है। जोहार में जंगपांगी, पांगती, रावत, धर्मसक्तू, नितवा, पछवाल (पंचपाल), बुर्फूवाल, टोलिया, मर्तोलिआ, बिल्जुपाल, निहखवा आदि अलग फौम के संगठन से स्वतन्त्रता सिद्ध होगी।

सत्य, अहिंसा, स्वदेशी आदि पर भी प्रवचन हुए। अन्य चार-पाँच राष्ट्रीय कार्यकर्ता भी बोले। सभापति ने उपसंहार करके सभा विसर्जन की।

शाम को पाँच बजे पांच मील दूर बुर्फु गांव में राष्ट्र-ध्वज लहराते हुए, राष्ट्रीय गान गाते हुए सब पहुँचे। ग्रामीण जनता ने स्वागत किया। कचहरी में डेरा डाला, हिमांचल के अन्तर्भाग में स्वतन्त्रता का सन्देश देते रहे।

भाषण देना हमारा पेशा नहीं है और न वक्तव्य कला का ज्ञान, पर प्रवाह पतित कर्त्तव्य अर्थें ईश्वरीय प्रेरणानुसार अन्तरात्मा की भावना त्रूटे-फूटे (टूटे-फूटे) शब्दों में प्रकट करते रहने का स्वधर्म माना है। वैसे व्याकरण की दृष्टि से हिन्दी भाषा का ज्ञान तो आज भी कम है; पर दिल की आग, हृदय की भावना प्रकट करने की शक्ति है। ऐसा कहा जा सकता है। सच्ची वक्तव्य कला भी यही है कि आत्मा के अन्दर से पवित्र आदर्श के हृदयस्पर्शी शब्द वाणी द्वारा प्रकट हो। लेखन शैली भी वही उत्तम है जो सत्य अनुभव आत्मा से प्रकट हो। गुजरात में तो भाषण देने के बहुत कम अवसर मिले हैं, परन्तु पर्वतीय प्रदेश हिमालय में राजनीति के क्षेत्र में उलझना पड़ा। इसी कारण सारे जिले में सैकड़ों प्रवचन देना पड़ा है और अब भी दिया जा रहा है। मेरा अनुभव है कि अंतरात्मा की गहराई से जो वाणी प्रवाहित होती है, जो स्वयं के हृदय को स्पर्श करती हो वैसी वाणी—शब्द-शक्ति का असर श्रोता जन पर भी होता है। शारीरिक, वाचिक, मानसिक पवित्रता के कारण आत्मा का भाव प्रकट हो—वही श्रेष्ठ वक्तव्य कला और लेखन शैली है नहीं तो शराबबाजी, जुआबाजी वैसे ही लेक्चरबाजी। प्रथम विचार फिर आचार अन्त में प्रचार यानी जिन बातों का हम स्वयं पालन करने के लिये प्रयत्नशील हों वही कहना अच्छा है नहीं तो मौन रहने में ही सेवा है। "जननी जन्म-भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।"

ॐ शान्तिः (२४-९-८३), सर्वोदय कुटीर, अल्मोड़ा २४-९-८३

(१३) हिममयी भूमि में राष्ट्रीय सभा की धूम

दिनांक १४ जुलाई, ३१ मंगलवार

बुर्फू की कचहरी में श्री दुर्गासिंह रावत तथा मेरे अलावा श्री नरसिंह जंगपांगी, दो तिब्बती (हुणिया) आढ़ती भी सोये हुए थे। उनकी राक्षसी श्वांस की आवाज तथा लबादा (बंक्टवु) पहनने की आवाज से निद्रा टूटी।

गोरी किनारे एक स्वच्छ झरने में स्नान किया। गोरी का जल सफेद मिट्टीमय होते हुए भी वह पानी पिया जाता है। अन्यत्र मिट्टी वाला पानी पीने से शायद बीमारी हो। पर यह तो देव-भूमि हिमालय के हवा पानी की बात ही क्या ?

प्रार्थना-पूजन आदि से निवृत्त हुए। इतने में जोहारी जनता राष्ट्र ध्वजा लिये, राष्ट्रीय गान गाते, जय-घोष से पहाड़ों को गुंजाते हुए, ढोल नगाड़े बजाते हुए क्रान्ति करते हुए जुलूस के रूप में पहुँचे। पुष्पहार से स्वागत किया और जूलूस के साथ बुर्फू गाँव के पुस्तकालय सभा स्थल पर पहुँचे।

सभा में कल की तरह अंतःस्फुरण से प्रवचन किया। मान-पत्र भी मिला, पर सच्चा मान-पत्र तो यानी पुरस्कार तो कर्त्तव्यनिष्ठता के साथ निष्काम कर्म योग के द्वारा प्राप्त आत्मसंतोष है।

सभा विसर्जन के बाद भोजन करके आगे बढ़े। तीन मील का कठिन रास्ता 'कृष्ण-कृष्ण' कहते हुए 'काट टोला' गाँव में पहुँचे। पगदंडी (डंडी) इतनी संकरी कि पर्वत के पेट में अंगूठा टिकाकर चलना पड़ता था। एक इंच चुके तो गोरी गंगा के गर्भ में गुप्त हो जायें।

'जीवन और मृत्यु की कितनी निकटता है'—यह रहस्य यहीं समझा। निंद्रा और जागृति जैसे रुपये की दो बाजू को तरह जुड़ा हुआ है। सामने पर्वत के शिखर पर मर्तोली गाँव दिखाई पड़ा। दूरबीन से अन्य दृश्य भी देखे और नंदादेवी, परशुराम आदि हिमालय के गगन चुंबित, धवल गिरि शिखरों के दिव्य दर्शन करके प्रेरणा प्राप्त की।

"स्पोषरणामहिमालयं" टोला गांव की सीमा में आते ही सुनाई दिया—स्वाधीन बनो, स्वाधीन बनो, सिखला दिया गांधी बाबा ने। "इक लहर चला दी भारत में इन

गांधी टोपी वालों ने।" "सितमगर की हस्ती मिटानी पड़ेगी।" वगैरह राष्ट्र गीत जोहारी जनता के मुख से ग्यारह बारह हजार फीट की ऊँचाई के हिमालय पहाड़ों में सुनते हुए दिल में अपूर्व देश-भक्ति के भाव उदय होते रहे।

"आसेतु हिमालय"—द्वारिका से लेकर जगन्नाथपुरी तक काश्मीर से कन्या-कुमारी तक स्वतन्त्रता की लहर लहराती रही। मानो सतयुग की कहानी ? पर प्रत्यक्ष देखी।

सभा स्थान पर चांदनी बंधी हुई थी। मण्डप सजा हुआ था। कमानदार दरवाजे पर स्वागतम् सुशोभित था। सभापति का चुनाव, वक्ताओं के भाषण के बाद हमारा प्रवचन वगैरह विधि पुनः शुरू हुए। विषय वही 'पंचशील'। पर दूसरे ढंग से सुनाये। 'जोहार नवयुवक संघ' के मंत्री श्री जगतसिंह पांगतो ने कन्या विक्रय नहीं करने के प्रतीज्ञा पत्र पर काफी संख्या में हस्ताक्षर कराये। हाल में लग्न प्रसंग पर इस गाँव वालों ने रिवाज के अनुसार शराब का उपयोग नहीं किया।—यह एक कल्याणकारी बहादुरी भरी बात – प्रशंसनीय रही। सभा विसर्जन के बाद नाश्ता पानी से निबृत्त होकर शाम को बुर्फु गाँव में पहुँच गये।

प्रार्थना करने के लिए एकान्त में एक ऊँचे शिखर पर चढ़कर बैठा। नगाधि-राज हिमालय के श्रृङ्ग पर सूर्यास्त के सुनहरी किरण पड़ने से भगवाधारी तपस्वी महात्माओं के से समाचिरस्थ से शान्त स्वरूप के दर्शन हुए। खेतों में हरे पीले पौधों से शोभती रंगोली का अपूर्व दृश्य था। उन खेतों में यहाँ-वहाँ-जहाँ घूमती काम करती स्त्रियाँ जैसे चोपड़ की जीवंत सोगठियां (गोष्टी) न हों ? एक पहाड़ पर से छोटे-छोटे बालक विसर्पण करते दिखाई दिये। मानो वे भविष्य में गगन चुम्बित पहाड़ों को पार करने का साहसिक अभ्यास अभी से कर रहे हैं।

चारों तरफ के पर्वतों पर क्यारी पर क्यारी बनाकर कुर्सियाँ जमा दी हैं। उन कुर्सियों पर वरुण, अरुण, आदित्य आदि विराजे हुए हैं। नीचे मैदान में हरे-पीले रंग के गलीचे, मखमल की दरी यानी घास बिछी पड़ी है। इस कौतुकालय में गोरी गंगा विचित्र नखरे से नृत्य करती हुई बहती जा रही है और कृतज्ञतासूचक कलकल नाद करती हुई मन को मोह ले रही है। धन्य है यह दिव्य दर्शन ? प्रार्थना के समय इन सारे प्राकृतिक दृश्यों को देख कर परम शान्त बन कर सात्त्विक आत्मानंद का अनुभव होता है। जीवन धन्य मालूम देता है। सर्वत्र परमात्मा की लीला का विलास दिखाई देता हैं। सचमुच कुदरत का अवलोकन करना—यह भी परमात्मा पूजन है। 'जहाँ-जहाँ नजर मेरी ठहरे, वादी भरी तहाँ आपको—"अखिल विश्व माँ एक तू श्री हरि" "सर्व खल्विदं ब्रह्म" "परमात्मा सर्वत्र है सर्व का है।"

दिनांक १५ जुलाई, बुधवार १९३१

प्रातः विधि से निवृत्त होकर नाश्ता करके मरतोली गाँव जाने के लिए प्रस्थान किया। महीन-महीन 'शबनम' जैसी वर्षा पड़ रही थी। बुर्फु पुल पार करके गोरी के दाहिने किनारे से सीधे चढ़े। थोड़ी दूर में मर्तोली झरणा मिला। 'नंदा-देवी' भारत में सर्वोच्च हिमगिरि शृङ्ग के (लगभग पच्चीस हजार फीट) एक तरफ मर्तोली झरणा बहता है, तो दूसरी तरफ पिंडारी में ग्लेशियर से पिंडर नदी निकलती है। चढ़ाई पूरी होते मर्तोली मैदान, में विश्व-सृष्टि का सौन्दर्य लेते हुए आराम करने के लिये खड़े हुए। इतने में ढोल, नगाड़े, तुरई (तुरही), शहनाई बजाते हुए, जय घोष करते हुए जनता का जुलूस पहुँचा। स्वागत विधि के बाद राष्ट्र-गीत गाते हुए सभा-स्थल पर पहुँचे। इस तरह जुलूस में जाते, शर्मीली वधू की तरह हमारी हालत होती रही। कर्त्तव्य अर्थे जनता के निष्काम प्रेम के आगे हृदय भाव विभोर हो जाता था।

इस गाँव के पुरुषवर्ग अभी तिब्बत नहीं गये थे, अतः सभा में उपस्थिति काफी संख्या में थी। ओजस्वी, तेजस्वी फड़कती वाणी में हृदय के उद्‌गार प्रकट किये। सभा विसर्जन के बाद भोजन करके आगे प्रस्थान किया।

कठिन चढ़ाई चढ़कर आने से अब उतार में तो आफ़त आने लगी। चलते हुए थकावट तथा प्यास भी खूब लगती रही। सामने का प्रचंड जबर्दस्त जल-प्रपात धों-धों करता हुआ, जैसे—सिंह गरजता है, ऊँचे से पड़ रहा था। नीचे हरी-हरी घास से जमीन मलमल सी बनी हुई थी। विविध रंग के मनहर पुष्प मन को मोह रहे थे। 'माया' गाँव के पास आते हुए दलदल वाली जमीन मिली। अगर हम कीचड़ में फँस गये तो निकलने की पूरी मुश्केली (मुश्किल) पर सावधानी के साथ चलते हुए गनाघर गाँव में पहुँचे। गाँव की गलियाँ झाड़झूड़ कर स्वच्छता का उत्तम प्रदर्शन किया था। "शेरीवणावी सज करूँ हरि आवोने।"

कचहरी—यानी लखशौ में सभा का कार्य पूरा करके 'पांछु' (पांचु) गाँव पहुँचे। अंधेरा हो चुका था, पर कार्यक्रम कैसे बदला जावे ?

अंतः स्फुरण से ओजस्वी भाषण देते हुए रात को साढ़े दस बजे सभा समाप्त हुई। इस सभा में स्त्रियों की संख्या अच्छी थी। रात बारह बजे भोजन करके निवृत्त हुए। हिममय जोहार के इतिहास में पहली बार इतनी राष्ट्रीय सभा का आयोजन हुआ।

लगभग पच्चीस मील का पर्यटन करके अलग-अलग गाँवों में अनेक सभा में स्वराज्य और स्वतंत्रता का सन्देश का प्रचार करने का सद्भाग्य प्राप्त हुआ। परिव्राजक स्वामी सत्यदेव जी ने दो-एक गाँव में प्रवचन किया था। श्री नारण जी पुरुषोत्तम सांगाणी ने (जामनगर-सौराष्ट्र) ने मात्र भिलम गाँव में, सनातन-धर्म पर प्रवचन दिया था। परन्तु, जोहार नवयुवक संघ के मन्त्रियों तथा उत्साही राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता प्रेमी मित्रों के आग्रहवश योग्यता न होने पर भी भारतमाता के पूजन अर्थे पवित्र कर्त्तव्य समझ कर कटिबद्ध हुए थे। इस तरह हिमालय के अन्तिम ग्रामों में राष्ट्रीय प्रचार करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। निष्काम कर्मयोग द्वारा होने वाला आत्म संतोष सर्वोच्च पुरस्कार है।

"स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतोऽभयात्"

ॐ शान्ति

सर्वोदय कुटीर अल्मोड़ा ६ –८–८३

१४. जोहार की ज्योति—दिनांक १६ जुलाई ३१ गुरुवार

प्रातःकाल भिलम के मार्ग के प्रति प्रस्थान किया। गोरी के दाँये किनारे पगडंडी पर चल रहे थे। अन्त में गोरी पर झुके हुए खतरनाक पुल परमात्मा का स्मरण करते हुए पार किया। क्योंकि नीचे के जोशबन्ध बहते हुए पानी के प्रवाह को देखते हुए चक्कर आने लगते थे, पर पार उतर गये यही ईश्वर कृपा।

स्नान, प्रार्थना, पूजन के बाद भोजन फिर वही भयानक पुल के पास। भय को भगा दिया, फोटो लिया। भिलम पाठशाला में विद्यार्थियों का फोटो लिया।

जोहार की जनता उन्नति करने के लिए प्रयत्नशील है। "जोहार सोसायटी", "जोहार सभा", "जोहार नवयुवक संघ" आदि संस्थाएँ आशाप्रद कार्य कर रहे हैं। अपनी कमजोरियों का भान है। दोषों का भान होना, स्वतन्त्रता का ज्ञान होना जागृति का चिन्ह है। उन्नतिशील के लिए क्रान्ति आवश्यक है। क्रान्ति होने पर अनेक भ्रान्ति दूर होती हैं। ओपरेशन बिना, सर्जरी बिना भ्रांति यानि अज्ञान कैसे मिटे? ज्ञान होते ही प्रकाश जगमगाता है।

मनुष्य जीवन में जैसे क्रान्ति, भ्रान्ति शान्ति का क्रमानुसार अनुभव होता है। उसी तरह आरोह, अवरोह, उन्नति, अवनति भी अनिवार्य है। नागाधिराज हिमालय

का दूर से दर्शन होता है, पर यहाँ पहुँचने के पहले दुर्गम पहाड़ों, विकट वन, बीहड़ जंगल भयानक नदियाँ, चढ़ाई-उतार पार करने के बाद ही लक्ष्य स्थान पर पहुँचा जाता है। मनुष्य जीवन में भी पवित्र आदर्श प्रति पहुँचने के पहले आरोहण, अवरोहण, उन्नति, अवनति, हार-जीत, सुख-दुःख आदि अनेक द्वन्द प्रसार करना पड़ता है। यह सब द्वन्द एक ही अन्तर जंजीर की कड़ियाँ हैं। "इव सूत्रे मणिगणा इदं" माला के सूत्र में मणि-काओं की तरह है।

गोरी गंगा पर पुरातन पूजन के पत्थर पर शाम को बैठ कर मस्ती में भजन ललकारने लगा। साढ़े तीन कोटि रोम खड़े हो गये। पुलकित होकर रोमांचित हुए। गंगा मैया की ध्वनिं के साथ तालबद्ध प्रणवमंत्र ॐ ॐ ॐ का गुँजन एक सुर से चलता रहा। जैसे सोऽह्म् की अनाहत ध्वनि। इस तरह की निष्काम प्रार्थना में प्राण है। आत्मबल बढ़ता है—आत्मशुद्धि होती है। उस समय मन बुद्धि सात्विक आनन्द से ओत प्रोत होकर लय हो जाते हैं। यही "सविकल्प समाधि" "यतो वाचो निवर्तन्ते।" मौन वर्णनातीत स्थिति। "गिरा अनयन नयन बिनु बानी" आत्म शान्ति चाहे एक ही क्षण की हो उसके आगे त्रिलोक का सुख तुच्छ है। दुनिया परवाह नहीं करती—ऐसा कहने वाला कंगाल है। ऐसी अभिलाषा भी क्यों रखनी चाहिए? सुख की इच्छा किस लिए रखनी चाहिए कि जिससे दुःख का अनुभव करना पड़े"।

हारिये न हिम्मत बिसारिये न राम।
जाही विधि राखे राम ताहि विधि रहिए ॥

दिनांक १७ जुलाई शुक्रवार ३१

प्रातः गंगा स्नान करते हुए ग्लेशियर से तैरते हुए छोटे-मोटे वर्फ के टुकड़े को एकत्रित करने में और फिर उन्हें गंगा में ही अर्पण करने में और आनन्द आया। "तेरा तुझको अर्पण करने क्या लागे मोर" एक ही परमात्मा का सर्वत्र विलास है। हिमालय के प्रति इतना आकर्षण क्यों होगा? "स्थावराणां हिमालयः"—ईश्वर की दिव्य विभूति जोहार की ज्योति में पवित्र वातावरण में—परमात्मा की झांकी होती है। मनुष्य की जीवन यात्रा—संसार यात्रा—कैलाश यात्रा—इन सबमें विविध अनुभव होता है।

"उत्तिष्ठत! जाग्रत!! प्राप्यवरान्निबोधत ॥"

(१५) कैलास की कठिन यात्रा को प्रस्थान

दिनांक १८ जुलाई ३१, शनिवार

गोरी का जल रोज की अपेक्षा आज अधिक शीतल लगा। क्योंकि कल रात वर्षा हुई थी। तब भी शूरवीर बनकर स्नान किया "काँटे से काँटा निकाला जावे।" इस वेदान्त वाक्य अनुसार बर्फ के टुकड़ों को खाकर ठण्डी हटाने का प्रयत्न किया।

मिलम में कुल दस दिन रहे। एक दिन शांडिल्य कुण्ड तथा ग्लेशियर यात्रा में तथा अनेक गाँवों में राष्ट्रीय सभा में चार दिन व्यतीत हुए। बाकी पाँच दिन कैलास यात्रा की डायरी लिखने में गये। "दैनन्दिनी डायरी वैसे वर्षो से यानी सन् २१ से लिखते आये हैं।" पर यह अविस्मरणीय यात्रा को विशेष रूप से रोजाना तिब्बत में भी नियमित लिखते रहे। संक्षेप में दैनिक डायरी लिखी। उस पर से जहाँ पड़ाव पड़ता था—एक दो दिन का मुकाम होता वहाँ विस्तृत संस्मसण लिखे जाते रहे।

उसी पर से गुजराती में वर्षो बाद अधिक विस्तृत वर्णन लिखते रहे और हिन्दी में भी सन् ६४ में लिखते रहे। आज फिर एक प्रेमी मित्र के आग्रहवश लिखा जा रहा है। लिखते समय आँख के सामने यात्रा वर्णन तादृश खड़ा हो जाता है, हृदय भाव विभोर हो जाता है। बार-बार लिखते या पढ़ते हुए सात्त्विक और आध्यात्मिक भावना का जो प्रादुर्भाव यात्रा करते हुए होता था, वही आज भी होता है। भावनाओं का प्रवाह इतनी जोरों से बहता रहता है कि बहुत सी भावना एक से अधिक बार पिष्ट पेषण जैसे लिखी भी जाती है। यह मेरी कमजोरी या बरबसता मानी जाये। पर मुझे तो हर समय अपनी आत्मा के साथ बातें करने में आनन्द आता है, वह अन्य को कैसे बताऊँ? मेरे अपने ही आत्म-संतोष के खातिर लिखा जाता है। "निमित्त मात्र भव सव्यसाचिन्।" इतना लिखने पर भी हृदय के भाव स्पष्ट नहीं कर पाता। यह अपूर्णता है ही। "दैनन्दिनी = डायरी = पुराण की यहाँ समाप्ति।"

कैलास मानसरोवर यात्रा भारत भर में सबसे अधिक कठिन यात्रा मानी जाती है। (विशेष करके जब हमने सन् १९३१ में की) वैसे तो मनुष्य जीवन ही हर समय खतरनाक परिस्थिति में से पसार होता रहता है। परन्तु यहाँ तो काल की जाल से,

मृत्यु के मुख से हर समय सावधान रहना पड़ता है। कैलास-यात्रा करते हुए कैलाशवास होने के अनेक प्रसंग आते रहते हैं।

१ —यात्रा में कहीं तो रास्ता इतनी संकरी पगडंडी इतनी छोटी कि एक पैर भी मुश्केली से टिकाया जा सके, कहीं तो पहाड़ के पेट में से जाना पड़ता है। एक तरफ पहाड़ की सीधी और ऊँची कराड़, दूसरी तरफ नीचे रवाण में (पाताल) में बहती हुई गंगा। अगर एक इन्च भी चुके तो मृत्यु के मुख में। हालांकि तिब्बत में यह बात नहीं है, क्योंकि वह प्रदेश प्लेटोनुमा है।

२ —बरफ के पुल पर से पसार होते हुए कहीं नरम बरफ धँस पड़े तो गुप्त गंगा में गायब हों।

३. तिब्बत की नदियों में पुल नहीं होते। नदी पार करते हुए पानी इतना अतिशय-शीतल कि शरीर सुन्न हो जाता है। उस समय अगर संतुलन न रख सके तो जोरदार प्रवाह में जल समाधि।

४. समुद्री सतह से पन्द्रह–अट्ठारह लगभग उन्नीस हजार फीट की ऊँचाई पर चलते हुये हवा पतली होने से श्वास लेने में तकलीफ होती है। घबराहट होती है, जिसे इस तरफ "विष का असर" कहते हैं। किसी को तो खून की उल्टी हो जाती है। कमजोर हार्ट वाले को खतरा है।

५. पहाड़ों में चलते हुए रास्ते में पहाड़ों की उच्च चोटी से गिरने वाले पत्थर सिर पर या शरीर पर पड़ते ही कैलासवास हो सकता है।

६. तिब्बत प्रदेश में डाकू ऐसे भयंकर हैं कि सेर भर सत्तू के लिए मनुष्य को काट डालते हैं। अगर मारे नहीं तो भी खाने तथा पहनने, ओढ़ने की चीजें ले जावें तो उस विचित्र प्रदेश में बिना मौत मरने के प्रसंग आ सकते हैं।

७. सतत पैदल चलते रहने, सड़क न होने से पहाड़ों पर सख्त ठंढ से या अन्य बीमारी से जीवन का खतरा हो सकता है।

यह सब होते हुए भी आपुण्य की डोरी तूटी (टूटी) न हो तो "राम राखे एने कौन चाखे" "हिंमते मरदा तो मददे खुदा।" "ईश्वर कृपा मनुष्य यत्न।"— इन सूत्रों के अनुसार आफतों को आसानी से पार करना ईश्वर कृपा से मनुष्य का कर्त्तव्य है। "संकट इतना भयप्रद नहीं होता जितना संकट का विचार।"—राष्ट्र-ध्वज सत्याग्रह में छाती तथा पैर की हड्डी तूटी (टूटी) हुई—आँख का ऑपरेशन (कर्निया

ग्राफ्टिङ्ग सन् १९६८ में), आर्थिक असुविधा यह सब होते हुए—"निर्बल के बल राम," "हारे को हरिनाम" सर्वशुभ होता है । "Will there is a way" "मरजी वहाँ मार्ग" "चाह तहाँ राह" के अनुसार ईश्वर कृपा से मुझे सब सुविधाएँ मिलती रहीं ।

१. कैलाश मानसरोवर यात्रा के लिए पूज्य बापू के आशीर्वाद ।

२. भारत में गाँधी इर्विन पैक के अनुसार सत्याग्रह जंग की शान्ति ।

३. भाटिया (कच्छी गुजराती) सेठ तथा अल्मोड़ा जिले के भोटिया सेठ श्री दुर्गासिंह रावत का साथ ।

४. खादी विभाग डिस्ट्रिक बोर्ड अल्मोडा के "खादी संचालक" की हैसियत से जिले की लगभग तीन सौ से अधिक पाठशालाओं में ऊन कताई बिनाई के कार्य का निरीक्षण का कर्त्तव्य था । अतः जिला बोर्ड ने यह सुविधा दी कि अल्मोड़ा से भिलम तक जिले की हद में Duty पर फिर तिब्बत की यात्रा के दिनों में छुट्टी पर—इसके बाद गर्ब्याङ्ग—जिले की हद में प्रवेश होते ही Duty शुरू हो ।

५. सर्वोत्तम सुविधा अन्तरात्मा का आदेश "कैलाश मानसरोवर यात्रा के लिए हृदय का उत्साह ।" जीवन में अनुभव किया है कि –वर्तमान में जो वस्तु स्थिति प्राप्त हो उसमें संतोष मानकर सदुपयोग करना । जितना ईश्वरीय प्रकाश, ज्ञान और शक्ति हो उसका उपयोग करते रहने से आगे का मार्ग स्पष्ट होता जायेगा । श्री कृष्ण भगवान ने गीता में गाया है—

अनन्याश्चिन्तयन्तों माँ ये जनः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानाम् योमक्षेमं वहाम्यहम् ।

दिनांक १९ जुलाई रविवार सन् १९३१

भारत माता से आज विदा लेकर कठिन यात्रा "कैलाश मानसरोवर" के लिए प्रस्थान करने का शुभ दिवस—गोरी गंगा में स्नान करते द्रवित हृदय से प्रणाम किया । क्या इस जीवन में फिर कभी इस स्थान पर स्नान होगा । इस भावना से हृदय गद्गद् हो गया ।

भोजन के बाद दस बजे दिन में घोड़े व खच्चर आये । सेठजी की सवारी के लिए एक घोड़ा, सामान के लिए पाँच खच्चर, श्री दुर्गासिंह रावत के लिए एक घोड़ा ।

ज्ञानिमा मंडी तक प्रति घोड़े या खच्चर का बारह रुपया मजदूरी देनी थी। तीन जानवर को सम्हालने वाले मजदूर को दस रुपया मजदूरी देनी थी। "झब्बू सस्ते मिल सकते थे पर यहाँ तथा तिब्बत में एक विचित्र किस्म की बीमारी फैली थी कि जिनके पास सौ झब्बू थे, उनके पास मुश्किल से पाँच सात रहे थे। अगर रास्ते में एक झब्बू मर गया तो वहाँ न घर के रहे न घाट के।

यात्रा–कुटीर को प्रणाम करके ग्यारह बजे भिलम गाँव की गलियों (बाजते-गाजते-ढोल नगाड़े आदि) में से जाते परमात्मा का स्मरण कर प्रयाण किया। भोटिये व्यापारी तिब्बत में व्यापार के लिए जाते हैं, तब हर सफर जीवन और मृत्यु का साहसिक सौदा माना जाता हैं।—ऐसी कठिन यात्रा से सकुशल वापस लौटेंगे कि नहीं।—इस विचार से विदा (य गिरी) का यह दृश्य सचमुच हृदयद्रवक बन जाता है। "हा ! हा ! संताप हृदय में कैसा वियोग का ?"

कैलाशयात्री इन भोटियो के साथ में ही जाते हैं। इनके साथ बिना तिब्बत की यात्रा अशक्य बन जाती है। यही हमारे साथी और रक्षक होते हैं।

आकाश में ऊँचे लहराता राष्ट्रध्वज हिमाचल में यात्रा सफलता के लिए आशीर्वाद दे रहा था, साथ में गोरी गंगा प्रेरणा दे रही थी। हरे-पीले लहराते हुए खेत बर्फानी यात्रा की सफलता चाह रहे थे। चारों तरफ के गगन चुम्बित बर्फानी हिमगिरि शिविर आशीर्वाद दे रहे थे। हमारा हृदय भी पुलकित-प्रफुल्लित था ही। अन्त में गुम्खा गंगा की धार पर पहुँचे। यहाँ तक विदा देने की हद है। गाँव के ५०-६० भाई विदा देने आये थे। सबने अश्रुभरी आँखों से विदा दी। हमारी आँखों में भी आँसू थे – हृदयद्रावक दृश्य "हा ! हा ! समय संताप नो, वियोग नो के वो हृदय मां लागतो। गद्‌गदित सरत शब्द - आखों, देह रोमांचित थतो।"

हिममय श्वेत श्रृंगों को, गोरी गंगा को, भिलम ग्राम को, मनोहर खेतों को हार्दिक प्रणाम करके, दिल को कठिन करके, दौड़ते हुए, गुम्खा की गोद में पहुँच गये। भारत-राष्ट्र से विदा, तिब्बत प्रति प्रयाण, जहाँ अब नगर, गाँव, दुकान, मकान, धर्मशाला सड़क, जंगल, डाक, तार आदि कुछ भी नहीं है। आधुनिक सभ्यता का सर्वथा अभाव ? ओह ! कैसी भयानक होने पर भी भाववाही, पपित्र यात्रा ? मात्र दिशा (लक्ष्य) तरफ ध्यान रख कर प्रथम के यात्रियों से बनी हुई पगदंडी (वह भी कभी-कभी), पर हम भी चलने लगे। दोनों तरफ के ऊँचे पहाड़ तथा आकाश की चाँदनी तान कर हमारी तरफ निगाह डाल रहे थे। वह संकरी (हल्दी) घाटी में एक तरफ गंगा और दूसरी तरफ हम। पैर भी मुश्किल से रखा जा सके ऐसी पगदण्डी पर राम राम कहते हुए आगे बढ़े।

"देश वैसा वेश"—यात्रा में मेरी पोशाक थी—कुर्ता पायजामा, मोजे बैन्डेजेवोट बनियान, श्वेत हिमालय के ताज सी श्वेत गांधी टोपी, मफलर आदि—बगल थैले में गीता—अनाशक्ति योग, आश्रम भजनावली, कतुवा, ऊन, दुर्बीन, कैमरा और गौगल्स और हाथ में लाठी बागेश्वरी।

चार मील चल कर 'शीलोंग' के पास बरफ के पुल को पार करके सामने किनारे पहुँचे। गंगा कभी बरफ में गुप्त होती, फिर प्रकट होती दिखाई देती। हृदय गुहा में अनेक विध अपूर्व विचार तथा भाव उत्पन्न होते रहते थे। जीवन में यहाँ का दृश्य फिर दुबारा देखने को मिलेगा क्या ? अब स्वर्ग की सी सीधी चढ़ाई आयी। घोड़े, खच्चर एक कदम आगे चलते तो दो कदम पीछे फिसल पड़ते। परन्तु जैसे-तैसे कठिन चढ़ाई चढ़ गये। लगभग बारह हजार फीट ऊँचाई पर श्वांस (दम) फूल जाता था। गुम्फा नदी अब डेढ़ सौ फीट नीचे दो पहाड़ की घाटी के बीच मार्ग करती, पहाड़ को तोड़ती हुई, बहती है। सामने के पहाड़ से प्रचंड जल-प्रपात उस निर्जनता को भंग कर रहा था। यहां के पहाड़ों में जंगल न होने से घास न होने से नंग-धड़ंग वीरान टीले से दिखाई देते थे। रसोई के लिए लकड़ी तथा घोड़ें खच्चर के लिए घास भी भीलम से लोगों ने साथ रख लिए थे।

छः मील चल कर "बलथांग" नाम के पड़ाव पर चार बजे शाम पहुँचे। हरियाले भरे मैदान में तंबू खड़ा करके यात्रा कुटीर तैयार हो गई। भाटिया सेठ जी का वाटर प्रूफ वाला तंबू था। दूसरे तंबू में उनके नौकर तथा रसोइया और अन्य सामान रखा गया था। भोटिया पाल ७' × १२' में श्री दुर्गासिह रावत के साथ मेरा डेरा पड़ा था। सामान को व्यवस्थित रख कर एकान्त स्थान में सायंकालीन प्रार्थना करने गया। भोजन के बाद गुजराती पुस्तक स्वामी रामतीर्थ—का स्वाध्याय करते हुए शान्त समाधिकरण निद्रा।

कैलास यात्रा की आज स्पष्ट झांकी हुई। निर्जन वीरान में पास ही में भोटिये व्यापारियों के चार पांच तंबू तन गये थे। चालीस पचास घोड़े, खच्चर के पैरों से पृथ्वी धणधणी रही है। उनके गले में बँधी हुई घुंघरमाल निर्जनता को भंग करती हुई बज रही है। बस्ती का अस्तित्व प्रकट करती है। सुनसान निर्जन वन में आज गुलजार हो रहा है। व्यापारी लोग तिब्बत में ज्ञानीमा मंडी में व्यापार करने जाते हैं। विक्रयार्थ कपड़े तथा अन्य सामान गठरिवां साथ में होते हैं।

पड़ाव पर पहुँचते ही जानवरों पर से सामान उतार कर तंबू तान कर भीतर गठरिओं की दीवाल बना लेते हैं, ताकि माल सही सलामत रहे और ठंडी हवा से रक्षा हो। आज का दृश्य ऐसा तो मनोहर मजेदार अनूठा और आकर्षक लगा कि जीवन का

अविस्मरणीय प्रसंग—(यानी प्रथम पड़ाव का)—रहेगा। जीवन को धन्य माना।
''जीव्यां करतां जोयुं भलुं।''

ॐ शान्ति।
सर्वोदय कुटीर अल्मोड़ा (२७–९–८३)

(१६) ॐ स्थावराणां हिमालयः
समुद्री सतह से १७५९० फीट की ऊँचाई पर
दिनांक २० जुलाई १९३१, सोमवार

श्वेत हिमांचल की सी श्वेत वस्त्र कुटीर-तंबू में से प्रातः पाँच बजे बाहर निकल कर देखा तो दृश्य भयावना, नंग-धड़ंग, वृक्षविहीन बर्फानी पहाड़ों के किल्लों (किलों) के बीच अपने को फंसा हुआ पाया, फिर भी हृदय में शान्ति रही। झरणे पर जाकर स्नान करके आत्म-पूजन किया। गोरी गंगा के जल की अपेक्षा यहाँ का जल गरम लगा। नाश्ता, करने के बाद सामान बाँध कर तैयार हुए। जीवन में कभी नहीं गये ऐसे ऊँचे और विकट हिमालय पर। प्रथम बार इतनी चढ़ाई चढ़नी थी। समझो कि लड़ाई के जंग में उतरने वाले हैं। - ऐसे साहस का भान हुआ। साहस के साथ संकट का स्वागत—यानी, मोर्चा लेने की तैयारी की। बगल के थैले में गीता के अलावा, सोंठ की गोली, स्मेलिंग सौल्ट, अमृतांजन आदि दवाई तथा शाल व रेन-कोट रोज की अपेक्षा अधिक साथ में रख लिया।

परमात्मा का स्मरण करके सात बजे यात्री तथा भोटिये भाइयों ने प्रस्थान किया। दो फर्लाङ्ग दूर डुंग नामक पड़ाव पर पहुँचे तो दिल को डराने वाला भयंकर दृश्य देखा। इस स्थान पर गुम्खा गंगा को पार करने के लिए काम चलाऊ अस्थायी विचित्र पुल बना था। पुल क्या कहा जावे ? वृक्ष के ही दो लट्ठे इस पार से उस पार टिका दिये गये थे। उस पर तिरछे पत्थर रख दिये गये थे। वह इसी का नाम पुल कहा जावे। उस खतरनाक पुल पर से मनुष्य, जीव, खच्चर, घोड़े, बकरी, झब्बू याक (चंवर गाय) आदि हजारों की कीमत का माल असबाब पसार होता था। एक भोटिया व्यापारी का कीमती माल लदा हुआ मजबूत घोड़े का पाँव पुल पार करते हुए पत्थर पर से फिसल पड़ा और वह जोर से बहती हुई अति शीतल सरिता में गिर पड़ा।

सामान तो किसी तरह हाथ लगा और घोड़ा थोड़ी दूर तक घिसटता हुआ तैर कर किनारे लगा। पर अगले दोनों पैर पर सख्त चोट लगने से घायल हो गया अतः आगे की मुसाफरी करने लायक नही रहा। उस पर का सारा सामान एक सवारी के घोड़े पर लादा गया और घायल घोड़े को भिलम भेजने की व्यवस्था हुई। यह दृश्य हमारे लिए दिल दहलाने वाला बन गया। इस तरह गोरी तथा गुम्खा गंगा में हजारों रुपयों का माल गायब होता रहता है। अब इसी पुल पर से हम लोगों ने राम राम करते हुए नदी को पार किया। परमात्मा के प्रति कृतज्ञता प्रकट की। जैसे कि विकट और महान कार्य सफल किया। अभी तो यात्रा का प्रथम श्री गणेश ही हुआ। "परमात्मन् तेरी ही शरण।"

हिमालय की अब सीधी चढ़ाई थी। राणा प्रताप ने मुगल फौज पर चढ़ाई की शिवाजी ने औरंगजेब पर, नेपोलियन ने औस्ट्रिया पर, राम ने रावण पर विजय यात्रा की चढ़ाई की थी; वैसे "शान्ति" ने कैलाश-यात्रा पर यात्रा का श्रीगणेश किया। साध्य और उद्देश्य व साधन विविध होते हुए भी साहस और आदर्श एक ही गिना जा सकता है।

हिमालय पर की चढ़ाई सीधी थी, बीच की खड़ी धार पर धीरे-धीरे चले। चारो तरफ जहाँ भी निगाह डालो, वहाँ वर्फ के गलते ग्लेशियर ही ग्लेशियर। वर्फानी पहाड़ से गलते हुए झरणे : शुभ्र श्वेत बर्फ में से बहती हुई जलधारा जैसे शिवशंकर की जटा से बहती हुई गंगा। अद्भुत और अनुपम दृश्य।

स्वर्ग की सीढ़ी सी सीधी चढ़ाई पर एक सौ पाँच पाउण्ड वजन की देह को उठा कर कदम के बाद दूसरा कदम, फिर तीसरा कदम चढ़ने लगे। आगे-आगे भोटिया बकरियाँ एक के बाद एक कतारबन्द चलती हैं। बकरी या भेंड़ कितना नम्र प्राणी है ? फिर भी कितना शक्तिशाली कार्य कर दिखाती है। पन्द्रह से पच्चीस सेर वजन लाद कर हाथियों के हाड़ गलाने वाले हिमालय पर पाँच, सात, दस, पन्द्रह, बीस हजार फीट की ऊँचाई पर धवल हिमगिरि शृङ्गों को, आकाश को स्पर्श करने वाले पहाड़ों को लांघ कर यह छोटा सा नाजुक और नम्र प्राणी भारत और तिब्बत के बीच व्यापारिक सम्बन्ध बांधता है। क्या यही अपूर्व कार्य ! बालू नरम चीज है, पर बालू की बोरियों दीवालों को आग उगलने वाली तोपों के गोले भी तोड़ नहीं सकते। अहिंसा नम्र होते हुए आग जैसी धधकती हिंसा पर शांति से अद्भुत विजय प्राप्त करती है। "धन्य है सत्य और अहिंसा की शक्ति को।"

अब संकरी पगडंडी आई। एक तरफ पाताल जैसी गहरी खीण—खाई, तो दूसरी तरफ सीधी और ऊँची कराडा। गिरनार (रैवतक पर्वत) परिक्रमा में एक स्थान

पर ऐसी ही संकरी पगडंडी आती है, जहाँ यात्रियों की लम्बी कतार एक-एक कदम ही धीरे-धीरे चल पाती है। भोटिये लोगों का कहना है — इस धूरा पर चढ़ते हुए विष का असर होता है और मनुष्य को घबराहट होती है, श्वांस लेने में असुविधा मालूम पड़ती है। चक्कर आता है, खून की उलटी भी होती है, और मनुष्य बेहोश बन जाता है। यह सब बातों का अनुभव भी हमें हुआ। सम्भव है, कि ऐसी तीव्र सुगन्ध की वनस्पति इतनी ऊँचाई पर हों परन्तु विशेष कारण तो यह कि १५ से २० हजार फीट की ऊँचाई पर चढ़ते हुए आक्सीजन हवा बहुत ही पतली होने के बारण फेफड़ों पर काफी जोर पड़ता है, और इसी कारण छाती में घबराहट होती है और सिर में चक्कर भी आता है।

सबसे प्रथम हमारे एक साथी यात्री को गुम्खा पुल से थोड़ा ऊपर चढ़ते ही ये सारे अलामत होने लगे। फिर तो उनकी स्थिति अधिक बिगड़ती गई। वहाँ तो हर कोई को अपनी जान को सम्हालने की पूरी चिन्ता रहती है, वहाँ दूसरों को कैसे सम्हाल सके ? मैं जरा ठीक था, इसलिए उस भाई को खटाई चटनी तथा दवाई दी तब वे कुछ ठीक हुए और हम आगे बढ़े।

ताजा बर्फ, अब मिला, अतः विसर्पण (स्केटिंग) करने में आनन्द आया। श्वेत बर्फ तो देखा ही था पर प्रथम बार 'काला बर्फ' यहीं देखा। काले संगमरमर के पत्थर की तरह चमकता हुआ सख्त था। शायद नीचे की मिट्टी से ऐसा लगता हो पर तोड़ने पर श्वेत रंग का ही था।

सामने पहाड़ी पर "ऋषिओं का यज्ञ-स्थान" देखा। हिमालय में तो ऋषि-मुनि तपस्वी महात्माओं का निवास स्थान है न ? समुद्र में के पत्थर पर जिस तरह को कुदरती कारीगरी दिखाई देती है, वैसे यहाँ भी कहीं-कहीं दिखाई पड़ी। कहा जाता है कि एक युग में हिमालय समुद्र था। हमारे साथ दो भोटिये कुत्ते थे। बर्फ पर दौड़ते, कूदते, नाचते, लोटते, खेलते खुश हो रहे थे। जब पाण्डव हिमालय में गलने आये तब 'धर्मराजा' श्वान का स्वरूप लेकर महाराजा युधिष्ठिर की परीक्षा लेने आये। इन्द्र ने कहा कि — "स्वर्ग में चलो" उत्तर दिया कि—"मेरे चार भाई, पत्नी द्रौपदी ने रास्ते में छोड़ दिया, पर इस कुत्ते ने साथ न छोड़ा—इन्हें भी स्वर्ग ले चलो।" "नहीं, यह तो श्वान है, स्वर्ग में जाने को मानव-योनि चाहिए।" अगर इसे साथ नहीं लेते तो मुझे भी स्वर्ग में जाना नहीं है। "उत्तर सुनकर धर्मराज प्रकट हुए। क्या ये कुत्ते उसी के वंशज के होंगे, जिन्हें हिमालय के बर्फ के प्रति कुदरतन आकर्षण है ?"

"शीकनदानी" पहाड़ की तीन मील की सीधी और सख्त चढ़ाई चढ़कर ताजी बर्फ तथा पहिले के बर्फ पर चलने में आनन्द आया। अब हम लोग "ऊँटाजम" यानी

"ऊँटाधूरा" की जड़ में दस बजे पहुँचे। पर अभी तो "या शेर माँ प्रथम पूणी" यानी श्री गणेश ही हुआ।

सुखड़ी (गुड़पापड़ी) से पेटपूजन करके फिर कम्मर (कमर) कस कर कठिनाई का सामना करने कटिबद्ध हुआ। यात्रियों को इस स्थान पर पानी पीने में सावधानी रखनी चाहिये, क्योंकि कोई पानी नुकसान कर्ता भी होता है।

"ऊँटाधूरा" पर चढ़ते समय न धूप न वर्षा और अनुकूल हवा बह रही थी। सद्भाग्य से ऐसी अनुकूलता प्राप्त हुई। हाँ ! कभी-कभी आशीर्वाद स्वरूप इन्द्रदेव द्वारा हलकी हिमवृष्टि होती रही। कोहरा छा जाने से दूर का दृश्य देखने को नहीं मिलता था। "प्रेमल ज्योति तारो दाखवी मुज जीवन पंथ उजाल।" मारे एक डगलु बस थाय "One Step enough for me" इस तरह "सोऽहम्-सोऽहम्" जपते हुए चढ़ने लगे। पर्वतों की पैदल यात्रा में इस तरह जप जपते प्राणायाम की विधि सहज—स्वभावतः हो जाती है। "जपानां जप यज्ञोऽस्मि" के साथ ही "स्थावराणां हिमालयः" दोनों आनुषंगिक कहने में श्री कृष्ण भगवान् का आध्यात्मिक गूढ़ रहस्य है।

सत्रह हजार फीट से ऊपर के हिमालय की इस कठिन चढ़ाई में घोड़ें, खच्चर, दस कदम जाते ही दम ब दम होकर दम लेने खड़े रह जाते हैं। बकरियाँ नीचा मुंह करके हांफती हुई खड़ी हो जाती थीं। मैं स्वयं भी कुछ डग, कदम चढ़ते ही खड़ा रह कर पीछे आने वालो को निहार लेता था। सांस फूल रही थी। श्वास के साथ 'सोऽहम्' स्मरण भी कभी-कभी भूल जाता था। साथी यात्री बहुत पीछे हैं—ऐसा आश्वासन लेता हुआ हिम्मत करके आगे बढ़ता था। ऊँटाधूरा की चढ़ाई तो मुश्किल से मात्र सवा मील की होगी, पर प्रथम की चढ़ाई "शीकनदानी" में ही शक्ति का अधिकांश हिस्सा खर्च हो गया था। फिर इतनी ऊँचाई पर की पतली हवा के कारण फेफड़ों को काफी काम करना पड़ा था। दिमाग में धम-धम उथल-पुथल होते रहने के कारण बैठ जाने की नोबत तो नही आई। कहो कि हिम्मत कैसे हो ? सिर ज्यादा चकराने लगा। छाती में घबराह होने लगी। शरीर की नसें टूटती सी लगीं। अन्त में हार कर कमरबन्द (शाल लपेटा था) खोल कर बरफ की शिला (चट्टान) पर जा कर बैठ गया। सचमुच यह स्थिति विचित्र थी। कैलाश-यात्रा में कष्ट न हो तो पुण्य कैसे मिले ? यानी आत्म-सन्तोष।

यात्रियों को आगे जाते देख कर हिम्मत बाँधकर फिर उठा। दम घुटने लगा शक्ति का जैसे हरण हो गया। दस कदम जाते सिर में चक्कर आने लगा। फिर बैठ गया। उसी समय एक भोटिया भाई ने प्रेमपूर्वक आग्रह से घोड़े में बैठने को कहा— "आवश्यकता थी और वैद्य ने वही बतलाया।" "भावतुं हतुं एज वैद्ये बाताव्युं" अतः

तिब्बती बांखर (जिन) वाले घोड़े पर बैठ गया । एक ही फर्लाङ्ग जाते ही ऊँटाधूरा के उच्च धवल हिमगिरि शृंग पर ॐ शान्ति । समुद्री सतह से १७९५० फीट पर पहुँच कर कैलाशपति शंकर महादेव का जय घोष किया । ॐ शान्ति का स्तवन पाठ किया । उसी समय इन्द्रदेव ने आशीर्वाद रूप हिमवृष्टि की यानी श्वेत पुष्प वृष्टि ।

बर्फ पड़ने लगा जैसे जुही के पुष्प या धुनी हुई रूई के रोंए । फर-फर-फर करते हुए बर्फ गिरती है । बड़ा ही सुहावना दृश्य सात्विक विचारों की प्रेरणा देने वाला था । अब हिमालय की हवा की ठण्डी सुसवाटी कलेजे को कुतरने वाली थी । उसने ऐसा तो प्रचण्ड-प्रताप विकराल बतला दिया कि वहाँ खड़े रहने को साथियों ने मना किया । वैसे भी हिम्मत कम थी, क्योंकि अगर बर्फ अधिक पड़ गई तो पूरी आफत । १७९५० फीट के नगाधिराज हिमाचल को हृदय से प्रणाम कर अद्भुत भावनाओं को हृदय में संजो कर नीचे उतरने लगा । चढ़ाई दुर्घट, इतना ही उतरना खतरनाक कठिनाई है । बर्फ बहुत ही फिसलने वाला है । बार-बार बादल भी आफत मचा रहे हैं । इतना ही काफी न हो—उपरांत धूरा के विष से जी घबरा जाता । हवा पतली होने से फेफडों को काम काफी करना पड़ता है । यह सब नखरे "कैलासपति शंकर महादेव तथा पार्वती जी" के इसलिए हैं कि भक्त यात्री संकटों में सर्वेश्वर को सतत स्मरण करता रहे । इतनी ऊँचाई के हिमालय पर आकाश और सूर्य के नजदीक प्रथम बार पहुँचे ।

बर्फमय कीचड़ में से सावधानी से नीचे उतरने के बाद ताजा बरफ में शरीर को छोड़ दिया यानी विसर्पण करते हुए फिसलते हुए उतरने लगे । बर्फ में ही एकाध मील चले तो वहाँ अद्भुत दृश्य दिखाई दिया । चारों तरफ सामने, ऊँचे, नीचे, इधर-उधर श्वेत बर्फ बर्फ बर्फ बर्फ बर्फ । अन्दर, बाहर, ऊपर, नीचे, आगे-पीछे, हिम हीं हिम (हीम) उर में, सिर में, सुर में, नर में, पुर में, गिर में हिम ही हिम । बर्फमय जगत में इतना आकर्षण क्यों ?

परमात्मा की दिव्य विभूति में से एक "स्थावराणाम् हिमालयः" कैलास यात्रा के इस रास्ते से जाने के लिए तीन विकट हिममय (चोटी) धूरा पार करना पड़ता है । उसमें अभी तो यह ऊँटाधुरा प्रथम ही श्रीगणेश ही है । दूसरा शिखर १८,५०० फीट का 'जयन्ती' अब सामने हैं, तीसरा अन्तिम हिमगिरि शिखर १७,३०० फीट का "कुंगरी बींगरी" तो अभी दूर है । "हिम्मते मरदा तो मददे खुदा" उत्तिष्ठत ! जाग्रत !! प्राप्य वरान्निबोधत क्षुरस्य धारा निषिता दुरत्यया । दुर्गं पथस्तत् कवयो वदन्ति ।।'

"जयन्ती की जड़ में जाते ही विष के असर में वृद्धि होने लगी । भोटियों की भाषा में 'विष' कहा जाता है । सिर पर अमृतांजन बाम घिसा । खटाई तथा दवाई खाई

स्मेलिंग साल्ट सूंघा । इस हालत में भी दूसरे यात्रियों को दवाई देते हुए आगे बढ़ने लगा । "जयन्ती" पहाड़ की चढ़ाई तो उतनी कठिन नहीं थी, पर शीकनडानी की तीन मील की कठिन चढ़ाई तथा ऊँटाधुरा की सवा मील की चढ़ाई चढ़ते शक्ति का व्यय काफी हो चुका था । शरीर थक गया था । मन भी कुछ व्यग्र हो गया था । अतः इस पहाड़ की आसान चढ़ाई भी सब यात्रियों को दुष्कर लगना स्वाभाविक था ।

'टोपीढूँगा' नाम का पहाड़ सामने दिखाई देता है । दूर से भी वहाँ हरियाली दिखायी देती थी । यानी महीन घास तथा जलाने की जड़वाली "डामा" (वनस्पति) पौधे थे । हिमालय के तीन धुरा की विकट और कठिन चढ़ाई चढ़ने से बचने के लिए बहुत से व्यापारी वे यात्री टोपीढूंगा के रास्ते से जाते हैं, पर इस रास्ते जाने में तीन दिन अधिक लगता है । फिर भी बर्फ के कष्ट से तो रक्षा नहीं हो सकती । सामने के दूसरे बर्फमय पहाड़ में 'हरताल' मिलती है । ऐसा जानकार लोग कहते हैं । पर वहाँ जाने का साहस तो कोई साहसिक ही कर सकता है, क्योंकि रास्ते में नरम बरफ होने का खतरा होने के कारण सावधानी रखनी पड़ती है । नहीं तो सदा की समाधि की सम्भावना है । 'जयन्ती' के शिखर पर पहुँचकर अन्त में विजय डंका बजा दिया, परन्तु मगज में घुमारी होने से ऐसा लगा माना कि आकाश लोक में उड़ते चले जा रहे हैं । पृथ्वी से ऊपर उड़ता सा जा रहा हूँ । इसी समय इन्द्र देव ने हिम वर्षारूपी आशीर्वाद की पुष्टि की ।

सन्ध्या समय होने आ रहा था । अभी तो तीसरा हिमशिखर का धुरा "कुंगुरी बींगरी" पार करना था । भोटिये व्यापारी तथा कुछ यात्री एक ही दिन में W नुमा तीनों हिमालय पार करके छीस्पन में पड़ाव डालने का साधारण नियम पालन करते हैं । क्योंकि रास्ते में घास तथा पानी की मुश्किल है । इसके अलावा अगर बर्फ ज्यादा पड़ गया तो पूरी आफत । हिमालय में अक्सर शाम को ताजा बर्फ पड़ा करता है । अधिकांश यात्री एक ही दिन में तीनों धूरे पार कर लेते हैं । पर हमारे यात्री संघ की दो पार्टी पड़ गयी । एक तो अभी बहुत पीछे थी अतः तीसरे धूरे करने का समय नहीं रहा । जयन्ती उतर कर 'कुंगरी बींगरी' की जड़ में लजगांव स्थान पर पड़ाव कर डेरा तम्बू डालना तय हुआ । वैसे भी, श्रमित शरीर से एक कदम चलना मुश्किल हो पड़ा । अन्त में पड़ाव पर भोटिया तम्बू में थोड़ा सा आराम किया तब शान्ति को शान्ति हुयी । आज की यात्रा लगभग दस मील की हुयी, पर शक्ति का व्यय तो सौ मील चलने जैसा हो गया था । एक तरह से थकावट की पराकाष्ठा । कुछ देर बाद दूसरे यात्री भी पहुँच गये । तब तानकर बिस्तर बिछाकर पड़ गये । ऐसे सोये कि खाने पीने का भान तो क्या किसी को इच्छा ही नहीं हुई ।

ग्लेशियर के बर्फ पर पत्थर जमा दिये थे, ताकि सिलाप (सीलन) से बच सकें। ऊपर रेन कोट डालकर बिस्तर बिछा दिया था। आज ठंड भी सख्त थी। बैरोमीटर का पारा ३०° डिग्री से भी नीचे पहुँच गया था, पर ऊनी बनियाइन व मफलर व हाथ पैर के गरम मोजे और हौट वाटर गैस से ठंड से कुछ राहत मिली। पृथ्वी समुद्र धरातल से इतनी ऊँचाई और आसमान के नजदीक हिममय जगत् में शान्ति परम शान्त हो गया।" ॐ शान्ति सर्वोदय कुटीर अल्मोड़ा ४-१०-८३।

स्थावराणां हिमालयः

"हो ऋषियों के तपस्तेज हिमालय, हो भारत ताज हिमालय।
आदि सभ्यता के परिचायक, हो गिरिराज हिमालय।
प्रकृति देवी के धवल धाम, हे सुन्दर ताज हिमालय।
मृत संजीवक भारत रक्षक, हे नगराज हिमालय।
स्वर्ग शिवालय महादेव के, सुख भंडार हो हिमालय।
निराकार अव्यक्त ईश के, हे साकार हिमालय।
ब्रह्म-पुत्र गंगा-यमुना के, पिता पवित्र हिमालय।
अचल शान्त गम्भीर मनोरम, चारु चरित्र हिमालय॥"

ॐ शान्ति सर्वोदय कुटीर अल्मोड़ा ५-१०-८३

(१७) तिब्बत प्रवेश दिनांक २१ जुलाई ३१ मंगलवार

कैलास मानसरोवर यात्रा में "कताई यज्ञ" मात्र कल ही नहीं हो पाया। वर्षों से यह नियम सतत रहा कि प्रार्थना, आत्म-पूजन, गायत्री मंत्र, जप, यज्ञ, गीता-पाठ आदि के साथ कताई-यज्ञ होता रहा। अब कुछ वर्षों से हार्ट ट्रबल होने से कताई यज्ञ छोड़ देना पड़ा है। वैसे आत्म-पूजन, गीता पाठ आदि एक तरह से स्वधर्म सा बन गया है। आज सारी रात के आराम के बाद प्रातः उठते ही अच्छी स्फूर्ति रही।

हिमालय का अन्तिम तीसरा धुरा "कुंगरी बिंगुरी" धारा १७,३०० फीट की ऊँचाई पार कर आज रहस्यमय तिब्बत–प्रदेश "Mysteri our Land" "Roof of the world" में प्रवेश करना था।

सह-यात्री, व्यापारी, उनके नौकर, घोड़े, खच्चर, बकरी आदि तैयार होते ही बर्फमय जगत में धीरे-धीरे पसार होने लगे। आज का दृश्य विशेष मनोहर और अनुपम था। यह निरखते हुए घोड़े की पूँछ पकड़ कर सहारा लेने में आनन्द आता था। इस तरह के सहारे से चढ़ाई चढ़ने में आसानी मालूम होने लगी। 'लजगाँव' (यह गाँव नदी पर पड़ाव करने का स्थान है) से एकाध मील की चढ़ाई चढ़कर १७३०० फीट की ऊँचाई को हिमालय शिखर (धूरा) 'किंगरी-बिंगरी' घाटे पर पहुँच कर ॐ शान्ति तथा कैलासपति महादेव का जय घोष पुकारा। एक तरफ भारतवर्ष, दूसरी तरफ तिब्बत प्रदेश। भारत माता का ताज किरीट तो हिमालय ही है न ? उनके चरण को कन्या कुमारी का समुद्र स्पर्श करता है। एक तरफ द्वारिका दूसरी तरफ जगन्नाथपुरी— कटिमेखला विंध्याचल। यही है भारत भूमि।

"जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपी गरीयसी।"

भारत माता का रक्षक—द्वारपाल, अखण्ड, अटल-अचल जोगंदर की तरह प्राचीन गौरव का गुण गान गाते हुए अनन्त काल से हिमालय स्थिति है। कितना महान ? कितना भव्य ? कितना दिव्य ? कितना पवित्र ? उस पर खड़े रहते ही अन्तर गुहा में अनन्त पवित्र भावना हृदय सागर में लहराने लगा।

"जीभ थाकी रे, विराट वदी।"
यत्रो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह।

हिम वृष्टि कल शाम बिलकुल ताजी यहाँ हुई थी। उसके गोले बनाकर मस्त होकर नाचने कूदने लगे। हिम के गोलों को "शो-शो" कहते हुए तिब्बती लोग यही घोष करते हुए उच्च हिम-शृंग के ऊपर विजय पाकर वहाँ पुष्पाञ्जलि अर्पित करते हैं—"शो-शो" का अर्थ क्या "सोऽहम्-सोऽहम्" तो नहीं होगा ? शायद ऐसा ही हो। हिम गोलों को सोऽहम् सोऽहम कहते हुए वहाँ के शालिग्राम यानी शिव पर चढ़ाने लगे।

तिब्बती लोग उच्च चोटी पर चढ़कर लम्बे श्वास लेते हुए शो-शो पुकारते हैं। प्राणायाम जैसे दीर्घ श्वास लेने का वैज्ञानिक नियम यहाँ स्वाभाविक तौर पर हो जाता है। इस स्थान पर भी इंद्रदेव ने अचूक हिमवृष्टि करके आशीर्वाद दिया। अगर आकाश स्वच्छ होगा तो यहाँ से 'श्री कैलास' का दर्शन कर सकते हैं, परन्तु आज तो कोहरा रूपी आवरण हो जाने से दर्शन से वंचित रहे— परन्तु कैलास प्रति आगे बढ़ ही रहे हैं "आवरण आ ते धर्यू विश्वने रमाड़वा।" "आत्म-स्वरूप मधुर प्रणव ॐ तत् सत् ॐ सदा।"

भारत माता को हार्दिक वंदन करके तिब्बत प्रदेश—त्रिविष्टप—प्रति १७,३००

फीट की ऊँचाई के हिमगिरि शृंग से धीमे-धीमे नीचे उतरने लगे। 'छीस्पन' (चिरचन) गुम्फा पर न ठहर कर सात मील चल कर छीस्पन गंगा का विशाल पट्ट पार करके "सोमनाथ" नाम के पड़ाव पर पहुँचे। तम्बू तानते हुए तिब्बत की तीक्ष्ण हवा के प्रताप का कठिन अनुभव हुआ।

सोमनाथ के पास तीन गंगा 'त्रिवेणी' का संगम बना है। सामने तूकपू नदी पार हुणियों के आठ-दस डेरे-तम्बू तने हुए हैं। तिब्बत भूमि में अनोखा दृश्य देखा। ऊँचे आकाश के साथ बात करने वाले विकट बीहड़ जंगलो से छाये हुए हरे-भरे पहाड़ों के बदले छोटे-छोटे नंग-धड़ंग— घास या वृक्ष नहीं—ऐसे सागर के तरंगों की हारमाला जैसे पहाड़ नहीं पर Plate हथेली की तरह मैदाननुमा फिर भी ऊबड़-खाबड़ जैसी जमीन—यही तिब्बत भूमि पर्वतों के मस्तक पर चाँदी जैसा श्वेत बरफ ताज की तरह चमकता है।

दिनांक २२ जुलाई बुधवार १९३१

प्रार्थना प्रातः विधि, स्नान बाद पेट पूजन से निपट कर सामान बाँधकर तैयार हुए। कल लजगाँव पड़ाव पर घास तृण मात्र मिलने से भूखे घोड़े, खच्चर आदि जानवरों के दूर चरने के लिए चले जाने से प्रस्थान करने में देर हुई। बकरिआं तो विचारी बिना घास एकाध दिन निभा भी सकती हैं, पर इन सशक्त जानवरों की पूरी आफत। यहाँ की कठिन यात्रा में मनुष्य और पशुओं के बीच सच्चा भ्रातृभाव जाग उठता है।" 'आत्मवत् सर्व भूतेषु' की भावना साकार होती है। यही जानवर घोड़े, खच्चर, चम्बर गाय, याब, झब्बू बकरियाँ आदि मोटरमोना या जहाज गाड़ी ट्राम या गुड्सट्रेन रेलवे ट्रेन जो गिनो वह यही साधन है। खच्चर बहुत ही मजबूत प्राणी है। पक्का पूरा दो मन बोझ उठा कर कठिन चढ़ाई, हजार फीट ऊँचे पहाड़ों में— तथा हिम वर्षा मे भी मौज से सफर करने वाला यह जानवर काफी कीमत का है; यानि ऊँचे दाम में बिकता है।—विकट और कठिन चढ़ाई न होते हुए भी लगभग पन्द्रह हजार फीट की ऊँचाई पर चलते हुए हवा पतली होने से दम जल्दी फूल जाता रहा। वन घोड़ा—'क्यांग' दौड़ते हुए दिखाई दिये— कहा जाता है कि राम बनवास गये तब अपने घोड़े को जंगल में छोड़ दिये (गये) थे। उसी के वंशज यह 'क्यांग' माने जाते हैं। लोकोक्ति में कितना सत्य है— राम जाने। परन्तु तिब्बत के प्रदेश में दस, बीस, तीस के गिरोह में काफी संख्या में क्यांग घूमते हुए दिखाई पड़ते हैं। लाल, बादामी या भूरे रंग के श्याम कर्ण वाले

छोटे कद वाले, पीठ पर जोन की छाप का भास वाले।—उनकी स्वतन्त्रता का हरण करने का प्रयत्न किसी ने नहीं किया, क्योंकि क्यांग ने शरण माँगने के लिए मनुष्य के पास—जाने की भूल नहीं की। कहा जाता है कि आदि काल में घोड़ा आजाद था। सिह के संकट से बचने के लिए स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए मनुष्य की मदद मांगी मनुष्य ने उसकी पीठ पर बैठ कर जंगल में जाकर सिंह के संकट से तो बचा दिया, पर अब मनुष्य घोड़े की उपयोगिता समझ गया था तो उसको कैसे छोड़े। इस तरह घोड़े की स्वतन्त्रता सदा के लिए चली गई। शायद 'क्यांग' घोड़ा इसलिए सचेत रहता है। मनुष्य उसके पास जाते ही सरपट दौड़ते हुए भाग जाता है। महाराजा मैसूर सन् ३१ में कैलास मानसरोवर यात्रा को गये तब एक क्यांग के बच्चे को पकड़ कर मैसूर ले तो गये। परन्तु यह स्वतन्त्र कौम का—पन्द्रह हजार फीट की ऊँचाई के हिमालय प्रदेश में रहने वाला प्राणी थोड़े दिन जिन्दा रह सदा के लिए स्वतन्त्र हो गया।

'फी' यानी "फीया" नामक खरगोश जैसा चपल जानवर देखा गया। इसकी चरवी बात-व्याधि के लिए अकसीर मानी जाती है। 'कोडांग' यानी धूरा में हिमालय के उच्च शिखरों में बसते, उड़ते जंगली कौए भी दिखाई पड़ते हैं। 'चकवा' तिब्बती कौआ तथा अन्य पक्षी विशेष करके कैलास परिक्रमा में सफेद कबूतर देखे गये। बर्फानी हिमालयी "हिरण" (Snow deer) कहीं-कहीं हरियाली चुगते हुए दिखायी देते हैं। इसकी खाल को पर्वतीय प्रदेश की जनता बैठने-बिछाने के काम में लाते हैं। रोंएदार मुलायम खाल होती है। कुमाऊ के पहाड़ में इसे "घुरड़" की खाल कहते हैं।

"ठाजंग" नाम के पड़ाव पर आठ मील चलकर डेरा तम्बु ताने गये। अलमोड़ा से भिलम तक भारत देश में मील के पत्थर मिलते हैं कितने मील की यात्रा हुयी, उससे पता लगता रहा। यानी सही गिनती (mile stones) होती थी, पर तिब्बत में रास्ता ही नहीं बना तो मील के पत्थर कहाँ से हो? परन्तु पास में पेडोमीटर मील बतलाने (सूचित करने) वाली मशीन यानी घड़ी होने से दैनिक यात्रा कितने मील की हुई। इसकी गिनती रख पाते थे।

'ठांजंग' गंगा सामने बहती हैं किनारे पर पहाड़ की लम्बी हारमाला रणक्षेत्र के किले की तरह खड़ी है। मानों जैसे प्रसिद्ध चीनी दीवाल का नमूना प्रदर्शन के लिए रखा हो। थोड़ी दूर पर हुणिये सौदागरों के काले तम्बू तने हुए खड़े हैं। बहुत से भोटिये व्यापारी अपने हूण मित्रों से (आड़ती से) सौदा करके यहाँ से वापस लौटते हैं। हुणिये अपना सारा संसार, घरबार, साज-सामान, कुटुम्ब-परिवार के साथ ही घूमते रहते हैं। वे लोग पूरे खाना-बदोश पूरे घुमक्कड़ होते हैं, यानी घूमन्तू लोग। प्राचीन ऋषि मुनि तपस्वियों

का जीवन इसी तरह व्यतीत होता होगा। परन्तु वे थे तो पूरे सात्विक महात्मा (महान् आत्मा) परन्तु आज के तिब्बती लोग तो पूरे महा-तमा यानी महान् तमोगुणी से मालूम देते हैं।

भोटिये और हूणियों की बीच रोटी व्यवहार तो है पर बेटी व्यवहार नहीं है। हूणिये तिब्बती लोग चाय बहुत पीते हैं। चाय बनाने की विधि भी विचित्र है। 'डंगमु' लकड़ी का दो फीट ऊँचा छः इंच गोल व्यास का बनाया जाता है। मटठा बनाने की मथनी उसमें फिट करते हैं, पर उसे गोल नहीं ऊपर-नीचे करते हुए मथते हैं। चाय के उबलते पानी में खनिज सेंधा नमक तथा चंवर गाय का मक्खन मिलाकर ऊपर नीचे करते हुए खूब मथते हैं। चाय लिप्टन या ब्रुकबौण्ड की नहीं पर चीनी चाय के पत्ते एक पैकेट में प्रेस (दबा) कर आती है। यहाँ चाय बड़ी कीमती है, एक तरह से टॉनिक का काम देती है। प्याले पर प्याले "भर कटोरा रंग" डेरे में रहते हुए पीते हुए दिखाई देते हैं। दिन भर में बैठे हुए तीस-चालीस प्याले एक व्यक्ति पी जाता है। अन्त में थोड़े सत्तू से समाप्ति करते हैं। इस तरह की चाय यहाँ के हवा पानी के लिए अति अनुकूल है। गरम प्रदेश में लू से बचने के लिए पेट को ठंडे पानी से भरा रखना वैज्ञानिक है। वैसे ही हिमालय के बर्फानी प्रदेश में इस तरह गरम चाय से पेट भरा रहने से ठंड का असर मनुष्य को नहीं होता। इस वैज्ञानिक बात का अनुभव हमें भी यहाँ हुआ।

दिनांक २३ जुलाई गुरुवार ३१

आज इसी स्थान पर मुकाम करना है, क्योंकि सोमनाथ पड़ाव पर बकाया रखा हुआ माल लेने के लिए भोटिये व्यापारी खच्चरों को लेकर गये हैं। शाम तक लौटेंगे, तब दूसरे दिन हम सब यात्री उनके साथ आगे बढ़ेंगे। डाकुओं का भय यहाँ काफी है। अफवाह उड़ी कि आस-पास कहीं डाकू लोग हैं। भोटिये व्यापारियों के पास तो अर्वाचीन राइफल पिस्तौल आदि है। परन्तु तिब्बती डाकुओं के पास तो प्राचीन काल के बाबा आदम के जमाने की जामगरी वाली बन्दूकें होती हैं। फिर भी हमारे चरते हुए घोड़े खच्चर को कभी-कभी उड़ा ले जाते हैं। अकेले दुकेले को परेशान भी करते हैं। पर साधारणतः डाकू यात्रियों को शायद ही परेशान करते हों। वैसे तिब्बती डाकुओं की कहावत प्रचलित है कि "लूट करे तो अन्न जुटे कोरा (यात्रा) करे तो पाप छुटे।" [यात्रा को तिब्बती भाषा में कोरा कहते हैं।]

तिब्बती हवा बहुत ही तीक्ष्ण और तेज होती है। नियम है कि प्रातः सात बजे

से सूर्यास्त सायं सात बजे तक सांय-सांय, धांय-धांय करती हुई सुसवार करती हवा सतत चला करती है। हाँलाकि धूप हो तब टंड का प्रकोप कम होता है। कभी-कभी गरमी भी म्हसूस होती है, पर रात को अकसर पारा ३३ डिग्री पर पहुँच जाता है। आज दिन में कपड़े धोकर धूप में मजे से स्नान किया।

"किष्किन्धा" पम्पा सरोवर के पास के दक्षिण के एक यात्री परमहंस बाबा तथा अन्य पाँच पर्वतीय यात्री मिले। इन पर ऊंटा तथा जयन्ती धूरा पार करते हुए बरफ की भयंकर वर्षा हिमवृष्ठि होने से वे बेहोश से हो गये थे। पर पीछे आने वाले भोटिये व्यापारी इन्हें सम्हाल कर ले आये। पर वे सब बीमार हो गये थे।

यात्री कैलासपति महादेव की सन्ध्याकाल की आरती करके भजन धुन कीर्तन करते रहे, तब धार्मिक यात्रा की झांकी होती रही।

ॐ शान्ति

सर्वोदय कुटीर अल्मोड़ा (१०-१०-८३)

(१८) गुणवंती दिनांक २४ जुलाई शुक्रवार ३१

प्रार्थना प्रातः विधि के बाद पेट पूजन करके परमात्मा का स्मरण करके प्रस्थान किया। मैदान में चलते हुए दूर-दूर शुभ्र बर्फानी चोटी चमक रही थी। आज भी क्यांग वन घोड़ों के झुंड देखे। नजदीक जाते ही सरपट दौड़कर भाग जाते रहे। ताकलाकोट के जोंगपन (गवर्नर) ने क्यांग का एक बच्चा पकड़ कर भोटिये व्यापारी को दिया था। वही क्यांग महाराजा मैसूर ने झू ZOO गार्डन में अपने नगर में रखा था।

छींनकू तथा गुणवंती गंगा पार करनी पड़ी, गुणवंती का पट विशाल है। बर्फानी पहाड़ से निकली होने कारण पानी बिच्छू के डंक सा तीक्ष्ण ठण्डा था। और सफेदपन लिए मैला था। गुणवंती गंगा को तिब्बती लोग पुँगवती कहते हैं।

आज तिब्बती प्रदेश में तिब्बती घोड़े पर तिब्बती (जीन) बांखर पर सवारी करने में आनन्द आया। बचपन में सौराष्ट्र—गीर—खंभाती धातखड़ी नदी पट्ट में सीख कर उस्ताद घुड़सवार बन गया था। चाचा पुलिस अफसर थे अतः अच्छे से अच्छे घोड़े मिल जाते थे। आज बचपन की करामात का उपयोग हुआ। आठ मील की यात्रा के बाद गुणवन्ती (पुंगवती) पर 'चीलघोल' पड़ाव पर डेरा तम्बू तान कर मुकाम किया।

दिनांज २५ जुलाई, शनिवार ३१

तम्बू का मुख पूर्व दिशा की तरफ होने से साढ़े पाँच बजे ही भास्कर देव-सूर्यनारायण की सुनहली किरण के चमकते हुए प्रकाश से जाग्रत हुए। दातून के लिए यहाँ बबूल या तेजबल, पद्म, तो यहाँ कहाँ मिले ? अतः टुथ-पेस्ट (मंजन) ब्रश और जीभी का उपयोग करते हैं।

आज एक ऊँची धार पर चढ़ते ही 'श्री कैलास' शिखर का दूर से प्रथम बार दर्शन किया। ॐ नमः शिवाय। शुभ्र, श्वेत, हिमालय के ही बने शिवलिंग के आकार के इस अद्‌भुत, भव्य, दिव्य पर्वत को प्रणाम किया। एक तरफ गुरलामान्धाता जो कि सुमेरु श्री कहलाता है,—वह बरफ से भरपूर, भव्य हिमालय श्री कैलास महादेव के द्वारपाल से स्थित हैं।

आज इसी स्थान पर ही मुकाम करना पड़ा। भोटिये व्यापारी कल ठाजंग में कुत्ते की निगरानी में माल छोड़ आये थे, उसे लेने गये। सचमुच इन लोगों के कुत्ते सचेत चौकीदार और वफादार प्राणी हैं। लम्बे भरे पूरे बालों से देह भरा है। आवाज भी राक्षसी है। सावचेती भरी चौकीदारी अपने मालिक के माल की करता है।—माल पर तिरपाल ढंक कर 'सौगन्द' कह कर पत्थर रख देते हैं। पत्थर रखने वाले ही 'माल' को ले सकते हैं। वहीं पर कुत्ते को बैठा देते हैं। निश्चिन्त होकर व्यापारी अगले पड़ाव पर पहुँच कर दूसरे दिन माल लेने आता है। कुत्ता तब तक वहीं जाग्रत बैठा रहता है। युधिष्ठिर का साथ पत्नी तथा भाइयों ने हिमालय में छोड़ दिया। पर कुत्ता ही अन्त तक साथ रहा।

जीवन में प्रथम बार चंवर गाय के मक्खन और दूध का स्वाद चखा। भैंस के दूध से ज्यादा घट्ट तथा अधिक मीठा लगा। यहाँ की भूमि तथा महीन घास का प्रताप होगा। मक्खन को चमड़े की थैली में भरने की रीति अच्छी न लगी। पर यहाँ तो यही साधन है। बर्फानी हवा का चमत्कार है कि मक्खन महीनों तक अच्छा रहता है। रेफरीजरेटर से भी अच्छा।

चंवर गाय—भैंस से बड़ी— रंग काला या सफेद देह पर छः इंच से बारह इंच तक के लम्बे बाल होते हैं। पूँछ के बाल तो गजब के गुच्छेदार होते हैं। देवमन्दिर में तथा सम्राट के सिर पर चंवर पूँछ से चंवर डुलाने का रिवाज भारतवर्ष में प्रचलित है।

सींग नोकदार, मुंह साधारण बैल जैसा, आँखें खूंख्वार लगते हुए भी सरल और सौम्य प्राणी हैं। नर चंवर याक कहलाता है। यही 'शिव जी का नन्दी'—पोठिआ है। तीन मन वजन उठाने के अलावा एक सवारी को भी आसानी से ले चलता है। चाल धीमी पर सतत रहती है "वन्दन हो शिव जी के नन्दी को।"

ॐ शान्ति सर्वोदय कुटीर अल्मोड़ा ११-१०-८३

(१९) ज्ञानिमा दिनांक २६ जुलाई, रविवार ३१

आज तो गजब की ठण्डी। पारा २६° डिग्री पर पहुँच गया था। वह भी तम्बू के अन्दर। पानी की बाल्टी तम्बू के बाहर रखी थी। उसका पानी जम कर बर्फ बन गया था। बेमालूम बाहर रखे बूट के अन्दर पड़े पानी से इटली के नकशे की तरह दूसरा बूट बर्फ का बन कर बैठ गया था। उसे गरम करके पिघला दिया।

यात्रियों ने नियमानुसार आगे की यात्रा के लिए प्रस्थान किया। तिब्बत में मैदानी रास्ता है। पर सड़क नहीं है, दिशा (निर्धारित) की तरफ ध्यान रख कर घोड़े, खच्चर को दौड़ाते जाना और पड़ाव पर पहुँचना। पड़ाव – जहाँ पानी, घास तथा डामा बेर के छोटे पौधेनुमा पेड़, जिसकी हरी जड़ जलावन के काम आती है यानी रसोई उससे बनाई जाती है; जहाँ यह तीनों चीज हों वहीं पड़ाव डालना सुविधाजनक है। 'डामा' वनस्पति कुदरत की अद्भुत करामात है। तिब्बत में यह विपुल मात्रा में मिलती रहती है। यह छोटा सा पौधनुमा पेड़ (हिंसालु किल्मोड़ा जैसा) तदन (तब निरन्तर) हरे होते हैं—उसकी जड़ उखाड़ कर लाओ यह दिये की तरह जलती रहती है रोटी तो बहुत अच्छी बनती हैं, पर दाल-चावल तो पतली हवा के कारण अच्छी तरह नहीं पकते, पर अब वहाँ यात्री 'प्रेशर कुकर' ले जाते हैं; उससे दाल चावल सब्जी अच्छी तरह पकते हैं। यह प्रयोग सफल हुआ है।

हम लोग तो यात्रा में अक्सर रोटी, चटनी या गुड़ के साथ भोजन करते थे। भूख लगने से वह स्वादिष्ट लगता ही था। हाँ, कहीं पूरे दिन पड़ाव यानी मुकाम रहता वहाँ दाल-भात बनाते थे, पर अच्छी तरह गलता नहीं था। फिर भी हजम हो जाता था। वैश्वानल की पूजा करनी पड़ती थीं। 'स्टोव' साथ में था, पर मिट्टी तेल का स्टॉक सीमित होने से विशेष प्रसंग पर ही स्टोव का उपयोग करते थे।

डामा वनस्पति में छोटे-छोटे कांटे होते हैं। घास के तृण ऊपर निकले हुए रहते

हैं। उसे पशु बकरी वगैरह चर खाते हैं, ताकि मूल यानी जड़ सुरक्षित रहने पर फिर उग आती है। इस तरह कठिन पथरीली भूमि में घास और लकड़ी का प्रबन्ध कुदरत ने कर रखा है। "परमात्मा सर्व का पोषण--कर्ता-भर्ता है न ?" अय डामा ! क्या तूने दैवी दया के रूप में ही तिब्बत में अवतार लिया है ?

"जब दाँत न थे तब दूध दियो, अब दाँत भये कह अन्न न दै है ?"
जो जल में थल में पशु हच्छिन की सुधि लेते सो तेरेई लै है।
काहे को सोच करे मन मूरख, सोच किये कछु हाथ न ऐ है।"
जान को देत, अजान को देत, जहान को देत सो तोहुको दै है।

श्री कैलाश शिखर के प्रति दौड़ते से जा रहे हैं। लक्ष्य-ध्येय सामने ही है। "अकल कला खेले नर ज्ञानी, जैसे ही नाव के हीरे फीरे। ध्रुव तारे पर रहत निशानी।" कैलाश शिखर का ऊपरी हिस्सा श्वेत बर्फ सा रुपहला--चाँदी सा तो कभी सूर्यास्त की छाया पड़ते सुनहला - भगवा रंग सा—अजीब छटा से चमकता था। शिव शंकर के गण की तरह 'गुरला मान्धाता' 'आगे बढ़ो' की आज्ञा देता हुआ स्वयं, अटल-अचल खड़ा है। साढ़े तीन मील चलने के बाद दमयंती गंगा बीच में आड़ी पड़कर 'नल-दमयंती' का स्मरण कराती है। 'ओ नल ! ओ नल ?' कहती हुई वैदर्भी वन में बिलखती है। इस तरह ख ल खल (कल-कल) करती बहती जा रही है। विशाल पट वाली, शीतल जल वाली उस गंगा को एक खच्चर पर हम दोनों ने बैठ कर पार किया। आज की यात्रा ग्यारह मील करके 'ज्ञानिमा मण्डी' पहुँच कर डेरा तम्बू डाला। उसी समय मण्डी के तिब्बती प्रबन्धक ने सूखे खुमानी—फतींग- मेवे से स्वागत किया।

शाम को एक मित्र के साथ एक मील दूर घूमने गया। यहाँ लगभग तीन मील व्यास वाला सुन्दर तालाब देखा। पानी पर श्वेत बर्फ से बत्तख कल्लोल करते खेल रहे थे जैसे कि "मानसरोवर में राजहंस।"

दाहिनी तरफ 'खर' यानी किल्ले की चढ़ाई चढ़ने लगे। आधे मील चढ़कर उस प्राचीन प्राचीर के शिखर पर पहुँच गये। दन्त कथा है कि "यहाँ प्रथम सूर्यवंशी लामा रहते थे। उनके श्राप से यहाँ बस्ती नहीं रह पाती। यहाँ का मनहर, सुहावना दृश्य, श्री कैलास तथा मान्धाता पर सूर्यास्त के सुनहली किरण से चमकते अद्भुत और दिव्य दर्शन (दृश्य) निहारते हुए सांय प्रार्थना की। बड़ी देर के बाद 'श्वेत कुटीर' तम्बू में आकर निद्रा देवी की गोद में समाधिस्थ।"

ॐ शान्ति।
सर्वोदय कुटीर अल्मोड़ा ११–१०-८३
ॐ शान्ति १६-१–८४

"ज्ञानिमा"

दिनांक २७ जुलाई १९३१ सोमवार

श्री कैलाश मानसरोवर की यात्रा को अल्मोड़ा से प्रस्थान किये आज एक माह पूरा हुआ, तिव्बत भूमि में प्रवास, श्वेत कुटीर तम्बू में निवास, हिमालय पर्वतों में वास, कैलाश तथा मान्धाता के दूर से दर्शन, ये सब अनेक तरह का अनुभव लेता हुआ समुद्र के पास सौराष्ट्र का एक युवक भारत से बाहर पर्यटन व यात्रा करे यह परमात्मा की कृपा पर "सर्व भूमि गोपाल की" सर्वत्र सर्वेश्वर का साम्राज्य है। अतः साहस के साथ श्रद्धा उत्पन्न होती है।

"वसुधैव ! विश्व ! कुटुम्बकम्"

हिमालय की हारमाला के तीन उत्तुंग उच्च चोटी "ऊंटाधूरा" "जयन्ती" "कुँगरी बींगरी" घाटी पार करने के बाद तिब्बत प्रदेश में पहुँचते हुए (Roof of the World) दुनिया के छप्पर पर बारह से पन्द्रह हजार पर तो है ही। सारे जगत में इतनी ऊँचाई पर इतना विशाल मैदान तो यही है। ऐसे मैदान में दूर-दूर जाने पर भी शौच की समस्या खड़ी हुयी। शौच व्यवस्था के लिए इतना सोच-विचार काहे का ? थोड़ी दूर ३ फीट गहरा ३ फीट चौड़ा गोल गोप्तों मिल गया। बर्फ की वर्षा तथा ओले की मार से बचने के लिए बिना तम्बु वाले गरीब हुणिये ऐसे "गोप्ता" बना लेते हैं। गोप्ता यानी गुत।

ज्ञानिमा मंडी के विषय पर ज्ञान देना एक मौज है। ज्ञानिमा मंडी से मिलम लगभग ५० मील दूरी पर तिब्बत में है। ऊँचे नगाधिराज हिमालय के तीन विकट शिखरों को पार करके यहाँ हम पहुँचे। मुँगालते में नहीं रहना कि इस मंडी में दुकानों की लम्बी चौड़ी लाइन या ऊँचे नीचे मकान होंगे। ज्ञानिमा मंडी समुन्द्र सतह से लगभग १५ हजार फीट की ऊँचाई पर है। शीत काल में तो ५-१० फीट तक हिम बर्फ पड़ता है। उस समय यहाँ रहना मुश्किल है। हिमालय में हाड़ गलाने वाली ठण्डी होती है। इसलिए जुलाई, अगस्त, सितम्बर तीन माह तक मंडी की रौनक रहती है। अक्टूबर में बर्फ पड़ने के पहले हिमालय की शीतल हवा बहने के पहले भोटिये तथा तिब्बती व्यापारी सौदा करके बणजार काफिले में चले जाते हैं।

एक समय की भयंकर निर्जनता की जगह पर इन दिनों जंगल में मंगल की तरह जनता के कोलाहल से मंडी भरी पड़ी है। भारत से जोहारी भोटिया व्यापारी ल्हासा

से तिब्बती हुणिये लदाखी चीनी, तातारी तुर्किस्तानी वगैरह विविध प्रदेश के लोग, भयानक घाटियों और नदी नाले हिमालय के गगन चुम्बित धवल हिमगिरि शृङ्गों को जान खतरे में डाल कर साहसिकता के साथ पार करके, अनेक संकटों का सामना करते हुए घोड़े, खच्चर, गाय, चंवर, याक, गधे, बकरी, झब्बू आदि जानवरों पर अपना माल ज्ञानिमा मंडी में ले आते हैं। कितना अपूर्व साहस ? जान को खतरे में डालने वाले इस साहस की कल्पना करते हुए कंपकंपी छूटती है और सब कुछ तुच्छ नाश्वत जीवन जीने के लिए। यानी पेट के खातिर।

भारत के भोटीये व्यापारी आधुनिक सभ्यता की सारी चीजें यूरोप, अमेरिका, जापान की बनी हुई तिब्बत जैसे सदियों से पिछड़े प्रदेश में पहुँचाकर विनिमय ढंग से (बार्टरमेथड) व्यापार करते हैं अनाज सत्तू तथा कपड़े भी काफी प्रमाण में लाते हैं। इस बिपुल सामग्री के बदले तिब्बती व्यापारी बकरी का विशेष प्रमाण में तो भेड़ की अच्छी किस्म की ऊन, नमक, सुहागा (बोरेक्स) दन गलीचा वगैरह देते हैं लदाखी लोग अपने गधों पर सूखे मेवे, फतींग करणदारव, ऊनी चादरें तथा पश्मीना वगैरह लाते हैं।

झरने के इस किनारे भोटिया तथा लदाखी व्यापारियों के तम्बु तने हुए हैं हुणिओं के काले तम्बु आज तक लगभग एक सौ पचीस जितने काले धौले तम्बुओं की हार लग गई है जैसे कि वस्त्र नगरी बस गई हो। तम्बु खड़ा करके झरने के किनारे से घास सहित मिट्टी काटकर ईंटों की तरह दीवार चिनकर माल पेटी तथा गठरी रख देते हैं बस तीन महीने के लिए बसने के लिए बसने का मकान तैयार हो गया। दुकान पेढी तथा घर जो कहो सो यही है।

"मिट्टी चुन-चुन कर महल बनाया गँवार कहे घर मेरा है" "कच्ची मिट्टी का बना तू पुतला घड़ी पलक में गल जाता।" "कहत कबीर सुनो भाई साधो रामनाम क्यों नहीं स्मरता" लुमष ऋषि जंगल में तपस्या करते थे उन्होंने झोपड़ी नहीं बनाई। किसी ने पूछा "महाराज झोपड़ी बना लो न" उत्तर दिया कि थोड़ा समय तो जीना है क्यों व्यर्थ झोपड़ी बनावें, कितनी आयुष्य है ?"

त्रिकाल ज्ञानी तो थे ही, कहा कि शरीर में साढ़े तीन करोड़ रोम हैं। हर एक रोम एक हजार वर्ष में गिरते जावेगे सब गिर जायें तब मृत्यु होगी तब तक सूर्य की धूप इधर आई तो घास का एक गट्ठर रख दिया उधर धूप आई तो वहाँ रख दिया, कितनी अद्भुत मनोबृत्ति ?

हमारा तम्बू यानी वस्त्र-कुटीर

ज्ञानिमा "खर" यानी किले के पास ही अलग सा है किले की धार पर चढ़ते ही कैलाश तथा मान्धाता का स्पष्ठ दर्शन होता है।

दिनांक २८ जुलाई मंगलवार १९३१

प्रार्थना नित्य नैमित्तिक आदि कार्यों से निबृत्त होकर पत्र लिखने लगा यहाँ डाक की व्यवस्था तो नहीं है फिर भी नवीनता यह कि तिब्बत भूमि में बैठकर पत्र लिखे जाते हैं कोई भोटिया व्यापारी भारत में जाने वाला हो उनके हाथ से डाक भेजी जा सकती है। तब वह भारत की पोस्ट आफिस यानी मिलम ग्राम के डाकखाने से पत्र गन्तव्य स्थान पर पहुँच जावेगा। बाद में पता लगा कि सब पत्र यथा स्थान पहुँच गये थे।

मंडी देखने गये। विशाल तम्बु के पीछे के हिस्से में भोजन बनाने की खाने-पीने की व्यवस्था है। अगले हिस्से में सजावट के साथ दुकान की सारी सामग्री सुन्दर तरीके से व्यवस्थित रखी हुयी है। तम्बु के ऊपर तिब्बती लिपि में लिखा हुआ रहता है कि "ना छूक छंग कांग" यानी हर तरह का माल मिलता है यानी जनरल मर्चेन्ट समझो। हुणिये लोग सिर की चोटी फटकारते हुए 'बक्खू' चमड़े का लम्बा-चौड़ा चोगा पहन कर एक हाथ बक्खू से बाहर लटकाकर एक तम्बु से दूसरे तम्बु में दुकानों में ग्राहक बनकर घुसते हुए सौदा खरीदते हुए दिखाई देते हैं। भोटिये व्यापारी शान के साथ सौदागर बनकर सैकड़ों रुपयों के सुन्दर डिजाइन वाले गलीचे पर शान से विराजे हुए हैं। मुनीम गुमाश्ते नौकर अपने-अपने कार्यों में व्यस्त हैं। सिक्के के चलन में हिन्दुस्तान के चांदी के रुपये तथा तिब्बती टंका चलता है। इस टंके के दर में अक्सर रद्दो बदल होता रहता है। कभी तो एक रुपये के आठ तो कभी दस भी होते हैं। इस समय एक रुपये के आठ टंके मिलते हैं। हिन्द के रुपये जिस तिब्बती लोग 'गुरमा' कहते हैं—उसे अधिक पसन्द करते हैं। प्राचीन समय की तरह यहाँ अब भी वस्तु विनिमय द्वारा व्यापार होता है।

ज्ञानिमा मंडी में साधारणतः ६-७ या दस लाख रुपयों का व्यापार होता है। इस मंडी में काम पूरा करने के बाद भोटिया व्यापारी 'छाकड़ामंडी' होकर दूर 'गरतोक' मंडी में व्यापार अर्थं जाते हैं। वहाँ से तिब्बत के ताकतवर घोड़ों को खरीदकर विक्री अर्थ भारत में पहुँचते है, वहाँ नेपाल की हद के पास काली गोरी के संगम स्थान जोलजीवी मेले में लगभग पन्द्रह नवम्बर को पहुँच जाते हैं। भोटिए तथा हुणिये व्यापारियों के बीच आढ़ती के मित्र सम्बन्ध विशेष विधि पूर्वक होते हैं। जब मित्र बन जाते हैं तब (अरस-परस) परस्पर लेन-देन, नये वस्तु निनिमय हो सकता है। इकरार नामें में निम्न बातें लिखी जाती हैं। "जब तक कैलाश पर्वत का बर्फ पिघल न जाये, मानसरोवर का जल सुख न जावे तथा बनघोड़ा क्यांग के सींग उग न आवे तब तक हमारी मित्रता के सम्बन्ध रहेंगे। इस तरह करारनामा लिखने के बाद वे लोग नमकीन चाय, सत्तू आदि की दावत देते हैं। यह मित्रता वंश परम्परा चलती रहती है।

मंडी में रंग बिरंगी विविध विचित्र पोशाक और विविध चेहरे वाले मनुष्य देखे गये। तिब्बती स्त्री और पुरुषों को पहचानने में अक्सर भूल हो जाने की सम्भावना रहती है दोनों के सिर के बाल लम्बे होते हैं। दाढ़ी, मूँछ भी नगण्य से। पोशाक भी लगभग एक सा ही होता है मानो "अर्ध नारी नटेश्वर।"

साधारणतः स्त्रियाँ शृंगार भी कभी-कभी सजाती हैं। तब तो और रुप लगता हैं। चोटी की हर लट में मोती, मूँगा, पुखराज पिरोकर वेणी गुथती हैं मुख सूर्य जैसे चौड़ा नाक पिचका हुआ होता है। आँख में सौम्यता तथा मधुरता का अभाव सा लगता हैं।

ज्ञानिमा में दिन में गरमी काफी लगती हैं। पारा ६५ से ७० डिग्री पर पहुँच जाता है। परन्तु रात में ३५ से ४० डिग्री नीचे उतर कर ठंडी की चमकार होती हैं क्योंकि चारों तरफ हिममय गलेशियर हैं। आज तो ओले भी पड़े। यह भी आडू खुमानी जैसे बड़े-बड़े और सख्त काँच की गोली की तरह कठिन अगर खुले मैदान में बिना आशय खड़े हों तो तड़ातड़ कुदरत का कोप उतरता। तम्बु को चीरकर अन्दर ओले आने लगे। चारों तरफ की भूमि श्वेत बन गई। मानो कुदरत ने मोती का चौक सजा दिया हो।

ज्ञानिमा मंडी में तिब्बत सरकार यानी दलाई लामा की तरफ से कर उघाने वाला अफसर 'दाबा छारयों' ल्हासा से आता है। हमारे यहाँ ऐसे कलेक्टर होता है उसी रेंक के बराबर होते हैं।

भारत के जोहारी व्यापारी से कर के रूप में नब्बे (९०) भेली गुड़ की वसूल करते हैं। पहले कभी तिब्बत और भूटान के बीच लड़ाई हुई थी तब भोटियों ने तिब्बत सरकार को सहायता दी। उसके बदले में यह नाम मात्र का कर लेकर भोटिओं के प्रति कृतज्ञता दिखाई है अन्य मण्डिओं में तो इससे कहों अधिक कर उघाया जाता है।

हिन्द सागर की तरफ से एक एजेन्ट शिमला से यहाँ ज्ञानिमा मंडी में हर वर्ष आते हैं। भोटिए और हुणियों के बीच के मुकदमों की सुनवाई करते हैं। इस ट्रेड एजेन्ट के साथ एक डाक्टर भी होता है एजेण्ट की डाक शिमला होकर पहाड़ पार करती हुई यहाँ पहुँचती है।

कैलाश की यात्रा अति कठिन होने के कारण सभी यात्री यहाँ इक्ट्ठे होकर मिल कर पूरा संघ आगे प्रयाण करते हैं यहाँ से खाने पीने का पूरा सामान रहने को तम्बु तथा बोझ उठाने के लिये चंवर गाय, याक घोड़े, खच्चर आदि की व्यवस्था यहाँ कर लेनी पड़ती हैं। क्योंकि भीटिये व्यापारियों का साथ यहाँ से छूट जाता है। हमारे आने से पहले ही लगभग ४०-५० यात्री राह देखते हुए यहाँ ठहरे थे। जिनमें दस बारह महिलाएँ भी थीं, यात्रियों में कुछ गृहस्थ तथा साधु सन्यासी हैं। अब हम लोग भी सात यात्री सम्मिलित हुए।

मण्डी से आवश्यक चीजें खरीद लेनी होती हैं। हमने भी सत्तू (गेंहूँ, जौ, उवा में से बनाया जाता है।) रुपये के छः पौंड के हिसाब से खरीदा। मिलम से घोड़े खच्चर ज्ञानिमा मण्डी तक किराये पर मिले थे। यहाँ से आगे की यात्रा के लिए वाहन की खोज शुरू की। लदाखी गधे मिल सकते थे। परन्तु नदियाँ पार करते हुए छोटे कद के होने के कारण सामान भीग जाने की सम्भावना थी। अतः किसी हुणिया के चंवर गाय, याक के आने तक ज्ञानिमा मण्डी में रुकने का तय हुआ।

कैलास यात्रा का लक्ष्य था ही। लक्ष्य के लिए राह देखना भी तपस्या या साधना है। "जो राह देखता है, वह राहत पाता है।" अतः यात्री संघ ज्ञानिमा मण्डी में राह देखता हुआ शान्त पड़ा है। धीरज के फल मीठे होते हैं।

(२०) तिब्बती हाकिम दिनांक २९ जुलाई बुधवार, १९३१

तिब्बत की राजधानी ल्हासा से हर साल ज्ञानिमा मण्डी में कर उँधाने के लिये एक अफसर—सरकारी कर्मचारी 'दाबा छाक्स्यों' आता है इन्हें मिलने के लिये स्रोत के सामने किनारे प्रातः आठ बजे हम पाँच लोगों ने प्रस्थान किया।

दो तंबु आमने सामने हैं। एक में नौकरों के रहने के लिये तथा रसोई का व्यवस्था है दूसरे तम्बु में स्वयं 'दाबा छाक्स्यों' रहते हैं। तिब्बती कारीगरी वाला कलामय सुन्दर गलीचा बिछा कर स्वागत किया। तम्बु श्वेत सुन्दर पर नाजुक था। एक कोने में एक तिब्बत की कारागीरी वाले सुन्दर मेज पर सोने चाँदी के खोल में सिंहासन पर नृसिंहावतार, शंकर तथा बुद्ध देव की मूर्ति स्थापित की थी। मूर्ति के पास तीन तलवार खड़ी की थी। इस देव स्थान के पास ही स्वयं दाबा छाक्स्यों शाम से विराज मान थे। सामने ऊत्तम चीनी चाय की चमड़े के बक्से मेज की तरह रखे थे। तम्बु के मध्य स्तम्भ के साथ राइफल, बन्दूक तथा दूसरे स्थान पर छोटी कटार व खुंखरी टंगी हुई थी।

'दावा-छाक्स्यों' का प्रथम निगाह से देखते हुये ख्याल आना स्वाभाविक था कि यह ल्हासा की राज वंशी उच्च खानदान के हैं। चेहरे-पर नूर तथा सात्विक भाव टपकता था। गौरवर्ण लम्बे भरपूर देह के थे। तेजस्वीता चमक रही थी काली बनात का लम्बा लबादा पहना था। ऊपर पीली साटीन का कबजा तथा रेशमी कमर बन्द शोभित या घूटने तक के तिब्बती बनावट का मखमल व बनात मढ़ा हुआ चमड़े का बूट पहना था। सिर सफाचट था। एक सम्प्रदाय के लामा बाल नहीं रखते। सिर पर लम्बी ऊँची मीनार जैसी लाल रेशम की टोपी ताज की तरह पहनी थी बायें हाथ में सोने की संकली (चैन) तथा दाहिने हाथ माला पहनी हुई थी इस तरह भव्य पुरुष भाषित होता था।

साथ भोटिया भाई ने हमारे बीच दो भाषिया का काम किया। प्रथम तो चीनी याकटी के कीमती प्यालों में चंवर गाय के दूध की चाय पिलाई। याकटी सैल्यूलाइट की सी चीज का प्याला १५-२० रुपये का होता है। इसके बाद नमकीन चाय नौकर परोसने लगे। अब नमकीन चाय पीने का कुछ अभ्यास हो चुका था। जिससे एक के बाद एक नौ प्याले समाप्त किये। इतने समय में तो "ज्ञान जन टशी" तो पन्द्रह-बीस प्याले पी चुके थे। फिर भी पीना जारी था। अन्त में, जब प्याले उल्टे करके रखे, तब हम छूटे। यही रिवाज है। 'ज्ञान जन टेशी' का फोटो लेने की अभिलाषा प्रकट की। सहर्ष स्वीकार करके तम्बू के बाहर मेज पर आसन बिछा कर वे विराजे। गोद में छोटा सा सुन्दर पर नाजुक चीनी कुत्ते का बच्चा लिया। दोनों तरफ उनके दो नौकर सशस्त्र तलवार सहित बन्दूक तानकर सैनिक वेश में खड़े रहे। हम सबका एक साथ ग्रुप फोटो भी लिया। इस फोटो की प्रतिलिपि गढ़वाल नेती (नीति) माना के रास्ते 'थोलिंग' मठ के मार्फत मंगाने की व्यस्था की।

तम्बू में आकर फिर हमारी गोष्ठी चली। प्रथम ल्हासा के मठ की प्रसादी "मीलव" की तीन गोली दी। तिब्बती रिवाज के अनुसार सफेद कपड़े का टुकड़ा खातक भी प्रसाद रूप दिया। बुद्ध भगवान तथा अन्य देवी-देवताओं के बीस चित्र सजे हुए रखे थे। यह चित्र तिब्बती कला के अनुपम नमूने थे। स्वयं ज्ञानिमा मण्डी से छाकड़ा मण्डी तथा गरतोक मण्डी होकर थोलिंग मठ के रास्ते सीधे ल्हासा जायेंगे या शायद् कलकत्ता होकर ल्हासा जावे।

तिब्बत में एक आम नियम है कि प्रथम पुत्र या पुत्री को मठ में अर्पण कर देना होता है। पुत्र को 'दाबा' तथा पुत्री को 'चोम्' कहते हैं। ये दाबा अविवाहित रहते हैं। यह दाबा या लामा दुश्चरित्र पकड़े गये तो सफेद चोला पहना कर मठ से निष्कासित कर देते हैं। तिब्बत में इस तरह के बिहार मठ बहुत हैं। उसमें रहने वालों की संख्या सात हजार सात सौ सात, पाँच हजार पाँच सौ पाँच, तीन हजार तीन सौ तीन—इस तरह होती है। जिस मठ में यह "दाबा छा-क्ष्यो" "ज्ञान जन टशी" रहते हैं वहाँ तीन सौ दावा-लामा हैं। लड़ाई के समय यह सब खड़ी फौज बन कर तैयार हो जाते हैं।

तिब्बत में पांडवो की पत्नी पाञ्चाली की तरह सब भाइयों की एक ही पत्नी होती है। स्त्रियों को काफी स्वतन्त्रता है—व्यापार तथा गृहस्थी के कार्यों में उनकी सलाह आवश्यक होती है। विवाह की पद्धति भी विचित्र है।

तिब्बत में हाल में दार्जिलिंग से ल्हासा तक मोटर-रास्ता बना तो है, पर मोटर शायद ही चलती हो। एक धनी व्यक्ति ने "दलाई लामा" को पाँच मोटर भेंट की।

तिब्बत का दलाई लामा सर्वोच्च धर्मगुरु तथा सर्वेसर्वा या राजा माना जाता है। दार्जीलिंग से फेरी, वहाँ से डोमा होकर ल्हासा पहुँच जाता है। पर डोमा से आगे कोई भी तब जा सकता है जब 'दलाई लामा' की स्वीकृति मिली हो। ल्हासा से पाँच नवयुवक विद्यार्थी ज्ञाखर जाखर यानी भारतवर्ष तथा उतने ही ज्ञानक यानी चीन में शिक्षण के लिए भेजे गये हैं।

"दलाई लामा" का देहान्त हो जाता है। जब उसके पुनर्जन्म होने पर वही दलाई लामा बनाये जाते हैं। पुनर्जन्म हुआ उसकी खोज की अनोखी रीति है। 'लामा' के देहान्त के दिन उसी समय जो बालक जन्मे, उन सबको दो-तीन बर्ष के बालकों को एकत्रित करके—दलाई लामा ने जिस घोड़ी का उपयोग किया हो—वह बहुत से घोड़ों के साथ मिला दिया जाता है। जो बालक सही घोड़े को खोज दे—उसे पुनर्जन्म हुआ माना जाता है। इस तरह सोने चाँदी के बर्तन, कीमती गलीचे आदि की परीक्षा ली जाती है।

राज्य व्यवस्था के लिए तिब्बत को अलग-अलग प्रदेश में राजवंशी गवर्नर भेजे जाते हैं। उन्हें वेतन नहीं दिया जाता। पर उनसे ठेकेदार की तरह नियत रकम ले कर उस प्रदेश का शासक बनाया जाता है। बड़ा हाकिम 'गरफन' (गवर्नर जनरल) गरतोक मण्डी में रहता है। उसके नीचे जोंगपंग' (गवर्नर) ताकला कोट में और उसके मातहत का हाकिम 'तरजूम' बरखा में रहता है। यह व्यवस्था पच्छिमी तिब्बत की है।

दाबा-छा-क्ष्यों ल्हासा से आता है। उनका वेतन इस समय दो सौ टंका यानी पच्चीस रुपया है। उनकी शान और दबदबा तो सुबेदार से भी अधिक है। शायद सारा खर्च शासन से मिलता है।

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जी के, सत्याग्रह, स्वराज्य, अहिंसात्मक लड़ाई आदि इतिहास सुनने की जिज्ञासा "ज्ञान जन दशी" ने बतलाई। सुनकर उन्हें आश्चर्य हुआ गाँधी जी का फोटो मांगा उसे बड़ी श्रद्धा के साथ आँखों तथा सिर पर रखकर गाँधी-लामा कह कर इष्ट देवताओं के साथ स्थापित किया।

विदा-प्रस्थान के समय मैंने कहा—"आप तिब्बत वासी स्वतन्त्र हैं। पर हम भारतवासी को अपने राष्ट्र को स्वतन्त्र बनाना है पर कब ईश्वर इच्छा"—उत्तर दिया, "परमात्मा सब का कल्याण करता है।" ऐसा कह कर मिलने के सद्भाग्य के लिए प्रसन्नता प्रकट की "जू-जू" "प्रणाम हो, प्रणाम हो" कहते हुए हाथ लम्बा करके विदा दी।

गुरुपूर्णिमा आज अषाढ़ी पूर्णिमा होने से कैलास यात्रियों ने सत्यनारायण की कथा का संकल्प किया। तिब्बत भूमि में श्री कैलास के समक्ष भारतीयों की यह भक्ति देख कर आनन्द आया।

: श्रद्धावांल्लभते ज्ञानम् :

ओले की आज भारी वर्षा हो जाने के कारण चारों तरफ श्वेत भूमि बनकर अतिशय ठंड बढ़ गयी। इसी दिन दोपहर 'ज्ञान जनदशी' एक नौकर के साथ हमारे तम्बू में शिष्ठाचार के नाते आकर त्रिवेदी कहने के बदले विनोद में त्रिबेटी कहकर गाँधी लामा शिष्य कहा। सुनकर सभी हँस पड़े।

महात्मा गांधी के आदेश के अनुसार भारत की स्वतन्त्रता के लिए अहिंसात्मक सत्याग्रह करके जो बलिदान का इतिहास बन रहा है उसे सुनकर उन्होंने आश्चर्य प्रकट किया। एक तरफ तोप, बन्दूक, तलवार वगैरह शस्त्र। दूसरी तरफ शान्त अहिंसक स्वयं सेवक बिना शस्त्र के बीच कैसी लड़ाई। यह संसार के इतिहास में अनोखी बात है। फिर उन्होंने जोर से कहा—"मैं अब से विदेशी वस्त्र नहीं पहनूंगा। तिब्बत में बने स्वदेशी वस्त्र धारण करूँगा।

दाबा-छा-क्ष्यो ने तिब्बती भाषा तथा लिपि में अपनी स्मृति के खातिर (स्वहस्ते) अपने हस्ताक्षर से मेरी डायरी में निम्न प्रकार लिख दिया।

"ऊँ मनि पदमेइम्"—बो दाबा जोंग चिटुंग "ज्ञान जन दशीबोदपा" तो चंदा छारयो हीं//बो ल्हासा खमझया छीमनलैग ज्ञा बोलो हीं//

ॐ मणि पदमेइम्—तिब्बती गायत्री मंत्र—

मैं दाबा जोंग इलाके का नमक तथा उन पर कर उघाने वाला दाबा-छा-श्यो हूँ। मेरा नाम—

"चिटुंग ज्ञान जन दशी बोदपा" हैं। मैं ल्हासा में छीमनलींग नामक मठ में रहता हूँ।

(२१) तिब्बत में स्वतन्त्र भारत की जय
दिनांक ३० जुलाई, गुरुवार १९३१

"दाबा-छक्ष्यो"—"ज्ञान जन दशी" प्रातः आठ बजे हमारे तम्बू में अन्तिम विदाय देने आये उपहार के रूप में लगभग ५ पौंड फतींग (सूखा खुमानी) अर्पण की।

यात्रा में "अच्छी तरह जाना" ऐसा निवेदन किया। हमने भी उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट की और जू-जू कहकर प्रणाम करके प्रेम पूर्वक विदा दी।

धूप होने पर झरने पर जाकर कपड़े धोकर स्नान आत्म पूजन के बाद राय साहब श्री सोवन सिंह जंगपांगी के तम्बू में गये। ये सज्जन तिब्बत में बड़े सौदागर माने जाते हैं। उनके साथ तिब्बत की सरकार उनकी शासन पद्धति लामा लोगों की तपस्याओं कर्मकांडी आदि विषय पर सविस्तार जानकारी मिली। Mysterious land की बातें भी बड़ी रहस्यमयी होती हैं न?

दिनाक ३१ जुलाई, शुक्रवार, १९३१

ज्ञानिमा मण्डी से आज प्रस्थान करने का निश्चय हुआ। ज्ञानिमा से तीर्थापुरी के रास्ते कैलास मानसरोवर जाकर राक्षसताल से आगे 'करदम' तक पहुँचाने का किराया प्रति चंवर गाय याक का रुपया बारह तय हुआ। 'करदम' से तो ताकलाकोट सोलह मील दूर हैं।

प्रार्थना, आत्म-पूजन आदि से निवृत्त होकर सामान बाँधकर तैयार हो गये। परन्तु अभी प्रस्थान करने में देर है। क्योंकि जोहार नवयुवक संघ के मंत्री ने सभा का आयोजन कर रखा है।

तिब्बत भूमि में तिरंगा राष्ट्रध्वज लहराते हुए देखकर हृदय गद्‌गद् हो गया। "मेरा वतन वही है" (यानी भारत माता) के मंगलाचरण से सभा का कार्य शुरू हुआ। भोटिये व्यापारी तथा हुणीओं की उपस्थिति काफी थी। संगठन, शराब बन्दी, बाल विवाह तथा कन्या विक्रय के रिवाज खत्म करने और केटलरेवन्यू ब्रिटिश सरकार बन्द करे। भारत और तिब्बत की मित्रता, ज्ञानिमा मंडी की स्वच्छता आदि विषयों पर भाषण दिये। स्वतन्त्र भारत की जय 'महात्मा गांधी की जय' के जय घोष से सभा का विसर्जन हुआ।

ज्ञानिमा मंडी की स्वच्छता के विषय में कहने की आवश्यकता इसलिए पड़ी कि तिब्बती, हुणिओं तथा भोटिये वगैरह में मांसाहार बहुत ही प्रचलित है। देश काल के अनुसार शायद यही ठीक हो। परन्तु स्वच्छता का अभाव अधिक खटकता है। मंडी में जहाँ-तहाँ इधर-उधर चमड़े के टुकड़े तथा हड्डियाँ फैली हुयी हैं कि सम्हाल कर चलते हुए भी टकरा जाते हैं। वैसे तो सर्वत्र स्वच्छता की आवश्यकता है।

कैलास यात्रा में यात्री हिमालय के ठंडे प्रदेश में वहाँ के निवासियों को छोड़कर अधिकांश की ऐसी मान्यतायें हैं कि यहाँ शराब तथा मांसाहार आवश्यक है। परन्तु ऐसी कोई बात नहीं। शाकाहारी भी आनन्द से आसानी के साथ अपने नियम व व्रत को निभा सकते हैं। दूसरे लोग अगर सेवन करते हों तो उनके प्रति हेय दृष्ठि से नहीं देखना चाहिए। इन सबके साथ मधुर सम्बन्ध और मीठा व्यवहार करना चाहिए।

कैलास यात्रा में बिस्तर में एक मोटा कम्बल (थुलमा) तथा तीन ऊनी चादर से काम चलाया है। रुई की रजाई का उपयोग ठीक नहीं। कैलास परिक्रमा में रात को ऊनी बनियान पहनना पड़ा था। पर इतने बिस्तर से आसानी से काम चल सका। आश्चर्य की बात गरम पायजामा या पैन्ट नहीं पहना। पर खादी के पायजामे से काम चलाया। कैलास यात्रा को आने वाले समझ लें कि—"कल्पना में जितनी मुश्किल मालूम देती है। उतनी सचमुच में सहन नहीं करनी पड़ती। स्वयं संकट उतना भयप्रद नहीं है जितना उसके विचार या कल्पना।

कैलास यात्रियों के संघ को बिदा देने के लिए लगभग पच्चीस प्रेमीजन एक मील दूर तक जाये। आंसु भरी आँखों से विदा दी और हमने भी गद्गद् होकर विदा ली। इस करुणा विदाई गिरी का रहस्य या कल्पना रेलवे ट्रेन या मोटर वालों को कैसे आ सकता है। यहाँ तो भयंकर आफतों का, कुदरती प्रकोप का सामना करते हुए अगर ईश्वर कृपा से बच गये तो बचे। नहीं तो कैलास वास तो है ही।

ज्ञानिमा मंडी तथा उसके प्राचीन प्राचीर को हार्दिक प्रणाम करके कृतज्ञ हृदय से मित्रों का बंदन करके आंसू भरी आँखों सहित प्रस्थान किया।

कैलास यात्रियों का पूरा संघ चार मील चलकर 'रफ' नामके पड़ाव पर झरना किनारे डेरा तम्बू तानकर मुकाम किया। सामने ही हिमांचल मान्धाता का विराट स्वरूप सूर्यास्त के किरणों के कारण भगवा वस्त्र धारण करके गौरवान्वित खड़ा हुआ सात्विक प्रेरणा देता था।

जीभ थाकी विरमे रे विराट-विराट वदी

सायं प्रार्थना एकान्त में आनन्द से की। ज्ञानिमा मंडी से सब मिलकर हम पचास यात्रियों का संघ बना है। इसमें साध्वी, साधु-सन्यासी, गृहस्थी, पहाड़ी देशी, नेपाली, दक्षिण के तथा गुजराती वगैरह का शम्भु मेला बना है। परन्तु सब विविध होते हुए सभी का एक ही पवित्र लक्ष्य कैलास मानसरोवर यात्रा का है।

निर्जन मैदान में सात आठ तम्बू तने हुये हैं। धूनी के धुएँ आसमान में उड़ने

लगे। साधु, सन्यासियों के तम्बुओं से गांजा, चरस के दम खींचे जा रहे हैं। सब कोई अपने-अपने छोटे संसार की प्रवृत्ति में पड़े हुए मस्त हैं।

शाम के भोजनान्तर आरती और भजन कीर्तन के ललकार से वातावरण गूँजता है। शम्भु मेले में चँवर याक के साथ दो हूणिये भी साथी हैं। जानवरों पर से सामान उतार कर उन्हें चरने छोड़ दिये हैं। हूणिओं ने अपने डेरे पर धूनी पर चाय की केतली रखी है। बस! भर-भर प्याले पर प्याले चाय का दौर चल रहा है। वहीं भोजन भी बना लेते हैं। इस तरह आकाश के नीचे, पर्वत और पृथ्वी के ऊपर परमात्मा की शरण में सब कोई शान्त हो गये।

ॐ शान्ति सर्वोदय कुटीर अल्मोड़ा

(२२) तीर्थापुरी दिनांक १ अगस्त शनिवार ३१

कैलासपति शंकर महादेव के जयघोष के साथ प्रातः काल यात्रियों में विविध प्रान्त के भिन्न-भिन्न प्रकृति के लोग होने से उनके जीवन इतिहास जानने की अभिलाषा हुई। इसलिए आज एक नागा बाबा के साथ बातें करते हुए रास्ता नापने लगे। इस तरह बारी-बारी से सभी से परिचय करना है।

दो मील का मैदानी रास्ता तय करके पौन मील की चढ़ाई चढ़कर लाब्जा (पत्थर के ढेर) शिखर पर हर यात्री 'शो-शो' पुकार के साथ पुष्पांजलि स्वरूप एक-एक पत्थर रखने लगे। तिब्बत में यह रिवाज है। और है भी वैज्ञानिक। वहाँ जरा आराम करने बैठे। दूर-दूर काले सफेद तम्बु ज्ञानिमा मंडी के दूरबीन से देखकर हार्दिक प्रणाम किया। अब उतार आया, फिर एक मील की कठिन चढ़ाई। बूंद-बूंद चल कर तालाब बनता है। कंकड़-कंकड़ से किनारा बँधता है। वैसे ही पग-पग पर डग-डग चलकर पहाड़ चढ़ा जाता है। "एक डगलु बस थाय One step enough for me."

समुद्री सतह से इस समय हम लोग सोलह हजार फीट ऊँचाई पर थे। चारों तरफ श्वेत बर्फानी पहाड़ है। पर्वतमालाओं की हार पीछे एक और लम्बी हारमाला लम्बी पड़ी थी। कदम-कदम पर "पार्वतीपतये नमो नमः" "कैलासपति महादेव की जय" "जय कैलास तेरी आस" के जयघोष करते हुए चढ़ रहे थे।

एक पहाड़ चढ़कर नीचे उतरे तो दो ऊँचे पहाड़ की घाटी में फँस पड़े। मानों कि ऐतिहासिक हल्दी घाटी में घुस गये। ठंडी और सरल बजरी पड़ने लगी। ज्वार के

दाने की तरह गोल-गोल फूल झरणी आकाश में से झर रही थी। पहाड़ों पर स्वस्तिक के से मोती के चौक पुरने लगे। पन्द्रह हजार फीट पर ठंड की नानी बनकर बजरी बरस रही थी। उस समय एक मस्त चँवर याक को नाचने का मन हो गया। मस्ती की खुमारी चढ़ जाने से सामान नीचे फेंक दिया। आजाद हो गया। गटुक हुणिया (गाइड या गार्ड) ने बड़ी मुश्किल से आगे के दो पैर बाँध दिये। पर वैसे तो याक आसमान में उछलने का प्रयत्न करने लगा। अन्त में वो राक्षसी मस्त जानवर आजाद बनकर भाग ही गया। उसका फेंका हुआ पूरा ढाई मन का बोझ स्वयं हूणिया ने अपनी पीठ पर उठाकर पड़ाव पर पहुँचाया। कैसी दिलेरी व बहादुरी। (तिब्बत का हवा पानी)।

दस मील चल कर 'जीटूंग' नाम के पड़ाव पर झरना किनारे डेरा (तम्बू) तान कर मुकाम किया। यह पड़ाव चारों चरफ ऊँचे पहाड़ों की घाटी के बीच सकरी नहर में होने से भोटिए व्यापारिओं के माल की अक्सर चोरी हुआ करती है। इस तरफ 'डामा' वनस्पति न होने से पड़ाव पर पहुँचने के पहले ही दो मील से यात्री लोग क्यांग घोड़े की लीद तथा चंवर के गोबर के उपले की खोज करके एकत्रित करके लाये थे। उसके धुएँ आसमान में घटाटोप बनते हुए उठते हैं।

दो हूणिए साथी-गाइड व दो भाषिया भी काम करने वाले हैं। एक हूणिआ तो निपट वज्रमूर्ख है। उनसे तो इशारे से बातें करते हुए हँसी-मजाक विनोद हुआ करता है। एक का नाम 'गटुक' तथा दूसरा 'मींग्मर' है हूण देष के यह वतनी चाय के प्याले भर-भर के गटका रहे हैं।

दिनांक २ अगस्त रविवार ३१

तीर्थस्थान तीर्थापुरी आज पहुँचने का कार्यक्रम होने से प्रातःकाल जल्दी तैयार होकर संकरी नहर में से 'जयघोष' पुकारते हुए बाहर प्रयाण किया। ऊँटाधुरा के बदले अब तो हाथीधुरा की सी हलकी पर हँफाने वाली तीन मील की चढ़ाई चढ़कर 'लाब्जा' शिखर पर पहुँचे। सामने ही दिव्य और दर्शनीय कैलास पर्वतमाला हिमालय की लम्बी हारमाला का दर्शन हुआ। नक्शे में Kailas Range इसी को कहते हैं। कैलास हार-माला से प्रवाहित होती "शतद्रु-शतरुद्र"—सतलज सरिता की चाँदी सी श्वेत धारा की सी चमकती हुई यहाँ बहती है।

"सरित निष्काम कर्मयोग की श्रेष्ठ प्रतीक है।"

यात्रा में मिलम के बाद बहुत दिन के बाद हमें अन्य मनुष्य के दर्शन हुए। काश्मीर-लदाख के हिमालय पार करके आने वाले लदाखी लोग गधों पर माल लाद कर ज्ञानिमा मण्डी में व्यापार अर्थ जा रहे थे। इसके अलावा गरतोक मण्डी से लौटने वाले जोहारी भोटिए व्यापारी की वणजार भी मिली।

श्वेत मोती की तरह चमकता हुआ पारदर्शक स्फटिक पत्थर रास्ते में देखे गये। पाँच टुकड़े स्फटिक के लिये भी जो पत्थर के साथ (जड़े) चिपके हुए नहीं थे। और पत्थर तो पहाड़ के साथ चिपके हुये थे। कहो कि पत्थर के ही अंग थे। इस तरफ विपुल मात्रा में स्फटिक होने की सम्भावना है। कहा जाता है कि तिब्बत भूमि में नमक, सोहागा की तरह सोना ताँबा की खाण है। पर इसका उपयोग तिब्बत सरकार करती नहीं या शायद कर नहीं पाती।

घाटी में फिर घुस पड़े। यह नहर दो मील लम्बी कंकड़ और बालूवाली बिना पानी की नदी थी। भूखे पेट से नौ मील चलने के कारण थकावट बहुत ही लगी। तब भी सतलज–शतद्रु सरिता का आचमन सर्वप्रथम करके आराम करने बैठा। इसी समय भारत का प्राचीन ज्वलन्त–मौखान्वित इतिहास आँख के सामने खड़ा हुआ।

मौर्य-वंशीय प्रतापी सम्राट चन्द्रगुप्त के वंशज समुद्रगुप्त-स्कन्दगुप्त तथा गोबिन्दगुप्त आदि ने इस शतद्रु तक कुक्कुट ध्वज लहरा कर भारतीय गौरव सूर्य को उज्जल किया था। इन रणशूर महारथिओं ने हूण देश के भारत की सीमा कैलास मानसरोवर तक मानी जाती है न ? पर यह कीर्ति गौरव इतिहास में 'थे' हो गये।

शतद्रु यानि सात गंगा की धारा का संगम होने की कथा है। हम कैलास यात्रिओं ने तिब्बत भूमि में सात गंगा पार की थी। शायद इसमें मिलती हो। पंजाब में बहती सतलज यही है न ?—

सात गंगा का नाम सोमनाथ, छीरचन, गजंग, तूकपू, छीनकू, दमयन्ती और गुणवन्ती। यह सप्त नदी हमें पार करनी पड़ी थी।—तिब्बत के पुराणों में चार बड़ी नदियों का इस तरह वर्णन है।

१—सतलज = गज (हाथी) का मुख।

२ — सिन्धु = सिंह का मुख।

३— ब्रह्मपुत्र = अश्व का मुख।

४— फरनाली = मयूर का मुख।

जहाँ से हमने सतलज पार की उस स्थान पर तीन धारा में प्रवाहित हो रही थी। इसलिए आसानी से पार कर सके। अगर एक ही धारा होती तो पार करने में

पूरी मुश्केली होती। सतलज गंगा के किनारे से दस फीट दूर ही डेरा तम्बू तान कर पड़ाव किया।

तीर्थ स्थान में आकर यात्रिओं का आवश्यक कार्य स्नान करना होता है। सतलज गंगा से लगभग पन्द्रह फीट दूर उग्र वाष्प उड़ती हुई देखने में आई। यही गरम पानी का झरणा था। तीन स्थान पर उबलता-खौलता हुआ पानी फुहारा की तरह धरती से उछल रहा था। पानी इतना ज्यादा गरम था कि मूल स्रोत के पास स्नान करना मुश्किल था। अतः जरा दूर नीचे की तरफ करने लायक पानी से आनन्द से स्नान किया। "भस्मासुर की ढेरी" यही है। पुराणों में इसकी कथा इस तरह है :—

शिव शंकर महादेव की घोर तपश्चर्या एक राक्षस ने की। भोले शंकर औढर-दानी ने प्रसन्न होकर वरदान माँगने को कहा। राक्षस ने कहा—"हे! उमापति ऐसा वरदान दो कि जिसके ऊपर हाथ रखूं वह जल कर भस्म हो जाए। कैलासपति महादेव ने—'तथास्तु' कह कर वरदान दे दिया। उस राक्षस ने वरदान को प्रयोग करने के लिए शिव जी के सिर के ऊपर हाथ रखने का विचार किया। तब शिवजी भागे। भागते-भागते अन्त में विष्णु भगवान की शरण पहुँचे। विष्णु भगवान ने राक्षस को छकाने का मौलिक उपाय सोचा। सुन्दर भीलणी (भिलनी) का स्वरूप लेकर तपस्वी राक्षस के पास पहुँचे। वह मोहित हो गया। भीलणी ने अपने साथ नाचने को कहा। नृत्य की नकल करते हुए राक्षस अपना हस्त अपने ही मस्तक पर धर दिया। तुरन्त ही वरदान के अनुसार राक्षस जल कर भस्म हो कर वहीं ढेर बन गया। यही भस्मासुर की ढेरी है।

तीर्थापुरी के पास यह सारा पहाड़ सफेद राख जैसी मिट्टी बना हुआ है। राक्षस भी विशालकाय पहाड़ सा होगा न ? अतः आसपास के पहाड़ों में यह भस्म मिल जाती है। साइन्टिस्ट इसे 'शंखजीरा' औषधिस्वरूप कहते हैं। कैलास यात्री इस विभूति-भभूति को भक्तिपूर्वक प्रसाद स्वरूप ले लेते हैं।

तीर्थापुरी गुम्बा के (मठ) मन्दिर में स्नान के बाद दर्शन करने के लिए यात्रियों ने प्रयाण किया। मन्दिर में बुद्ध देव तथा शाक्यमुनि आदि देवी देवताओं की मूर्तियाँ स्थापित की हैं। तिब्बती भावुक लोग मन्दिर में पूजन विधि के लिए एक टंका अर्पण करके आरती करते हैं।

गोम्बा का मकान कंकड़ मिश्रित मिट्टी से बना हुआ है। दूर से मस्जिद का भास होता है। मन्दिर के बाहर सवा सौ गज लम्बी दस फीट चौड़ी पत्थर की दीवाल है। हर पत्थर पर तिब्बती गायत्री मन्त्र "ॐ मणि पद्मे हुम्" खुदा हुआ है। गायत्री मन्त्र का अर्थ है—"कमल में मणि जैसे भगवान बुद्ध को नमन।"

गोम्बा में बड़े लामा पधारे हैं। सुनकर शाम को हम लोग दर्शन को गये। एक छोटा कमरा लामा, दाबा और हुणियों से भरसक भरा हुआ था। बड़ा लामा पुराण जैसी बड़ी पोथी (शायद करजम तरजम) में से मन्त्रोंच्चार करते हुए कर्मकाण्ड की अनेक विधि सहित पूजा करते थे। भक्तों से कराते थे और अष्टधातु की बुद्धदेव की मूर्ति सबके सिर पर तथा हृदय को स्पर्श कराते थे। आशीर्वाद देने की यही रीति है।

बड़े लामा लगभग ७०-८० वर्ष के होंगे। चेहरे पर धार्मिकता सहित सात्त्विक तेज चमकता था। इसलिए प्रथम दर्शन से ही उनके प्रति श्रद्धा उत्पन्न होना स्वाभाविक है। सिर पर शिवजी की तरह बड़ी जटा, शान्त और गम्भीर मुद्रा स्वरूप को शोभती थी। लामा लोग सुबह से शाम तक कर्मकांड सहित पूजाविधि करते हुए चाय के प्याले पर प्याले पीते रहते हैं। लामाओं ने सिद्धि प्राप्त करके चमत्कार भी बतलाते (सूचित करते) हैं—ऐसा कहा जाता हैं। बर्फ व ओले की वर्षा रोक सकते हैं। बीमार को तन्दुरुस्त कर देते हैं। लामा लोग लम्बी उम्र के तीन सौ पाँच सौ वर्ष के भी माने जाते हैं। अनेक अणिमा आदि सिद्धि से भरपूर हैं।

दिनांक ३ अगस्त सोमवार ३१

हुणिया साथियों की गणित की गिनती में भूल हो जाने के कारण आज तीर्थापुरी में ही रुक जाना पड़ा। जीटूंग पड़ाव से गट्टुक ने १७ चंवर के बदले १६ ही यहाँ पहुँचाये। हिसाब की भूल हो गयी थी, अतः गट्टुक वापस जीटुंग जाकर इधर-उधर भटक कर भूल के भूत को चँवर को पकड़ लाया।

बड़े लामा के दुबारा दर्शन के लिए आज फिर गये। एक बीमार के आरोग्य निमित्त कर्मकांड सहित मृत्युंजय जप जैसा पुरश्चरण कर रहे थे। हमको भी 'रच्छा हो' कहकर आशीर्वाद दिया। रच्छा हो यानी रक्षा हो या अच्छा हो जो भी हो 'कल्याण हो' ऐसा ही आशीर्वाद दिया। वहाँ से एक अन्य मन्दिर में गये जिसे महाकाली कहा जाता है। वहाँ खातक की प्रसादी पाई। 'खातक' तिब्बत में बारीक रेशे का कपड़ा तैयार करते हैं। तिब्बत के हर मन्दिर और गोम्बा में प्रसाद स्वरूप 'खातक' यात्रियों को प्रदान किया जाता है।

गोरीं गंगा की तरह यहाँ घोर गर्जना सुनाई नहीं देती। पर शान्त और सौम्य सतलज की मधुर ध्वनि गुंजन करती प्रवाहित होती है। तिब्बत की समतल भूमि में

शतद्रु सतलज सरिता शान्त सरती हुई बहती है। गरम पानी की झरणों से हिमालय के उत्तम शिखर नन्दा देवी का भव्य और दिव्य दर्शन हुआ। अल्मोड़ा से नन्दा देवी का सौम्य, सात्त्विक और सुरम्य दर्शन होता है। परन्तु यहाँ से भीमकाय विशाल पर्वत की पीठ का दर्शन होता है।

ॐ शान्ति सर्वोदय कुटीर अल्मोड़ा १७-१०-८३

श्री कैलाश दर्शन मेरू शिखरिणामहम्

दिनांक ४ अगस्त १९३१

हरहर महादेव कैलाशपति महादेव की जयघोष के साथ यात्रियों ने तीर्थापुरी के आगे को प्रस्थान किया। सीधा मैदानी रास्ता तय करके एक गंगा के किनारे पहुँचे। तिब्बती लोग इस गंगा को डोपोनूप कहते हैं। पर मुझे तो सत्तूगंगा कहने को मन होता है। भूख ऐसी लगी थी कि कोरा सत्तू ही फांकने लगा। सत्तू मुँह में डालकर बर्फीया या भूख शब्द बोलते तब फर-फर करता हुआ सत्तू मुँह से उड़ने लगता है। तब देखने लायक दृश्य होता है। आगे जाते हुए डोपोसर नदी पार करनी पड़ी।

शबनम जैसी आज झरमर झरमर वर्षा सतत् तीन घंटे से हो रही है। बरसती वर्षा में ही तिब्बत की तीक्ष्ण ठंडी हवा सहन करते हुए निर्जन भूमि को गुंजन कराते हुए कँपाते हुए शम्भु मेला चला जा रहा है। बायें हाथ कैलास पर्वत की हारमाला का श्वेत बर्फ चमक रहा है। दाहिने हाथ सादी पर्वतमाला दौड़ रही है। बीच में सुनहली घास वाले मैदान में यात्रीगण चले जा रहे हैं।

ग्यारह मील चलकर चार बने 'गुह्यांक' नाम के पड़ाव पर डेरा तम्बू तान कर मुकाम किया। इस पड़ाव पर घास तथा डामा वनस्पति जलावन की अच्छी सुविधा है। यहाँ से हूणिया साथी मीडंमर ने 'खमजम-खमजम' प्रणाम कहकर विदा ली। उसकी जगह ग्यालबों ने ली। गटुक और ग्यालबों हमारे शम्भु मेला के गार्ड और गाइड बने।

दिनांक ५ अगस्त बृधवार १९३१

परमहंस रविनन्द जी के साथ सत्संग करते हुए पंथ पर प्रयाण करते रहे। रामेश्वर, जगन्नाथ, द्वारिका-अमरनाथ-बद्रीनाथ-केदारनाथ आदि की यात्रा करके अब कैलाश यात्रा को आये हैं। कर्मयोग के प्रशंसक तथा निःस्पृही साधु हैं। इसके बाद अन्य खाखी बाबा श्री गंगागिरि जी से सत्संग करते हुए आगे बढ़े। ये साधु बागेश्वर अखाड़े में बरसों तक हमें मिलते रहे।

'क्यांग' वन घोड़े के तीन झुंड आज देखे गये। उनकी पवनवेगी सरपट चाल देखने को मिली। 'चूगटू' गंगा चली जा रही है। उसके किनारे मखमल से मुलायम हरी घास के सुन्दर गलीचे पर बैठकर सत्तू फांकने में और आनन्द आया। फिर आगे बढ़े तो तड़ातड़ बजरी पड़ने लगी। कलेजे को फोरने वाली ठंडी हवा बहने से रेन कोट का उपयोग करना पड़ा। कलेप नाम की नदी पार की तो सामने ही श्री कैलास का दिव्य दर्शन होते ही रोम खड़े हो गये। श्री कैलास की कृपा के कारण गदगद होकर मानो काया का भान भूल गया। ऐसा श्वेत हिमाच्छादित सुन्दर 'शिवलिंग' धरती पर दूसरा नहीं है। यात्रीगण एक के बाद एक आगे चले गये। अन्त में कैलास बादल में छिपने लगा। तब आँखे नीचे को झपकी। "आवरण आत्ते धुयं विश्वने रमाड़वा"

आत्मस्वरूप मधुर प्रणव ॐ तत सत ॐ सदा।

राक्षस ताल दूर दाहिने हाथ लहरा रहा हैं। एक छोटे से झरणे पर पहुँचते ही वर्षा शुरू हो गयी। तिब्बत में वर्षा तो हल्की ही होती है। पर इससे गजब की ठंड बढ़ जाती है। आज तो तम्बू खड़ा करते हुए त्रित्रोकनाथ का स्मरण हुआ। आज की ठंढ का अनुभव जीवन में अविस्मरणीय रहेगा। 'जलूनखान' नाम के पड़ाव पर डेरा डाला।

दिनांक ६ अगस्त गुरुवार ३१

श्री कैलास पर्वत माला कैलास से तदन अलग है। उसके ऊपर श्वेत बर्फ हिम खूब जमा पड़ा है। नक्शे में इसे Kailas Range कहते हैं। इस हिममय हारमाला की

गोद में यात्री गण चले जा रहे हैं। राष्ट्रध्वज सत्याग्रह सन् ३० में लाठी चार्ज से मिली प्रसादी के कारण पैर की हड्डी टूटी थी। अतः उसकी पीड़ा डग-डग पर कदम-कदम पर होने लगी। जरा सा टेढ़ा पग होते ही दिल की गहराई से 'हे राम !' की पुकार पड़ जाती थी। पर यह तो वर्तमान में पद्मभूषण ही तो कहा जावे न ? वैसे उस समय तो वह पीड़ा आत्म-बल बढ़ाती थी। क्योंकि इसका निमित्त राष्ट्र सेवा का अद्भुत आदर्श रहा न ? "पंगुम् लंघयते गिरिम्"

दो छोटी गंगा और पार करनी पड़ी। श्री कैलास पर्वत संता कुकड़ी Hide and Seek का खेल खेलता है। बादल में घड़ी में छिपता फिर प्रकट होता, फिर आँखी (दिखायी) देता और आवरण ओढ़े अदृश्य होता रहा। इस तरह अनेक दर्शन देता रहता था। "ईश्वर तेरी माया कहीं धूप कही छाया"

सिन्धु नदी के किनारे तम्बू खड़ा किया। आज साढ़े छः मील की यात्रा हुई। स्नान, प्रार्थना, आत्म-पूजन के बाद लगभग आधे मील की कठिन चढ़ाई चढ़कर तीन बजे कैलास परिक्रमा का प्रथम मन्दिर यानी गोम्बा लेइन्ड्री में प्रवेश किया। नीचे से ऊपर तक पत्थर चिनकर प्लिथ उठाकर वह प्राचीन भव्य किले की तरह गुम्फा बनाई है।

कैलास पर्वत की परिक्रमा में चार मन्दिर (गुम्फा) पड़ते हैं। यात्रीगण चारों मन्दिर के दर्शन करते हैं; परन्तु कोई तो तीसरी गुम्फा से 'दरचन' चले जाते हैं। वह भी परिक्रमा पूर्ण मानी जाती है।

कैलास पर्वत की यह प्रथम गुम्फा मुख मन्दिर है, क्योंकि यहाँ से श्री कैलास ठीक पूर्व दिशा में है। मन्दिर के बीच सिंहासन पर बुद्धदेव की अष्टधातु की सुन्दर मूर्ति प्रतिष्ठित है। इसके सामने दो जबरदस्त श्वेत हाथी दांत कमानदार दरवाजे की तरह शोभित हैं। उससे मन्दिर की भव्यता बढ़ जाती है। ये हाथी दांत (दंतशूल) बहुत वर्षों का प्राचीन कहा जाता है। परिक्रमा करते हुए वशिष्ठ ऋषि, शाक्य मुनि तथा अन्य देवी-देवताओं की मूर्तियों के दर्शन किये। सिंहासन के पीछे आलमारी में तिब्बती भाषा के प्राचीन धर्म ग्रन्थ काफी संख्या में कपड़े में लपेट कर व्यवस्थित रखे हुए हैं। मन्दिर की सारी दीवाल बुद्धदेव अवलोकितेश्वर आदि के चित्रों से भरी पड़ी है। प्राचीन चित्रकला का सुन्दर प्रदर्शन है। कुछ चित्र तो कपड़े में बिने हुए हैं, उनके रंगों में आज भी अच्छी चमक है। चित्र भाववाही धार्मिक प्रेरणा के प्रेरक हैं।

यात्रियों ने यहाँ भावविभोर होकर भजन, श्लोक और स्तवन शिव स्तोत्र (महिम्न स्तोत्र के कुछ श्लोक) गदगद कंठ से प्रार्थना करते जीवन को धन्य माना। जीवन

का एक पवित्र संकल्प श्री कैलास यात्रा का पूर्ण हुआ। यह कठिन यात्रा यात्रियों ने श्रद्धा पूर्वक करके श्री कैलाश का दर्शन किया !

अब अर्पण विधि होती है। श्री कैलास को चँवर, गाय, बकरी समर्पण होती है (यानी बलिदान नहीं) परन्तु चँवर और बकरी की कीमत के रुपये मन्दिर के (चोपड़े में) बही खाते में यात्री के नाम से जमा होते हैं। उतने घी का दीपक यात्री के नाम निमित्त से श्री कैलास में प्रति रोज प्रज्वलित होता है। यह समर्पण विधि सात्विक और अहिंसा की प्रतीकात्मक है। सम्पन्न यात्री और अधिक दान दक्षिणा समर्पित करते हैं।

महाकाली के मन्दिर में महाकाली की महा भयंकर विकराल मूर्ति का दर्शन किया। "ॐ मणि पद्मे हुम्।" तिब्बती (गायत्री) मन्त्र का विशाल कथा चक्र घुमाया। इस चक्र के लाखों बार ऊपर का मन्त्र जप लिखकर रखा हुआ है। इसे घुमाते ही लाखों जप का पुण्य प्राप्त होता है। ऐसी श्रद्धा तिब्बती यात्री कोरा करने वालों की रहती है।

मन्दिर की छत पर हम लोग गये। कैसा अपूर्व और दिव्य दृश्य ? आलोकित लोक में पहुँचे। कैसा अद्‌भुत और हिमाच्छादित शिव मन्दिर सा वह शिखर है। काशी विश्वनाथ, सौराष्ट्र का सोमनाथ, जागेश्वर, बागेश्वर आदि के शिव मन्दिर के दर्शन करते हुए जो हृदय भावना में उत्पन्न होती है वही यहाँ दुगुने वेग से उत्पन्न होने लगा। वैसे तो शिव सर्वत्र समान ही है। अपने-अपने स्थान पर सबकी एक विशेषता रहती है। सामने ही कैलास दर्शन करते हुए दिव्य आनन्द और अपूर्व सात्विक भावना की अनुभूति से साढ़े तीन कोटि रोमांच खड़े हुए। "शिवमस्तु—शिव कल्याणमस्तु"

श्री कैलास शिखर २२०२८ फीट की ऊँचाई का है। हम जहाँ खड़े हैं वह गुम्फा सत्रह अट्ठारह हजार फीट तो होगी ही। प्रकृति ने हिम द्वारा अद्‌भुत कला कौशल कैलास पर्वत के निर्माण में किया है। विश्वकर्मा की विश्ववदनीय कला तो यही है न भारत में मनुष्यकृत शिवालय अनेक देखने में आते हैं। पर यह तो कुदरत कृत हिममण्डित शिवजी का अचल, अटल, अत्युत्तम, अद्‌भुत, स्वयमेव शिव या शिवमन्दिर का दर्शन आज हुआ। जीने से देखना भला। इस सत्य का अनुभव हुआ। इस शिखर की दृष्टि भारत वर्ष पर है। जहाँ इसकी प्रतिकृति बनाकर करोड़ों आत्मा "हर हर महादेव नमः" पार्वती पतये नमः आदि की जय घोष की ध्वनि करके अपने को धन्य मानते हैं।

दुनिया के दूर-दूर के चीन, जापान, स्याम, वरमा, लंका, जावा, सुमित्रा आदि देशों से बौद्ध धर्मावलम्बी भी श्री कैलास की परिक्रमा करने आते हैं।

जिस कैलास का माहात्म्य शास्त्र पुराणों ने गाया है, जिसकी प्रशंसा से तिब्बती धर्मग्रंथ भी भरे पड़े हैं। उस श्री कैलास का आज दर्शन करके मैं स्वयं अपने को कृत-

कृत्य मानता हूँ। जीवन के साफल्य का सात्त्विक आत्म सन्तोष है।

धन्योऽस्मि।—ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

श्री कैलास राम-कृष्ण, हनुमान, पांडव, बुद्धदेव आदि अनेक तपस्वी ऋषि, मुनियों के समय से अनन्त, अनादि काल से अस्तित्व धराता है। "क्या भव्यता! क्या निश्चलता! क्या तेजस्विता! क्या सौन्दर्यता! क्या अद्भुतता! क्या दिव्यता! क्या आत्मीयता!

मेरु शिखरिणामनम। सत्यं शिवं सुन्दरम्।
शान्ति १८-११-८३ ॐ नमः शिवाय।

धन्योऽस्मि।
ॐ शान्ति सर्वोदय कुटीर अल्मोड़ा १८-१०-८३

श्री कैलास महात्मय तथा शिवजी की जटा में से बहती गंगा का माहात्म्य "कैलास पर्वते रामं मनसा निर्मितं परम्। ब्राह्मणा नरशार्दूलं तेनेदं मानसं स। परम रम्यद गिरिवर कैलास। सदा शिव उमा निवासू (सन्त तुलसी दास)।

नागेन्द्र हाराय त्रिलोचनाय भस्मांगरागाय महेश्वराय,
नित्याय शुद्धाय दिगम्बराय तस्मै 'न' काराय नमः शिवाय।

मन्दाकिनी सलिलचन्दन चर्चिताय, नन्दीश्वर प्रमथनाथ महेश्वराय,
मन्दारपुष्प बहुपुष्प सुपूजिताय तस्मै 'म' काराय नमः शिवाय।

शिवाय गौरी वदनाब्ज बृन्दै, सूर्याय दक्षाध्वरनाशकाय
श्री नीलकण्ठाय वृषध्वजाय तस्मै 'शि' काराय नमः शिवाय।

वशिष्ठ कुम्भाद्भव गौतमार्थ मुनीन्द्रदेवार्चित शेखराय
चन्द्रार्क वैश्वानरं लोचनाय तस्मै 'व' वकाराय नमः शिवाय।

यक्ष स्वरूपाय जटाधराय पिनाक हस्ताय सनातनाय
दिव्याय देवाय दिगम्बराय तस्मै 'य' काराय नमः शिवाय॥

भारतवर्ष के सर्वोत्तम पवित्र तीर्थ स्थान हिमालय के विविध प्रदेशों में स्थित काश्मीर में अमरनाथ नेपाल में भक्तिनाथ तो गढ़वाल में उत्तराखंड में गंगोत्री यमुनोत्री केदारनाथ, बद्रीनाथ चारधाम तथा श्री कैलास मानसरोवर है।

तिब्बती पुराण में हमारे पुराण की तरह तिब्बत में भी पुराण है। उसमें से एक पुराण कैलास पुराण है। उसे वह लोग कङ्गरी करछ (कंगरी करछक) कहते हैं। तिब्बती धर्म के अनुसार कङ्गरिम्पोछे के अधिष्ठाता देव का नाम है। डेम छोड़ और कंगरी करछक

पुराणों में उसकी प्रतियाँ और सिद्धि का सविस्तार वर्णन हैं। यह तिब्बत के अनेक गोम्फाओं में संग्रहीत है। धार्मिक चित्रों डेमछोड देवाधिदेव शंकर से अधिकांश समानता है।

तिब्बती देव डेम छोङ् सिर पर जटा धारण करते हैं। गले में साँप (नाग) का हार पहनते हैं। बारह हाथ हैं। एक हाथ में डमरू और एक में त्रिशूल धारण किया है। उनके तीन चक्षु (त्रिनेत्र) हैं। पैर के नीचे राक्षस दबा पड़ा है।

शंकर पार्वती की तरह डेमछोङ की सहत्तरी देवी दोर्जेफौङ्यो हैं। वह शक्ति की प्रतीक हैं। पुरुष तथा प्रकृति को मूर्तिगत करते हुए यह देव युगल मुद्रा में आलेखित दिखने में आते हैं। बहुत से चित्रों में शिव ताण्डव नृत्य की याद दिलाने वाले डोमछोङ रौद्र स्वरूप खड़े हैं। आस-पास अग्नि की ज्वालायें चित्रित हैं।

तिब्बती पुराण में सतलज को 'लंग चेन खम्बचु' कहते हैं। उनके कथनानुसार इसी सतलज को भारतीय गंगा का नाम दिया है। गंगा को छोमागंगा कहते हैं। कैलास पुराण कंगरीकरछक में वर्णन है कि सतलज गंगा का उद्गम स्थान मान सरोवर के पश्चिम में है और उसका प्रवाह भारत के प्रदेशों में आगे बढ़ता हुआ। बुद्ध गया से उत्तर तरफ आगे बढ़ता हुआ समुद्र में मिल जाता है।

"सत्यं शिवं सुन्दरम्"

भगवती शिवा नगाधिराज हिमालय की पुत्री है। पृथ्वी सबसे विशाल, सर्वोच्च उत्तुङ्ग, पार्थिव पदार्थ कोई हों तो हिमालय ही है। हिमालय पार्थिव वैभव का सर्वोत्तम रूपक प्रतीक है। उसकी पुत्री पार्वती सम्पूर्ण पार्थिव वैभव और ऐश्वर्य शक्ति की स्वरूप हो, ऐसी भगवती पार्वती स्वयं अपनी जात को (अपने आपको) शिव की अर्धांगिनी बना कर जीवन का साफल्य समझ लेती है। शिव पार्वती का सामन्जस्य।

शिव धर्म रूप हैं। पार्वती शक्ति रूप है। शिव सत्य (Right) और शिवा शक्ति (Might) हैं। शिव से शक्ति या शक्ति से शिव यह प्रश्न गम्भीर विचारणीय है। पर यह निश्चित है कि शिव और शक्ति अन्योन्य आश्रित है। सिक्के की दोनों साइड है। शिव और शक्ति यह परम शिव परम तत्व के दो स्वरूप हैं। शिव कूटस्थ तत्व है। शक्ति परिणामिनी। विविध विचित्रता से पूर्ण संसार के रूप में प्रगट होते शक्ति का आधार अधिष्ठान शिव है। शिव स्वयं अव्यक्त, अदृश्य, सर्वगत और अचल आत्मा है। शक्ति स्वयं दृश्य, चल और नाम रूप द्वारा व्यक्त होने वाली सत्ता है। शक्ति सरिता है।

वह शिव सागर रूपी अनन्त, शान्त, गम्भीर वक्षस्थल पर अनन्त कोटि ब्रह्मांडों का रूप धारण करके नृत्य कर रही है।

सूर्य और उसका प्रकाश, अग्नि और उसका (ताप) ओजस वैसे ही दूध और उसकी सफेदी रहती है। वैसे (शिव) और (शक्ति) की आराधना है और शक्ति की उपासना शिव की उपासना है।

भगवान शंकराचार्य ने गंगा की महिमा गान किया है।

मातरम् जाह्नवी शंभु संग बलिते मौलो सिद्धया अलि।
त्वन्तीरे वपुषोड वसान समये नारायणाद्विहृयम्॥
सानन्द स्मरतो भविष्यामि मम् प्राण प्रयाणोत्सवे।
भूयाद् भक्ति रविच्युता हरि हरा द्वातात्मिका शाश्वती॥

हे गंगा माता! शंकर महादेव की उलझी हुई जटा में आपका निवास है। उस स्थान को दो हस्त जोड़कर और मस्तक नवाकर प्रणाम करता हूँ। यह शरीर चला जावे उस समय आपके किनारे निवास करूँ और श्री नारायण के दो चरणों के आनन्द का स्मरण करूँ तो प्राण जाते समय बड़ा उत्सव समझा जावे और फिर 'हरि' और 'हर' में अद्वैत भाव जमाने वाली अस्खलित भक्ति सदा के लिए स्थायी रहा करे।

श्री नारायण विष्णु भगवान चरण कमल का ध्यान धरना चाहिए। जिनके चरणोदक से विष्णुपद नाम की श्रेष्ठ गंगा प्रकट हुई है। जिस गंगा जल को शंकर महादेव ने अपने मस्तक पर धारण किया है और इससे शिव रूप गिने गये। इसी तरह विष्णुपदी जटाशंकरी नाम धारण करने वाली त्रिपथगा गंगा का ध्यान धरने वाले भक्त जनों के मन रूपी पापों को दूर करने में वह गंगाजल पर्वतों के शिखरों को वज्र तोड़ने का काम करे, उस तरह पुण्य कार्य करते हैं।

गंगाजी सकल वसुधा का नित्य निरन्तर बढ़ते हुए सौभाग्य का धाम है। गंगाजी लीला जगत के रचने वाले शंकर महादेव का विशेष ऐश्वर्य है। गंगाजी श्रुति सर्वस्वसार रूप है। सर्वको मानसरोवर रूप मानस के सत् कृत्यों के पुण्य रूप है।

गंगाजल अमृत समान मधुर है वह गंगाजी हमारे सर्व दोषों को दूर करे।

गंगाजी स्वर्ग अन्तरिक्ष और पृथ्वी तीनों मार्ग पर गति कर रही है। उसमें से स्वर्ग वही कैलास मानसरोवर ? अन्तरिक्षगोमुख पर के चौखम्भा बद्रीनाथ (बद्रीनारायण) वगैरह हिम शिखर गंगोत्री हिम प्रवाहों का प्रदेश और पृथ्वी गंगोत्री से गंगासागर तक का भारत प्रदेश यह सबकी परिक्रमा, श्रद्धा और पवित्र भावना सहित यात्री करते हैं।

गंगाजी की सात धारा

गंगाजी तीन मार्ग पर गति करने वाली 'त्रिपथ गामिनी' के नाम से पुराण में प्रसिद्ध है।

स्वर्ग लोक में गंगाजी ब्रह्मा के कमण्डल में थीं, वहाँ से विष्णु के चरण में पहुँची। आगे स्वर्ग से मेरु पर्वत पर वहाँ से चन्द्रकुण्ड में। यही बिंदु सरोवर है।

बिन्दु सरोवर से सातधारा—(१) वस्वोकसारा (२) नलिनी (३) पावनी सरस्वती (४) जम्बु (५) सीता और गंगा प्रकट होती है।

हिमकूट वही 'कैलास' और उसके पास का बिन्दु सरोवर वही प्रसिद्ध 'मानसरोवर'।

भागीरथी गंगा का उद्‌गम मूल स्थान साधारणतः तो 'गंगोत्री' से गोमुख गिना जाता है। पुराणों के आधार पर और भूगोल की अन्तिम खोज के अनुसार तो गोमुख के पास प्रकट होती गंगा पहले तो गंगोत्री की हिमधारा रूप मंदाकिनी नाम से शिव-लिंग पर्वत के नीचे प्रवाहित होती है। उसमें सुमेरु पर्वत से आने वाली मेरु हिम गंगा मिल जाती है और उसके पहले भी माना हिम धारा, पीला पानी धारा, नीलाम्बर धारा, श्वेतवर्ण धारा और सुदर्शन पर्वत से आने वाली थोलू धारा मिलती है। इस तरह श्री कैलास पर्वत के पास के मानसरोवर और राक्षस ताल के साथ भी गंगा आदि प्रवाह का सम्बन्ध जुड़ता है। इसी कारण तो श्री कैलास की यात्रा का महात्म विशेष है।

मानसरोवर के पश्चिम में राक्षसताल है। रावण सरोवर (रावण ह्रद) भी कहा जाता है। तिब्बती लोग लंगक छू कहते हैं। मानसरोवर में पानी बढ़ जाता है तब झरणों के रूप में छलक कर राक्षस ताल में जाता है। इन्हीं झरणों को तिब्बती लोग "गंगा छू" कहते हैं। इन झरनों में पानी सदा रहता है। वह राक्षस ताल में मिल जाती है और वहाँ से सतलज नदी बहती है।

गंगा पहले कैलास पर उतर कर छूमिक थंगटोल नामक सरोवर में से उसकी चार धारा चार दिशाओं की तरफ बहने लगी। यह धारा जहाँ-जहाँ स्फुरित हुई वहाँ पशु के आकार के मुख गोमुख की तरह बन गये। इन धाराओं के जल के रूप-रंग-गुण वगैरह अलग-अलग बनते हैं। पश्चिम दिशा की धारा को 'सिंगी खम्बबू' कहते हैं। जिसका भारतीय नाम 'सीता' है। वर्तमान नाम सिन्धु है। जिसका मुख सिंह जैसा है। इस धारा का पानी गरम है और ताल में सुवर्ण कण मिश्रित है। इस सिन्धु के जल का पान करने वाले सिंह जैसे बलवान बनते हैं।

पूर्व दिशा की धारा को 'तमचोक' 'खम्बबू' कहते हैं। वर्तमान नाम ब्रह्मपुत्र है। इसका मुख अश्व जैसा है। इस धारा का पानी ठंडा और नीचे तल में बालू के साथ वैदूर्य मणि (लहसुनिया) के कण मिश्रित हैं। इस जल के सेवन से मनुष्य घोड़े की तरह हृष्ट-पुष्ट बनता हैं।

दक्षिण तरफ की तीसरी धारा को 'मपचा खम्बबू' कहते हैं। उसका भारतीय

नाम (सिंधु) करनाली कहते हैं। उसका मुख मयूर जैसा है। इस धारा का पानी गरम होता है और तल में बालू (रेती) के साथ (चाँदी) रजत कण मिश्रित हैं। इस जल के सेवन से मनुष्य मोर जैसा सुन्दर बनता है।

उत्तर तरफ की चौथी धारा को 'लैङ्चेन खम्बबू' कहते हैं। जिमका भारतीय नाम 'गंगा' है। वर्तमान नाम सतलज या शतद्रू है। उसका मुख गज (हाथी) जैसा है। धारा का पानी ठंडा है। तथा नीचे तले की बालू में सुवर्ण कण मिश्रित हैं। इस जल के सेवन से मनुष्य हाथी जैसा बलवान बनता है।

तिब्बती पुराण में गंगा की एक धारा को सतलज कहा है। पंजाब की यह सतलज न मानकर प्रसिद्ध गंगा की धारा मानना सुसंगत है। कैलास पास के मानसरोवर में से गंगा नदी सात धाराओं के स्वरूप में प्रकट हुई है। इस विषय पर भौगोलिक समाधान हो तब पुराण और प्राचीन परम्परा सिद्ध हो।

गंगा का सात धारा का रामायण में वर्णन बालमीकि रामायण बालकाण्ड

"ते पुण्य रुद्र ना पुण्या जटामंडल गट्ठरे हिमालय समा ऊँचे शिखरे उत्तरी रंधा ॥१॥
भूमि पर जवा चाहे प्रपत्र खूब आयो। जटामंडलनी बच्चे घेरा तां मार्ग न जड़े ॥२॥
शंकर मार्ग गंगा ने आप्यो बिंदु सरोवरे तेरी ते छूटतां गंगा सात धारा बनी वहे ॥३॥
ह्लादिनी पावनी साथे नलीनी तो त्रीजी गणो पूर्व दिशाभिणी वहेतां गंगाओ ए ॥४॥
सुचक्षु सक्ष्यां सीता सिंधुऐरो महानदी, पश्चिमे रमणे वहे नां गंगानापुण्यगरिजा ॥५॥
ते मानी सात भी धारा स्वयं गंगा भागीरथी बने, रुद्रना शिरथा पोते धरणीपर आवती॥६॥"

गँगावतरण

धरती की व्यथा देख, शंकर की शिखाओं से।
उतर पड़ी भागीरथी, सौ सौ धाराओं में।
एक धारा गीत गाती, जगाती नव प्रभात।
जन-जन में सभी दिशाओं में, दूसरी चुपचाप खो जाती।
खेत खलिहानों में, झुलसाये अंकुरों को सहलाती।
सूनी घाटियों में खिली, कलियों को गुदगुदाती।
एक धारा मदमाती करती किल्लोल समा जाती सागरों की बाँहों में ॥

ॐ शान्ति ॐ शान्ति मन्दिर कुटीर घाटकोपर-बम्बई
संकलन समाप्त ९-११-८३
निरीक्षित १८-१-८४

तिब्बती भाषा में श्री कैलास को गारिम्बो कहा जाता है।

श्री कैलास से लेकर उत्तर में ६५'' अक्षांश तक का नाम पुराणों में हरिवर्ष हार ।

हेम कूटस्तु महान् कैलासो नाम पर्वतः ।
रम्यं विन्दुसरोनाम यत्र राजा भगीरथः ।।

हिमालय हिमवान् गौरीशंकर ।

गणितीय तर्कों के आधार पर कहा जा सकता है कि हिमालय के स्थान पर समुद्र कम से कम २१,६५,०६० वर्षों पहिले रहा हो ।

जल प्रलय के समय नौकाओं के सहारे मानवों ने हिमालय शरण ली । यह नौका हिमालय में जहाँ रुकी उसका नाम 'मनोवर-वसर्पण' मानसरोवर पड़ा ।

'जम्बू' मसाला सोम वनस्पति है । आज भी तिब्बत में मिलता है जो दाल शाक छोंकने में काम आता है । तिब्बत प्रदेश का आधुनिक थाकजड़ हिरण्यश्रृंग है, जहाँ से पाण्डवों को सवर्ण प्राप्त हुआ ।

तिब्बत प्रदेश के लिए वेदों में त्रिविष्टय शब्द है, जहाँ का राजा कुबेर था जो रावण का सगा भाई माना जाता है ।

आ समुद्रातु यै पूर्व आ समुद्रतु पश्चिमम् ।
तयोरेवान्तरं गिर्यो आर्यावर्त विवुबधाः ।।

यह आर्यावर्त्त कहलाया,

गायन्ति देवाः किलगीतकानि ।
धन्यास्तु ये भारतभूमि भागे ।।

श्री कैलास का नाम तिब्बत में कङरिम्पोछे यानी हिमकारत्व है । तिब्बती जनता कङरिम्पोछे को बुद्धदेव तथा पाँच सौ बोधिसत्त्व का निवास स्थान मानते हैं और श्रद्धापूर्वक परिक्रमा करते हैं ।

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः ।
पूर्वापरौ तोयनिधीवगाह्य स्थितः पृथिव्यां इव मानदंडः ।।

अर्थात् उत्तर दिशा में देवरूप बसा हिमालय पर्वतराज है । जिसकी लम्बाई उत्तर से दक्षिण पूर्व पश्चिम दिशा तरफ हिन्द महासागर तक मानो पृथ्वी का मापदंड हो उस तरह शोभित है ।

ॐ शान्ति

मन्दिर कुटीर घाटकोटर बम्बई १५-११-८३

(२४) श्री कैलास परिक्रमा

दिनांक ७ अगस्त शुक्रवार १९३१

सूर्योदय के सुनहले किरणों से चमकते हुए मान्धाता हिमांचल नगाधिराज के भगवा वस्त्र धारी योगी भक्त से भव्य दर्शन हुआ। आज से श्री कैलास परिक्रमा का श्री गणेश यात्रियों ने किया। परिक्रमा करने की अनेक विधि है। कोई चंवर, याक या घोड़े पर सवारी करके परिक्रमा करते हैं। अधिकांश पैदल ही परिक्रमा करते हैं। पर बहुत से तिब्बत यात्री हाथ में "ऊँ मणि पद्मे हुम" इस मंत्र का धर्म चक्र से सतत् जप करते हुए परिक्रमा करते हैं। और एक अजीव विधि है जो कि अति कठिन है। कुछ लामा तथा श्रद्धालु यात्री प्रथम गुम्फा से साष्टांग दंडवत् प्रणाम करते-करते लगभग पच्चीस मील की परिक्रमा कई दिनों में श्री कैलास की परिक्रमा पूर्ण करते हैं। सचमुच ऐसी परिक्रमा अति कष्टदायक है। घुटने, छाती, हाथ, छिल जाते हैं खून बहता है।

दंडवत प्रणाम सोते-सोते (लेटते-लेटते) करते हुए यह परिक्रमा करना अति-तितीक्षा की परम पराकाष्ठा है परन्तु श्रद्धा से सब सिद्ध होता है।

जीवन में यह दिन चिरस्मरणीय रहेगा। वर्षों की आंतरिक अभिलाषा, पवित्र संकल्प आज सम्पूर्ण हो रहा है। जो दिव्य अनुभव स्वयं को हुआ, उस सात्विक आनन्द अन्य को अर्पण करने के लिए पिष्टपेषण हुआ करे तो क्षमा चाहता हूँ। फिर भी वह आनन्द शब्दों में कैसे वर्णित किया जावे ?

"गिरा अनयन, नयन बिनु बानी" सन्त तुलसीदास जी ने सच कहा है—"वाणी को आँख नहीं, और आँख को वाणी नहीं।"

दृष्टि तो श्री कैलास पर है। पर पैर पृथ्वी पर है। बांये हाथ हिमाच्छादित श्वेत शिखरों की हारमाला है। और दाहिने हाथ श्री कैलास है। इन दोनों के बीच बहती हुई पवित्र गंगा (सरिता) के किनारे सोऽहम् सोऽहम्, शिवोऽहम्, शिवोऽहम् तथा गायत्री मन्त्र का जप करते हुए चला जा रहा हूँ। उस आनन्द की कल्पना ही आत्मबल अर्पती है।

"असित गिरिसमम् स्यात्कज्जलं सिन्धु पात्रे।
सुरतरुवर शाखा लेखनी पत्र भुर्वी।

लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालम् ।

तदापि तव गुणानामीश पारं न यांति ।।"

चार मील चल कर सिन्धु नदी पार की, तो पुरानी पर्वत माला छोड़कर नई पर्वत माला का साथ किया । तिब्बत मैदान (Puleato) अब अदृश्य सा हुआ । बदले में एक के बाद एक ऐसे पर्वतों की हारमाला के बीच आते हुए श्री कैलास के कठिन किले में प्रवेश पा रहे हैं जैसे कि अभिमन्यु चक्रव्यूह में प्रवेश करता हो । छः मील चलकर दूसरी गुम्फा डेरफू पहुँचते ही इन्द्र देव ने हिम वृष्टि करके आशीर्वाद दिया ।

स्नान, आत्म पूजन के बाद एकान्त में श्री कैलास के सामने जप करते हुए हुकताई यज्ञ करते हुए चारों तरफ का अद्भुत और दिव्य दर्शन करते हुए पागल मस्त बना । (पा=पाया, गल=रहस्य । यानी रहस्य पाने वाला पागल ।)

आज अद्भुत दृश्य को मन और बुद्धि तथा चित्त में यानी आतमा में संजोकर रखने का दृढ़ संकल्प हुआ 'हर्षतिरेकि' किसे कहते हैं इसका अनुभव आज हुआ ।

श्री कैलास इस गुम्फा से अन्य गुम्फा के मुकाबले अद्भुत और अवर्गनीय है सामने ही एक दो तीन फर्लांग दूरी पर ही 'श्री कैलास' स्वयं निर्मित शिवलिंग अद्भुत तरीके से प्रकाशित है । दिव्य दर्शन है दो तरफ दो पार्श्ववद, दो गण, या दो भक्त की तरह कहो कि श्री गणेश तथा कार्तिक वीर्य शिव पार्वती के दो सपूत की तरह दो पर्वत खड़े रह कर कैलास के हिम मंडित शिवलिंग की भव्यता में वृद्धि करते हैं । इस तरफ आगे बढ़ते "श्री कैलास" की रुंड मुंड माला जैसी शोभती पर्वत की लम्बी हारमाला दौड़ी जा रही है ।

'श्री कैलास' शिवलिंग से एक झरणा बहता है । जो कि शिवजी की जटा में से गंगा प्रवाहित होती है । यह तो शास्त्र संमत–जग प्रसिद्ध सत्य तथ्य है न ? पाँच घण्टे तक श्री कैलास के सामने सविकल्प जाग्रत समाधि में तल्लीन हो गया । पर तृप्ति कहाँ ?—संक्षेप में 'परमशान्त' था । 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' ।

ॐ शान्ति

मन्दिर कुटीर घाट कोपर बम्बई ८६ ११–११–८३

'डेरफू' गुम्फा की छत पर जाकर सत्तू तथा नमक व मक्खन वाली चाय से पेट पुजन किया । 'जैसा देश वैसा भेष' भोजन व भाषा के अनुसार अब सत्तू खाने में होशियार बन गया और उसमें स्वाद भी भूख के कारण आने लगा । शाम को गुम्फा के मन्दिर में दर्शन किया । पहली गुम्फा से यह 'मालदार' मालूम दी । मन्दिर का पुजारी कुनरे काश्मीरी कहा जाता है । एक रुपये का साठ तोला चँवर गाय का मक्खन यात्रियों ने

खरीदा। मन्दिर की दीवालों पर बुद्धदेव शाक्यमुनि आदि देवताओं के चित्र कपड़े में बिने हुए देखकर तिब्बत की चित्रकला तथा वनस्पति के पक्के रंग के प्रति आदर उत्पन्न हुआ।

आज तम्बू में पड़ाव न करके गुम्फा में ही डेरा डाला। तब भी ठंडी का पारा ३२ डिग्री पर जा पहुँचा था।

श्री कैलास के दो-चार फोटो भी लिये। उसमें अच्छी सफलता मिली।

धन्य जीवन ! धन्य भाग्य ! धन्य दर्शन ! धन्य दृश्य ! और धन्य शब्द भी आज हमारे लिए धन्य बन गया। धन्योस्मि ।।

"आज मिल सब गीत गाओ, उस प्रभु को धन्यवाद।

ॐ शान्ति

मन्दिर कुटीर घाटकोपर बम्बई-८६ ११-११-८३

(२५) गौरीकुण्ड श्री कैलास परिक्रमा

दिनांक ८ अगस्त १९३१

ब्रह्म मुहूर्त्त में प्रात: काल चार बजे गुम्फा से बाहर निकलते ही जो अद्भुत और दिव्य दृश्य देखने में आया वह जीवन में सदा स्मरण रहेगा।

आषाढ़ वदी ९ संवत् १९८७ का 'अमर दिन'।

श्वेत दूध या श्वेत बर्फ की सी चाँदनी के प्रकाश में दो पर्वतीय पर्श्वद के बीच श्री कैलास का हिममय शिवलिंग का दिव्य दर्शन हुआ। वह अपूर्व और वर्णनातीत है। आकाश तदन स्वच्छ, दूध से धोकर तारा रूपी मोतियों की कंठमाला श्री कैलास ने पहनी है। आस-पास की हिमाच्छादित पर्वतमाला जोगन्दर शिव की पूजा करती हुई खड़ी थी। वह अद्भुत और दिव्य और दृश्य देखकर मैं परम शान्त बना।

गुम्फा की छत पर हुणिया स्त्री पुरुषों तथा बालकों की मजलिस बैठी हुई चाय सत्तू से पेट पूजा कर रहा था। उसका फोटो लिया।

यात्री गण ने 'श्री कैलासपति की जय' पुकार कर प्रस्थान किया।

'जय कैलास तेरी आश।'

'न मरने का धोखा, न जीने की आश ।।'

श्री कैलास तदन नजदीक ही दाहिने हाथ हैं। यहाँ से शुरू होती हिममय पर्वतों की हारमाला हृदय को स्पर्श करती हुई टेढ़ी-मेढ़ी घाटी में से पसार होती जा रही है। दम तो हर दम हर पल पर फूलता जा रहा है। प्राणायाम का अभ्यास स्वतः या जबरन हुआ करता है। हिमालय पहाड़ पर चलते हुए बर्फानी झरणों, गुप्त या प्रकट बहते रहते हैं। उन्हें पार करते हुए चले जा रहे हैं। रास्ता ? यहाँ कहाँ ?

राम-राम कहो। बस दिशा पर ध्येय पर ध्यान रखकर चलते जाना। 'ॐ मणि पद्मे हूम' का धर्मचक्र हाथ में घुमाते हुए कूदते-फांदते ४०-५० हुणीआ तिब्बती यात्रियों का साथ हुआ।

गौरीकुण्ड तीर्थस्थान पर जाते हुए पेट पूजन पहले कैसे हो ? सख्त चढ़ाई चढ़ते हुए भूख के साथ थकान भी बहुत लगी। इससे आज की चढ़ाई और ज्यादा कठिन लगी। इससे आज की चढ़ाई और ज्यादा कठिन लगी। दम फूलता जा रहा है। श्वास चढ़ता है। हाँफते हुए सिर में चक्कर सा आने लगा। छाती में घबराहट होने लगी। चिरसंगिनी लाठी पर मस्तक टिकाकर आराम करता हुआ घड़ी भर खड़ा रहता हूँ। फिर कदम बढ़ाता हूँ। 'सोहिम् शिवोऽहम्' जप जपता हुआ लगभग बीस हजार फीट की ऊँचाई पर—आकाश पर आसमान में सूर्य के नजदीक चलते हुए दम बेदम हुआ जाता हूँ। 'ऊँटाधूरा' जयन्ती कुमरी वींगरी की त्रिपुटा का संयोग से बना हुआ यह धूरा विकराल लगा। पर हिम्मत क्यों हारे ?

हारिये न हिम्मत विसारिये न हरि नाम।
जाहि बिध राखे राम ताहि बिध रहिये ।।
वह कौन सा उकदा है जो वा नहीं हो सकता ?
हिम्मत करे इन्सान तो क्या नहीं हो सकता ?

ऐसी कौन सी ग्रंथि है जो सुलझ न सके।

अगर मनुष्य साहस करे तो क्या नहीं हो सकता।

'अन्त में हिमालय हारा।

ऊँचे शिखर पर खड़ा रहा। वहाँ से थोड़ा उतार के बाद दूसरी गुम्फा से लगभग ढाई तीन मील गौरी कुण्ड किनारे पर पहुँच गये।

"प्रणाम किया पार्वती कुण्ड को।"

आधा मील के (लगभग) व्यास के उस झील में आषाढ़ में भी हिम बर्फ का छः

से बारह इंच तक का थर (खांकर) जमा पड़ा है। सामने का पहाड़ तो जड़ से शिखर तक बर्फ से भरा पड़ा है। उस पर से बार-बार बर्फ के बड़े-बड़े टुकड़े गड़ूम-गड़ूम जैसी तोप की सी आवाज करते हुए कुण्ड में धमक पड़ते हैं। चारों तरफ श्वेत शुभ्र धवल चमकते बर्फ से आँखें चकाचौंध हो जाती है। इसी कुण्ड से श्री कैलास तदन नजदीक होते हुए भी दिखाई नहीं देता। पार्वती जी यहाँ स्नान करने आती होंगी न? पार्वतीजी का स्नान घर (Bathroom) होने के कारण चारों तरफ हिममय पहाड़ों का पर्दा बन गया है।

अद्भुत और दिव्य सौन्दर्यता से भरपूर हिमालय पर लगभग बीस हजार फीट ऊँचे कुण्ड में जमे हुए बर्फ की शिला को हटाकर खूब आनन्द से स्नान किया। पानी तो अतिशय शीतल होने पर भी सूर्य नारायण की कृपा से कष्ट मालूम नहीं दिया। भजन लाभ करते हुए आसन जमाया। गीता पाठ आत्म पूजन किया। बर्फ की शिला को लाठी से तोड़कर, नाव की तरह बर्फ को तैराते हुए खेल करते रहे। कैसा शुभ्रश्वेत, स्वच्छ, पारदर्शक जैसा बर्फ? चन्द्रमा की चाँदी को भी म्हात (मात) करने वाला।

गौरी कुण्ड के स्नान बाद प्रसाद वितरण की विधि शुरू हुई। यात्रियों की मान्यता है कि यहाँ पर स्नान करने वाले प्रसाद ग्रहण करने वालों का पुनर्जन्म में भी साथ होता है।

तपस्वी, महात्मा, योगियों तथा सात्विक पवित्रात्म यात्रियों ने श्री कैलास परिक्रमा श्रद्धा पूर्वक की होगी। इसलिए यहाँ पर आत्मानन्द की अपूर्व झाँकी डग-डग पर, कदम-कदम पर होती रहती है।

गौरीकुण्ड के पवित्र स्थान में तीन घंटे रहकर जीवन भर की अपूर्व और चिर स्मरणीय स्मृति को हृदय में संजोकर यात्रियों ने प्रस्थान किया कि तुरन्त पार्वती जी की आज्ञा से इन्द्रदेव ने हिम वर्षा रूपी पुष्प वृष्टि करके आशीर्वाद दिया।

गौरी कुंड से एक मील का कठिन उतार उतर कर दो पर्वत माला के बीच बहती गंगा के किनारे चले। आज की यात्रा दस मील की हुई। तीसरी गुम्फा 'जुंगलफू' के पास गंगा किनारे डेरा तंबु खड़ा करके मुकाम किया।

पहली और दूसरी गुम्फा की तरह यह गुम्फा ठीक कैलास के सामने नहीं है। पर कैलास की गोद में ही है। अतः यहाँ से कैलास का दर्शन नहीं होता। रात को नौ बजे रोटी और नमक से भोजन पाया। कैसा स्वादिष्ट भोजन। या भूख ने स्वादिष्ट बना दिया। राष्ट्रध्वज सत्याग्रह की प्रसादी स्वरूप टूटे पैर को हॉटवाटर बैग से सेंक करने लगा। दर्द तो सही पर गौरव भी रहा।

मूकं करोति वाचालं, पंगुंलङ्घयते गिरिम् ।
निद्रा देवी की गोद में ॐ शान्ति ।
श्री कैलास परिक्रमा का दूसरा दिन आनन्द पूर्वक पूर्ण हुआ।

दिनांक ९ अगस्त १९३१, रविवार

भारत के अनेक तीर्थ स्थानों में पंडे लोगों से परेशानी होती है। परन्तु इन गुम्फा के लामा अधिक सन्तुष्ट मालूम दिये। गुम्फा या गोम्पा में बुद्धदेव तथा देवी देवताओं के दर्शन किये। यह गुम्फा है तो छोटी परन्तु स्वच्छ है।

सूर्य नारायण की कृपा से आकाश स्वच्छ है। एक मील चलकर यात्रियों के दो दल बने। एक दल चंवर, याक सामान सहित सीधे दरचन गया। दूसरे दल में हमारे साथ इक्कीस यात्री पगडण्डी की कठिन चढ़ाई चढ़कर चौथी गुम्फा 'झांग्टा' के लिए प्रयाण किया। सख्त चढ़ाई के अन्त में लगभग अठारह हजार फीट की ऊँचाई के शिखर पर आराम करने बैठे। यहाँ से मान सरोवर तथा राक्षसताल में श्री कैलास के दर्पणनुमा लहरें उठ रही थीं। अब एक मील का उतार उतरते ही सामने ऊँचे टीले पर प्राचीन, प्राचीर विराट भव्य किलानुमा राजा के महल को टक्कर देने वाला मन्दिर देखा।

एक निर्जन घाटी में इस मन्दिर की भव्यता और बहार देती है। पत्थर के पाये से प्लिथ उठाकर तिमंजिला वाला मजबूत मन्दिर है। तीनों गुम्फा से यह झांग्टा गुम्फा चित्रों में तथा मूर्तियों में श्रेष्ठ है। बुद्धदेव की आध्यात्मिक भाव टपकाती शान्त और दर्शनीय मूर्ति है। इसके पास अष्टधातु की चार मूर्ति स्थापित है। थोड़ा आगे बीस हाथ वाली महाकाली की विकराल मूर्ति भयंकर मालूम देती है। इसके बाद ऊपर के मंजले (मंजिल) में बड़े लामा के पूजा घर में गये। तिब्बती कलामय गलीचे बिछा हुआ सुन्दर घर में शान से चमक रहा था। एक तरफ तिब्बत के पुराने हथियार, तलवार, कटार, बन्दूक, टोप, कवच, बख्तर आदि सजावट के साथ रखे हुए थे। दूसरी तरफ 'ॐ मणि पद्मे हूम' का धर्म चक्र भी स्थापित है। हिंसा और अहिंसा के भौतिक प्रतीक प्रत्यक्ष हुए। यह सब देखकर नीचे उतरने लगे तो 'आनसिंह-आनसिंह' की आवाज सुनते ही अन्तःकरण उत्साह से उछलने लगा।

साधु आनसिंह की आत्म ज्योति के विषय में पहले से सुनकर आकर्षण था ही। अतः दर्शन करने की अभिलाषा आज परिपूर्ण हुई।

"यादृशी भावना तादृशी सिद्धिर्भवति ।"

झांग्टा गुम्फा में शाम के सात बजे तक रहकर रात को देर से 'दरचन' नामक स्थान पर छः मील की यात्रा के बाद यात्रियों के साथ मुकाम किया ।

तिब्बती भाषा में श्री कैलास को 'मारिम्बो' कहा जाता है ।

श्री कैलास से लेकर उत्तर में ६५° अक्षांश तक का नाम पुराण में हरिवर्ष रहा ।

ॐ शान्ति ।
मन्दिर कुटीर १५-११-८३
घाटकोपर-बम्बई ८६

(२६) "आत्मज्ञानी आनसिंह"

(श्री कैलास परिक्रमा)

"जिनके दर्शन से पाप की वासना अदृश्य हो, हृदय में सात्विक भाव उत्पन्न हो जिनके शब्द सुनते ही मन में अद्भुत आनन्द हो और जिनके चरण स्पर्श से चित्त में भगवान प्रेम की बिजली सी दौड़ जावे, वही पवित्रात्मा आत्मज्ञानी महात्मा है।"

साधु आनसिंह के दर्शन से मुझे उपरोक्त अनुभव हुआ । अल्मोड़ा से लगभग पन्द्रह मील दूर एक देहात में आनसिंह का निवास स्थान था । लगभग १५-१७ वर्ष पहिले अल्मोड़ा शहर में नौकरी कर के गुजारा चलाते रहे । इसी दर्म्यान सख्त बीमार पड़ गये । हाथ पैर से अपंग हुए चलने में मुश्किल पड़ती थी । दृष्टि क्षीण होती गई । बोलने में भी जीभ तुतलाती । ऐसे समय किसी ने शब्द बाण मार कर प्रेरणा दी ।

"इस कलियुग में महात्मा गाँधी सच्चे महात्मा हैं ।" "उनके भक्ति भजन से सर्व कल्याण होगा ।" तब से वे "महात्मा गाँधी की जय, 'भारत माता की जय" के नारों से भाव से भक्त भजन करते रहे । हाथ में राष्ट्रध्वज धारण किया । कतुवे से ऊन कातकर 'कताई यज्ञ' शुरू किया । आश्चर्य की बात । थोड़े समय में ही चलने की शक्ति आ गई । कानपुर कांग्रेस के समय महात्मा गाँधी जी के चरण स्पर्श कर के अपने हाथ से कते हुये उनी सूत की माला पहनाई ।

त्यागवृत्ति अब बढ़ने लगी। शहर छोड़ कर गाँव या जंगल में रहने लगे। अन्न का त्याग करके फलाहार पर रहने लगे। राष्ट्र ध्वज हाथ में लेकर विश्व वन्धु राष्ट्रपिता महामानव महात्मा गाँधी का सन्देश पर्वतीय जनता को सुनाना शुरू किया। पहाड़ों के अन्तर्भाग में पैदल पर्यटन करते हुए तीर्थ क्षेत्र श्री कैलास मानसरोवर पहुँचे। इसके पहले गंगोत्री, यमनोत्तरी, केदारनाथ, बद्रीनाथ, मुक्तिनाथ, चन्दननाथ आदि की कठिन यात्रा की। श्री कैलाश की लगभग पच्चीस मील की तथा मानसरोवर की लगभग पचास मील की परिक्रमा तो अनेक बार कर चुके हैं।

"पंगु लङ्घयते गिरिम्" परमानन्द माधव की कृपा से पंगु भी पहाड़ पार कर जाते हैं। एक समय का पंगु आज पन्द्रह बीस हजार फीट ऊँचे हिमालय के पहाड़ों में सिंह बनराज की तरह पैदल यात्रा करता रहता है। कैसी कष्ट जनक साधना सिद्ध की है। उस दुर्गम अगम्य हिमालय में फलाहार कहाँ से प्राप्त हो ? इस लिए अब तो घास भाजी पाले से शरीर रक्षा करते हैं। अब तो वह भी दुर्लभ हो गया। तब पत्थर की जड़ में महीन घास के तृण (तिनके) खोज कर आहार कर लेते हैं। यानि दूब दूर्वा के तृण। विज्ञान सिद्ध करता है कि गाय, घोड़ा, बकरी, चंवर, याक आदि घास से ही पोषण प्राप्त करते हैं। तो मनुष्य भी उससे पोषण ले सकते हैं। साधु आनसिंह भौतिक विज्ञान के ज्ञाता नहीं हैं। पर आत्मज्ञानी तो है न ? इसी तरह उन्होंने अन्नाहार, फलाहार, दूध, मेवा, मिठाई आदि का सदन्तर त्याग कर दिया है।

साधु का एक गुण अपरिग्रह व्रत है। यह सच्चे साधु सच्चे अर्थ में इस व्रत का पालन कर रहे हैं। स्वयं के हाथ से कते ऊन की एक चादर शरीर के चारों तरफ लपेट लेते हैं। एक दूसरा कम्बल है। जो ओढ़ने बिछाने का साधन बेडिंग-विस्तर जो कहो वही है। हिमालय की भयंकर ठण्ड में एक ही कम्बल से काम चलाना वह तो आश्चर्य जनक तितिक्षा का पराकाष्ठा है। बर्फ तथा बजरी व ओले का वर्षा में हमारे जैसे लोग तीन चार गरम कपड़े पहिनने के अलावा रेन कोट आदि के साधन होते हुए भी दाँत पर दाँत करारी ठण्डी के कारण स्थिर न रहे वहाँ यह साधु मौज से रहता है।

"जितनी आवश्यकता कम उतनी अधिक आजादी" वह चादर, तथा कम्बल अपने हाथ से कती ऊन के हैं, वह आज के देश सेवकों—रचनात्मक कार्यकर्ताओं के लिए आदर्श है। सिर पर टोपी नहीं, पैर में पादत्राणा—जूते नहीं। शरीर कैसा स्वच्छ ताँबे जैसा तपश्चर्या से तेजस्वी मालूम देता था।

साधु आनसिंह अब पहिले का सा पैर घसीट कर चलने वाला पंगु—पक्षाघाती तुतलाने वाला अनपढ़ आनसिंह नहीं है। अब तो जिसकी 'आत्मज्योति' खुल गई है। भयं-कर कष्ट भी तपस्चर्या करके सहज बना लिया है। ऐसा आत्मज्ञानी, तपस्वी, पवित्रात्मा महात्मा साधु आनसिंह है। जिनकी शरीरिक, वाचिक, मानसिक पवित्रता से आतमशुद्ध

हुई है। वैसा आत्मज्ञानी है। हिमालय तथा तिब्बत व नेपाल के पहाड़ो में 'अवधूत' मस्त बनकर घूमा करता है। जिनके सभी संशय कट गये हैं, नम्रता की साक्षात् मूर्ति है, अपरिग्रही निष्पृही, निष्काम, पवित्रात्मा है।

"नर करणी करे तो नर का नारायण बने"

उसका ज्वलन्त दृष्टांत प्रत्यक्ष है अद्वैत वेदान्त के सूत्र जिनके मुख से आपो आप ठेठ पहाड़ी भाषा में निकलता रहता है।

"मूकं करोति वाचालं, पंगु लंघयते गिरिम्।
यत कृपा तम हम बन्दे, परमानन्द माधवम्॥"

का प्रत्यक्ष उदाहरण आनसिंह का अस्तित्व है। आत्मदर्शन के लिये शास्त्र ज्ञान तथा प्रकांड की विद्वता की कोई खास आवश्यकता नहीं है। नरसिंह मेहतर रैदास चमार, गोरा कुम्हार, रंकाबंका, सज्जन कसाई, बोड़ाणा राजपूत, कबीर बुनकर, शबरी भीलनी आदि भक्तगण उपनिषद वेदान्त, नये शास्त्रों के प्रकाण्ड विद्वान नहीं थे। उत्कत श्रद्धा, भक्त भाव से आत्म शुद्ध करके परमात्म व आत्मदर्शन किये हैं।

विश्व वंद्य, विश्व मानव, राष्ट्रपिता बापू के प्रिय भजन "वैष्णव जन के अनुसार सारे प्रसंगों का साधु आनसिंह के अन्तःकरण में अस्तित्व है। कैलाश की चौथी गुम्फा ज्ञांग्टा में अब हम दो ही रहे। एक कोने में एक लामा पूजा कर रहा था। लगभग पाँच घंटे कहाँ और कैसे व्यतीत हुए पता नहीं लगा, सत्संग के आनन्द में समय का ज्ञान नहीं रहा। उस साधु ने बहुत सी बातें की। बुद्ध कौशल या वाक् चातुरी या विद्वता से भरी हुई नहीं थी। पर अन्त स्फुरणा से सहज नितरती ठेठ पहाड़ी भाषा में वह दिव्य वाणी थी। उस वाणी का थोड़ा प्रसाद निम्न प्रकार है।

"रामावतार, कृष्णावतार वैसे ही गाँधी अवतार है अस्पृश्यता को निर्मुल को करो। मानव-मानव सब समान हैं, एकता और संगठन से स्वराज प्राप्त होगा। मुल्क साफ, मन शुद्ध, हृदय पवित्र तो स्वराज्य सहज है। जितना पवित्र बलिदान दिया जायेगा। कष्ट सहन किया जावेगा। उतना कल्याण है। सत् युग आनेवाला है। राजा प्रधान, दीवान, हल जोतेमय। मेरा पूर्ण जन्म हिमालय में रहा—आज भी यहाँ निवास है। स्वराज्य शान्ति और अहिंसा से प्राप्त होगा। हिंसा से नहीं। गुरु के दर्शन होते ही सर्व संशय कटकर आत्म शान्ति प्राप्त होकर आत्मदर्शन होता है।" ॐ शान्ति।

लामाओं तथा तीर्थ यात्रा की भी बातें कीं। "लाला लाजपत राय, मोतीलाल नेहरू आदि देश भक्त भारत के पुष्प गये।" ऐसा कहकर राष्ट्रीय आन्दोलन की बहुत सी बातें कीं।

महाराज मैसूर हाल ही में इसी वर्ष कैलास यात्रा को आये थे। तब साधु आनसिंह को मैसूर आने का आमन्त्रण दिया। पर उस निःस्पृही साधु ने उत्तर दिया "मैं भला और हिमालय भला। पूर्व जन्म यहाँ था। अतः यह जन्म भी यहीं बीतेगा।"

भारत वर्ष में अलेक्जेंडर-सिकन्दर आये तब भारत के योगी के दर्शन की अभिलाषा प्रगट की। उन्हें सिन्धु नदी के किनारे ले जाकर तपस्वी साधु का दर्शन कराया। अपरिग्रही दिगम्बर स्वरूप यह अवधूत परमहंस थे। ग्रीस (रोम) में आने का आमन्त्रण दिया, तब उस अवधूत परमहंस अद्वैत वेदान्त की भाषा में अस्वीकार किया। ठीक उसी तरह मैसूर महाराजा का आमन्त्रण हिमालय के साधु आनसिंह ने अस्वीकार कर दिया।

महाराजा मैसूर के साथ राणी शिंधाई भी थी। उन्होंने मेवा मिठाई फलाहार का थाल भेजा। पर उस तपस्वी ने कहा—"जंगल की घास पत्ती, भाजी पाला आदि हिमालय का शीतल जल मेरे लिए मेवा मिठाई दुग्धाहार है।" हमारे एक साथी यात्री पशमीने की सुन्दर कीमती शाल अर्पण करने लगे तब उस अवधूत मस्त योगी ने उत्तर दिया—"मेरे हाथ के कते ऊन की कम्बल ही शाल दुशाला व पश्मीना है। अब भी मेरे पास तीन गज का टुकड़ा पड़ा है। यह नहीं चाहिये।"

श्री कैलास शिखर थोड़ी दूर तक वह साधु चढ़ा है जहाँ आज तक कोई देहधारी मानव नहीं पहुँचे। मानसरोवर की लगभग ६४-७५ मील का विकट परिक्रमा बारम्बार किया करते हैं। प्रथम दर्शन से ही जिन पर श्रद्धा उत्पन्न हो आवे, ऐसा मुनि वेष है। तपश्चर्या से बना सुकल (सूखा) लकड़ी जैसा शरीर शिर पर शिवजी की तरह सुन्दर जटाधारी और वल्कल की तरह कम्बलधारी, अष्टावक्र सी वह मूर्ति आज भी स्पष्ट चित्रपट की तरह चित्त पर तादृश्य होती है। पहिले का तुतलाने वाले आज बिना रुके आसानी से बोल सकते हैं। तिरछी दृष्टि से देखते हैं। क्योंकि पहिले आँखें अच्छी नहीं थीं। हर सम्भव का मौन व्रत पालते हैं। विश्व वंद्य राष्ट्रपिता बापू भी सोमवार को मौन रखते हैं। हिमालय में भी नियम पूर्वक नित्य स्नान करते हैं। फिर भी आग सेकने का आवश्यकता नहीं पड़ती।

साधु आनसिंह का फोटो भी उसी समय ले लिया गया। अतिहिम वृष्टि के समय तिब्बत तथा भारत की सीमा पर के गाँवों में आ जाते हैं। अधिकतर तिब्बत के ताकलाकोट के पास खोचरनाथ मठ में वास करते हैं। तब तो भारत आने की भी आवश्यकता नहीं है। तिब्बती जनता तथा लामा लोग इनके प्रति आदर और श्रद्धा रखते हैं। भारतीय लामा कहे जाते हैं।

अपने 'ध्वज' में से कपड़ा फाड़कर खातक प्रसादी स्वरूप देकर आशीर्वाद दिया। एक लामा के पास से जो कि बीस हजार फीट की ऊँचाई के हिमालय के पहाड़ों में से सुगन्धित वनस्पति एकत्रित की थी वह भी दी।

(तारीख २१ मार्च ३३ के दिन एक सज्जन ने सुनाया कि साधु आनसिंह का आवरण यानी शरीर अदृष्य हुआ। परन्तु आत्मा तो अमर है।)

श्री कैलास मानसरोवर की सवा पाँच सौ मील की यात्रा में अद्‌भुत् दर्शन क्या हुआ ? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि एक तो कैलास, दूसरा मानसरोवर, तीसरा तपस्वी साधु आनसिंह।

साधु आनसिंह जैसे अनेक पवित्रात्मा महात्मा हिमालय में बैठकर विश्व सात्विक सेवा कर रहे हैं।

प्राचीन ऋषि मुनि पवित्र भावों, शुद्ध संकल्प सहित विश्व का कल्याण करते हैं।

"सर्वेऽत्र सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद दुःख माप्नुयात् ॥

ॐ शान्ति। मन्दिर कुटीर, घाटकोपर-बम्बई, १५-११-८३

(२७) पुण्य क्षेत्र श्री मानसरोवर
दिनांक १० अगस्त, १९३१

"मानसरोवर कौन परसे, बिना बादल जहाँ हिम बरसे।"

कैलाश यात्री अगर तीर्थपुरी का यात्रा न करना चाहे तो ज्ञानिमा मण्डी से सीधे दरचन आकर श्री कैलाश की परिक्रमा पूर्ण कर सकते हैं।

दरचन मण्डी में २०-२५ हुणिये तिब्बतीओं के काले तंबु तथा उतने ही जोहारी भोटिये भारतीय व्यापारीओं के श्वेत तम्बू से यह मण्डी आबाद हुई थी। एक जोहारी मित्र को साथ लेकर 'लो-बा' के महल में गये। 'लो-बा' राजा को कहते हैं। लो इलाके का सर्वे सर्वा शासक है तथा पहली और तीसरी गुफा का धर्मगुरु (मालिक) भी यही है। दरवाजे के प्रहरी (संतरी) के साथ अन्दर सूचना भेजी। तुरन्त बुलाये गये। सिपाही के साथ महल में प्रवेश किया। सीढ़ी चढ़कर छत पर से एक अंधेरे कमरे से पसार होकर सामने का पर्दा उठा। और 'लो-बा' के सन्मुख जू० (प्रणाम) किया। 'लो-बा' ने तिब्बती कलामय कीमती गलीचों पर विराजने का इशारा किया।

'लो-बा' गौर वर्ण ऊँचे कद का खूबसूरत सौम्य चेहरे वाला गम्भीर पर नव जवान राजा है। ऊँची लाल टोपी तथा मखमली लबादे की पोशाक में इनका दबदबा और भव्य मालूम देता था। सिक्कीम के पास के भुटान प्रदेश का बतनी भूटानी राजा है। उन से थोड़ी दूर दो लामा आसन पर विराजे हुए थे। विशाल कक्ष के एक कोने में बड़ा पलंग था। सामने तलवार, कटार, खुकरी, बन्दूक, भाले आदि लटकाये हुए थे। भव्य सिंहासन पर बुद्ध देव तथा अन्य देवी देवताओं की भव्य मूर्ति स्थापित थी। दुभाषिया मार्फत कहलवाया दूर देश "ज्ञाखर भारतवर्ष से आकर कठिन और कष्टजन्य यात्रा आप लोग करते हैं इसके लिए धन्यवाद है। श्री कैलाश यात्रा से सर्व का कल्याण होगा।"

विश्ववंद्य राष्ट्रपिता बापू के फोटो का दर्शन 'लो-बा' राजा ने प्रेम और श्रद्धा सहित किया। इसके बाद हम यात्रिओं को खातक तथा मिश्री की प्रसादी दी। वन्दन करके विदा लेकर प्रस्थान किया।

भारतीय गुलाम हैं। 'लो-बा' स्वतन्त्र है। स्वतन्त्रता के गहन विचार में कदम भरता हुआ आगे बढ़ा।

श्री कैलास के किले में से बाहर निकल कर खुले मैदान में 'मान्धाता' के सामने मानसरोवर प्रति हम यात्री गण बढ़ते चले। इस मैदान में शंकर की जटा में से प्रवाहित होती गंगा की तरह कैलास पर्वत माला में से निकलती अनेक गंगा पार करते हुए चले जा रहे हैं।

एक दलदल में चँवर चिपक गया। गहरा उतरने लगा था पर बहादुर ताकतवर हुणिये ने खींचकर बाहर कर दिया। चारों तरफ दलदल का साम्राज्य होने से लम्बा रास्ता लेकर सात मील पर 'बरखा' पड़ाव पर एक बजे पहुँचे। 'बरखा' तिब्बती अफसर तरजुम (कलेक्टर) का प्रधान कार्यालय है यहाँ पर तम्बू गाड़ने के लिये खूटे ठोकने के लिए पत्थर न मिलने से छोटे पत्थर की उपयोगिता समझ में आई। हर चीज का हर स्थान पर महत्व है।

श्री कैलास पर्वत माला एक ओर है, सामने विशालकाय हिमाच्छादित सुमेरु मान्धाता तथा अन्य बर्फानी पहाड़ों का दृश्य मनोहर होने से आज का रास्ता अधिक आकर्षक लगा। दोनों तरफ से खुला विशाल मैदान है।

कैलास का यहाँ से अद्भुत और दिव्य दर्शन है मानो कि स्वर्ग की सीढ़ी है। कैलास के कटिभाग में एक काली रेखा स्पष्ट तौर से निगाह में आ जाती है। रेखा के लिए दन्त कथा कही जाती है—"श्री कैलास को रावण ने लंका में उठाकर ले जाने का निश्चय किया। हुणिया लोग पीठ पर बोझ उठाते समय रस्सी लपेटकर बांध लेते हैं।

उसी तरह रावण कैलास के चारों तरफ रस्सी लपेट कर लघुशंका के लिए एक तरफ चला गया। लघुशंका से आज का रावणहृद यानी राक्षसताल बना ऐसा कहा जाता है। इसके बाद तो कैलास को ले जाने की बात रावण के दिमाग से उतर गई। और सीधे खाली हाथ लंका चला गया। कैलास के चारों तरफ रस्सी लपेटने से गहरी रेखा बन जाने से उस स्थान पर बर्फ नहीं टिकता।"

यह कहानी सत्य हो या नहीं पर इतनी बात सत्य है कि ऊपर नीचे विपुल प्रमाण में बरफ होने पर भी बीच में काली रेखा बिना बर्फ की आज भी स्पष्ट दिखाई देती है।

दिनांक ११ अगस्त १९३१ मंगलवार

शास्त्र तथा पुराण में जिसका महात्म्य माया है, ऐसे पुण्य क्षेत्र मानसरोवर में स्नान करने की पवित्र अभिलाषा सहित उत्साह होने से प्रातः काल शीघ्र तैयार होकर "कैलास पति महादेव की जय" के जय घोष के साथ यात्री गण ने प्रस्थान किया।

डामा (जलावन की जड़) पेड़ को कूदते-फाँदते बालू के मैदान में पैर को उठाते सीधे नाक की सीध में चले जा रहे हैं। दाहिने हाथ बिलकुल नजदीक ही राक्षसताल लहरें मार रहा है। हवा ऐसी विचित्र है कि दूर की चीजें नजदीक मालूम देती हैं। मरुभूमि में भी ऐसा ही होता है।

'ज्यू' गुम्फा पर दस बजे पहुँचकर मानसरोवर का दर्शन किया। संसार में सर्वोत्तम मानसरोवर में जैसे लहरें (तरंगें) लहराती हैं। वैसे ही हृदय रूपी मानसरोवर में भी सात्विक आनन्द की लहरियाँ लहराती उछलती रहती हैं। 'ज्यू' गुम्फा के मानस गंगा के किनारे गरम पानी के झरणें हैं ऐसा साधु आनसिंह ने कहा था। उनके कहे अनुसार निशान देखते हुए वहाँ गये। दाल, सब्जी, चावल सीज जावे, ऐसा उबलता खौलता गरम पानी पृथ्वी के पटल को धरती फोड़कर निकल रहा है। यहाँ स्नान करने के बाद मानसरोवर किनारे आकर डेरा तम्बू तानकर स्नान के लिए 'मानसरोवर' जल में उतरे।

मान सरोवर को न परसे।
बिना बादल जहाँ हिम बरसे॥

'सरन मणि मानसर' तो यही है न ? कितने ही ऋषि मुनि सन्त तपस्वी साधु पवित्रात्माओं ने यहाँ आकर आत्म दर्शन किया होगा ? मानसरोवर के महात्म्य के विषय में महान् मुनीश्वर भी मौन समाधिस्थ बन गये हैं। मनरूपी मानसरोवर से छलाछल भर गया है। हृदय में से आनन्द की सरिता बह रही है। अन्तःकरण कृतकृत्य और गद्गद् हो रहा है।

सात्त्विक आनन्द इतना भर गया है कि समा ही न सका और आँख में अश्रु गंगा धारा प्रवाहित होने लगा। संक्षेप में परम शान्त बना।

मानसरोवर पवित्र प्रेरणा स्फुरित कर रहा है, "ऐसा अनुभव हुआ।" मानसरोवर के स्नान और दर्शन से मनुष्य की मुक्ति सहज होती है। इस बात की सत्यता सिद्ध हुई। यह भूमि ही अद्भुत और दिव्य है, मानसरोवर की महत्ता विद्यार्थी अवस्था से ही सुनता आ रहा था। श्री स्वामी हंस रचित कैलास मानसरोवर दर्शन पुस्तक से प्रेरणा पा रहा था। जिसके दर्शन के लिए भारत की करोड़ों आत्मा तरस रही है। यूरोप, अमेरिका आदि के धुरन्धर विद्वान दूर-दूर से आते हैं, जिसकी नैसर्गिक शोभा की प्रशंसा विद्वानों ने की है। जिसके माहात्म्य से शास्त्र और पुराण भरे पड़े हैं। ऐसे पवित्र मानसरोवर का दर्शन व स्नान करके स्वयं को धन्य माना। जीवन में आत्म-सन्तोष हुआ।

आकाश स्वच्छ था। बादल तो बिलकुल नाम का भी नहीं था। सूर्य चमकने से धूप अच्छी थी। किनारे पर की रंग-बिरंगी कंकड़ियों की पाली पर गीता और कपड़े रखकर कमर तक गहरे पानी में गया। पानी बहुत ठंडा नहीं था। सौम्य शीतलता थी ही। इसलिए आनन्द पूर्वक स्नान कर रहा था। तब साथी यात्री ने फोटो भी खीच लिया था, यह तो अमर स्मरण बन गया। जल भरकर किनारे पर आया। अन्य यात्री-गण स्नान करके तम्बू में चले गये। तब अकेले अकेला मानसरोवर के विषय में गहरा और गम्भीर विचार में आनन्दमय अवर्णनीय स्थिति में मानसरोवर माहात्म्य सोचता हुआ आत्मानन्द में लीन बनकर तीन घंटा शान्त बैठा रहा। पर तृप्ति कहाँ ? जीवन का अविस्मरणीय दिवस !

समुद्री सतह से चौदह हजार नौ सौ पचास फीट की ऊँचाई पर संसार का समुद्र जैसा विशाल पर मीठे पानी का लगभग पचास मील के विशाल परिधि का नैसर्गिक सौन्दर्य सहित आध्यात्मिक वातावरण से परिपूर्ण, प्रेरणा दायक दिव्य और अद्भुत सरोवर है। निर्मल स्वच्छ जल से भरा हुआ, स्फटिक सा पारदर्शक, पार्वती और कैलास-पति के दर्पण की तरह चमक रहा है। दूर-दूर सरोवर के मध्य में राजहंस के दर्शन हुये। नीर-क्षीर करने वाले मराल या मोती चुगने वाले यही राजहंस !

या–"परमहंस–यह कि बगुले किस्म का हंस ! वह तो राम जाने । यहाँ से ठीक सामने नजदीक ही श्री कैलास का दिव्य दर्शन हो रहा है जो कि वर्णनातीत है ।

'नेति नेति'

मानसरोवर का मुख्य गुम्फा 'ज्यू' में दर्शन करने गये । एक ऊँचे टीले पर प्राचीन प्राचीर सा एक किले की तरह भव्य मन्दिर मानसरोवर का महात्म गाता हुआ खड़ा है । स्कन्द पुराण में मानसरोवर का व्यास चौरासी कोश का दिया है । डामा का जंगल बालु का मैदान तथा राक्षसताल वगैरह मिलाकर तो आज भी इतना व्यास हो सकता है ।

मानसरोवर की मछलियाँ दवाई के काम में लाई जाती हैं । बहुत से यात्रियों ने गुम्फा के लामा से खरीद भी ली । मुझे तो मानसरोवर का पवित्र जल तथा किनारे पर की घास और विविध किस्म के रंग के पत्थर और शालिग्राम का संग्रह करने में आनन्द आया ।

श्री कैलास की तरह मानसरोवर का भी प्रदक्षिणा की जाती है पर बहुत कम यात्री मानसरोवर की परिक्रमा करते हैं, क्योंकि रास्ता कठिन है । डाकुओं का भी भय है नदी नाले खंदक खाई पार करते हुए बर्फानी पहाड़ पर चढ़ते उतरते लगभग ७५ मील की परिक्रमा है ।

तिब्बती भाषा में मानसरोवर को ·· ···

"माप हाम युमत्सी कहते हैं कोई उसे·······छू माफांग" भी कहते हैं इसके विषय में एक कथा भी कही जाती है ।

इस मानसरोवर के अन्दर एक वृक्ष है । जिसके फल से सारे कष्ट दूर हो जाते हैं । उस फल की खोज में ऋषि-मुनि-योगी-तपस्वी-महात्मा तथा देवता और मनुष्य रहते हैं ।

ॐ शान्ति ।

मन्दिर कुटीर घाटकोपर बम्बई १६-११-८३

(२८) मान्धाता

दिनांक १२ अगस्त ३१ बुधवार

मानसरोवर के पवित्र और स्फटिक से पारदर्शक जल में स्नान करके शीघ्र प्रस्थान किया। मानसरोवर से प्रवाहित होती मानस गंगा को पार करके आगे बढ़े। मानस गंगा राक्षसताल में जा मिलती है। बाँये हाथ मानसरोवर दाहिने हाथ राक्षसताल दोनों के बीच में यात्री संघ बढ़ता चला जा रहा है। राक्षस ताल के किनारे थोड़ी चढ़ाई और उतार के बाद पहुँचे। बारह फीट चौड़ी तीन मील लम्बी रंग-बिरंगी कंकड़ी का कुदरती ताल की लहरों से बनी सुन्दर सड़क पर चलने में आनन्द आया। जबरदस्त तरंगों सहित उछलती हर लहर में सूर्य का प्रतिविम्ब चमकते से शीशमहल की तरह हजारों सूर्य का सुन्दर प्रदर्शन शोभित था। शीतकाल में सरोवर का जल बर्फ बनकर जम जाता है। तालाब के बीच अनेक छोटे-मोटे टापू स्थित हैं।

चंवर याक आदि थक जाने के कारण लगभग दस मील चलकर राक्षसताल के किनारे मंजिल के बीच ही डेरा तम्बू तानना पड़ा। चंवर विचारे क्या करें? पूरा भोजन यानी घास प्राप्त न हो सके। पूरे दो मन का बोझ तथा एक सवारी को उठाना आसान बात नहीं है।

दिनांक १३ अगस्त ३१ गुरुवार

मानसरोवर से राक्षसताल का पानी अधिक ठंडा लगा। आज के कर्दम ऋषि के आश्रम यानी कर्दम स्थान पर पहुँचने का विचार होने से यात्री गण शीघ्र तैयार हो गये। पर एक साथी यात्री का घोड़ा खो गया। सुनकर सब खड़े हो गये।

सामने तो राक्षसताल समुद्र की तरह लहरा रहा था। अतः तीन तरफ खोज करने निकल पड़े। गाईड-गटुक की छोटी पर तीक्ष्ण दूरबीन जैसी आँख से देखकर 'ता' घोड़े को खोज लिया। घोड़े के दोनों अगले पैर जंजीर से बाँधकर ताला डाला था।

फिर भी इतनी ऊँचाई पर घास देखकर कैसे चला गया ? यह आश्चर्य की बात है। असल में घास उसी तरफ ही थी और घोड़ा भूखा था ही। हमें तो इस दर्मियान वर्षा हो जाने से ठंड में ठिठुरना पड़ा। कहा जाता है कि राक्षसताल के किनारे पड़ाव करना अशुभ माना जाता है। यहाँ न मन्दिर है, न गुम्फा, न तीर्थ स्थान जैसे कुछ भी नहीं हमें वहाँ पड़ाव करना पड़ा, इसलिए शायद यह परेशानी उठानी पड़ी होगी। पर ईश्वर की कृपा से कल्याण है।

इन्द्र देवता ने–वर्षा ने माया समेट ली और सामने ही महान् मान्धाता ने भगवी कफनी (गेरुआ) पहनकर दिव्य दर्शन दिया। राक्षसताल "सन्ता कुकड़ी" (Hide and Seak) खेलता हो इस तरह कहीं बड़ा तो कहीं छोटा, कहीं गोल तो कहीं षटकोण। ऐसी विविध लीला दिखाया करता था।

ठीक मान्धाता की जड़ में पेट पूजन करके सुमेरु गंगा पार करके चौदह मील चल कर डेरा तम्बू तान कर डेरा डाला। यहाँ जंगली चने तुम्भर पौधे देखे। पार्वती जी के बिना और कौन यहाँ बोने आया होगा ?

दिनांक १४ अगस्त सन् १९३१ शुक्रवार

सुमेरु गंगा में स्नान करके प्रस्थान किया। यात्री संघ में धर्मधर जिला अल्मोड़ा के एक वृद्ध किसान अपने पुत्र तथा भाई के साथ था, रास्ते में बीमार पड़ गये। कैलास परिक्रमा तो चँवर पर सवार होकर कर ली थी। आज उनका कैलासवास (निधन) हो गया। अग्नि संस्कार के लिए लकड़ी कहाँ से मिले ? अतः गंगा बहन यानी जल समाधि देनी पड़ी। इस तरह भारतीय भावनानुसार वृद्ध किसान की कैलास यात्रा सफल हुई।

कर्दम ऋषि के आश्रम स्थान पर यात्रीगण पहुँचे। कर्दम ऋषि ने यहाँ पर तपस्या की होगी। आज तो वहाँ ऊँचे टीले पर छोटा सा किला नुमा मन्दिर मात्र है उसी के पास तिब्बतियों के पन्द्रह बीस मकान हैं। बलजर नाम के हूणिया की दुकान में चँवर गाय का शुद्ध दूध पीकर हमारे गाइड और गार्ड गटुक और ग्यालबो ने वहाँ से खमजम तथा ज्यू कहकर बिदा ली और चीरंगना हुणिया हमारे साथ घोड़े लेकर हो लिया। तिब्बती गान तथा संगीत अलापते हुए उस नौजवान ने घोड़े को दौड़ाये। कर्दम से आठ मील दूर रंसरमा नाम के मुकाम पर डेरा तम्बू डाला।

जव उवा वगैरह अनाज के सुन्दर हरे मखमल से खेत लहराते हुए आज देखने में आये । तिब्बत में अनाज बहुत कम स्थान पर उगता है, अतः आज यह खेती देखकर आनन्द हुआ । पास के हरे-भरे मैदान देखकर हरियाली रुप हरि की याद आती रही । मिट्टी के बने छोटे-छोटे घर वाले गाँव भी देखे । गाँव के बाहर भूत भगाने के लिए मंत्रित काली झंडियाँ तथा ओं मणिपद्मेहुम् लिखित पत्थर की दीवार भी देखी गई ।

ज्ञानिमा तरफ का प्रदेश वीरान, उजाड़ है । स्थायी बस्ती वहाँ नहीं है, सिर्फ तीन माह मण्डी के कारण चहल-पहल रहती है । पर यह प्रदेश हरा भरा स्थायी बस्ती वाला होने से अच्छा मालूम दिखा ।

मान्धाता पर्वत श्री कैलास से भी ऊँचा २३३५५ फीट से २५३०० फीट तक का विशाल और भव्य है । सन् १९०८ में श्री शेरांग कमिश्नर के साथी एक डाक्टर ने मान्धाता पर चढ़ने का प्रयास किया पर सफल न हुए । हिममय पवित्र पर्वत पर महाराज मान्धाता ने यहाँ तपश्चर्या की है—ऐसी कथा पुराण में है ।

ॐ शान्ति १८-११-८३

लक्ष्मी नारायण मन्दिर कुटीर, घाटकोपर, बम्बई

(२९) ताकला कोट

दिनांक १५ अगस्त १९३१ शनिवार

प्रार्थना—नित्य कर्म के बाद प्रातः काल प्रस्थान किया । संसार का प्रवास सतत चलता रहता है न ? "सर सर सरे से संसार……" वैसे ही जीवन यह भी सतत चलती यात्रा है, यह संसार धर्मशाला है । पुनर्जन्म यह दूसरी धर्मशाला है, ऐसे संसार चक्र चलता रहता है । अतः अनासक्त बनकर दैवी सम्पदा का आश्रय लेकर आत्म-दर्शन, आत्म शान्ति का अनुभव करना मनुष्य जीवन की सफलता है ।

पर्वतमाला जैसे-जैसे दोनों तरफ से नजदीक आती गई वैसे-वैसे तंग घाटी में प्रवाहित होते गंगाजल में से चलना पड़ा । चार मील चले तो छोटे-छोटे सुन्दर देहात आते गये तथा मटर, उवा जव के हरे-हरे लहराते खेत देखकर सौराष्ट्र याद आया ।" "जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ।"

सत्याग्रही श्री मोहन लाल पंड्या प्याज के चोर (डुंगली चोर) बनकर ये राष्ट्र के सेवक बने; पर हम तो आज मटर चोर बनकर स्वार्थी बने। कारण भूख खूब लगी थी। मटर के हरे-भरे खेत थे ही, पर वहाँ कोई न होने से आज्ञा किससे लें?

ताकलाकोट मध्यान्ह पूर्व पहुँच गये। तिब्बती गवर्नर जोगपंग की यह राजधानी है। ताकलाकोट के भव्य किले में गवर्नर का निवास स्थान है। करनाल नदी के सामने किनारे हूणिये व्यापारी काले तम्बुओं में (काले चँवर के बालों से बनायी गयी छोलदारी तम्बु बहुत मजबूत व ठोस होते हैं) दुकान सजाकर बैठे हुए थे। इस मंडी में भारत के चौरस व्यास दरमा के भोठाए व्यापारी तथा नेपाल इलाके के नेपाली जुमला बाजंग डोटी के लोग आकर एक दूसरे के साथ बाटर मेथड–वस्तु विनिमय द्वारा माल का लेन-देन करके व्यापार करते हैं।

ताकलाकोट पश्चिम तिब्बत की मुख्य मंडी है, यहाँ ऊन, सोहागा, नमक, ऊनी गलीचे, आसन, ऊनी चादरें, ऊन आदि का व्यापार होता है। दूर-दूर और नजदीक भी श्वेत बर्फ की पहाड़ियाँ चमक रही हैं। यह हिमाच्छादित पहाड़ियाँ भारत तिब्बत और नेपाल की हद बनाती हैं। चारों तरफ पहाड़ बीच में मंडी चौदह हजार फीट की ऊँचाई पर त्रिवेणी संगम पर बसी है। स्थायी बस्ती भी तकलाकोट में है। पहाड़ में गुम्फा खोदकर रहने लायक स्थान बनाकर कबूतर खाने का रूप देकर मकान तैयार किये हैं।

पश्चिम तिब्बत का यह विशाल नगर कहा जा सकता है। तिब्बत का 'गरफन' (वायसराय) गरतोक मंडी में रहता है। गवर्नर 'जोंगपंग' ताकलाकोट में रहता है। तथा कमिश्वर तरजम बरखा में बसता है। इन हाकिमों की नियुक्ति ल्हासा से होती है। सबसे सर्वोच्च शासक तथा धर्मगुरु दलाई लामा ल्हासा में पोटाला महल में निवास करते हैं। इस तरह तिब्बत रहस्यमय प्रदेश की शासन व्यवस्था है।

ॐ शान्ति ९-११-८३

लक्ष्मीनारायण मन्दिर कुटीर, घाटकोपर, बम्बई

(३०) खोचरनाथ

दिनांक १६ अगस्त १९३१ रविवार

तिब्बती पवन वेगी अश्व पर सवार होकर पाँच यात्री ने खोचरनाथ मन्दिर मठ के दर्शन के लिए प्रस्थान किया। पन्द्रह हजार फीट की ऊँचाई की इस तिब्बत भूमि

में अश्वारोही बनकर हवा की तरह उड़ते जाते हुए राणा प्रताप और शिवाजी का स्मरण हुआ ।

दिव्य दर्शनीय दृश्य सामने पार का दिल में स्थायी बन गया । ऊँचे-ऊँचे आकाश उसके नीचे बादल उससे नीचे हिमालय की हारमाला, इसके नीचे सादी पर्वत माला, उससे नीचे भव्य किला उससे नीचे (गंगा) करनाली नदी रुपहले रेलेसी चाँदी की तरह चमकती हुई प्रवाहित होती जा रही है ।

कल्याही अद्‌भुत और दिव्य दृश्य

परमात्मा सर्वत्र है सर्व का है ।।

खोचरनाथ मठ पहुँचने के पहिले तीन गंगा (पहाड़ों में सभी नदियों को गंगा कहने का रिवाज है) पार करनी पड़ीं । चारों तरफ छोटी-छोटी संकरी गलियों में पुराने मकानों की हारमाला (रेलवेडिब्बों की तरह) मानो गोकुल ग्राम में पहुँचे हैं । हूणिया महिलाएँ आंगन में 'पीठीआचान' से बिनाई कार्य करती हैं । अस्वच्छ मैले बालक आश्चर्य से हमें देखते हुए इधर उधर घूमते थे । हुणिये-पुरुष थोड़ी फटी-फूटी हिन्दी भाषा के जानकार थे । उनसे बाते करते हुए मन्दिर खोचरनाथ के दरवार में उपस्थित हुए ।

लाल रंग के दो मन्दिर में से एक का दरवाजा खोल कर अन्दर गये । वहाँ १०-१५ लामा पूजा कर्मकांड करते हुए मन्त्र उच्चारण कर रहे थे । बीच में नमकीन मक्खन वाली चाय को न्याय देते रहते थे । लगभग बारह फीट ऊँचे आठ फीट गोल ऐसे दो धर्मचक्र दो तरफ रखे थे । जिसे चार-पाँच बार घुमाते ही लाखों मन्त्र का जप हो जाता है । इस धर्मचक्र में तिब्बती कागज पर तिब्बती गायत्री मन्त्र ॐ मणि पद्मे हुम लाखों बार लिख कर प्रतिष्ठित किये हुए हैं ।

दूसरा दरवाजा पार करके अन्दर गये तो एक विकराल चेहरे वाली भिलनी जैसी भयंकर नारी मूर्ति संतरी का काम करती हुई खड़ी थी । एक कोने में सौम्य पर राजवंशी बोदण सी पूजन करती हुई विराजी हुई थी । ताकलाकोट के गवर्नर जोंगपोंग की वह रानी सुन्दर हृष्ट-पुष्ट और सात्विक भाव वाली सौम्य नारी मूर्ति थी । लगभग एक हजार दीपक (घी के) सीढ़ी नुमा इस चतुराई के साथ व्यवस्थित रखे हुए थे । जैसे कि इन्द्रदेव के दरबार की कचहरी जलतल जगमग ज्योति से दैदिप्यमान बना रही थी ।

तिब्बत के उस भव्य मन्दिर-मठ में "राम लक्ष्मण सीता" त्रिपुटी की अष्ट धातु की लगभग सात फीट ऊँची विशाल मूर्ति भव्य दिव्य दर्शनीय प्रतिष्ठित थी । भाव विभोर हृदय से मूर्ति के चरणों में मस्तक नवा कर दर्शन करके प्रणाम किया । चित्त में आत्म-

शान्ति से प्रसन्नता हुई। कौन कहता है कि तिब्बती लोग अनपढ़ अकुशल हैं। तिब्बती चित्रकला आज भी सुन्दर और सजीव है। यहाँ के वातावरण से कुछ ऐसे अपूर्व आकर्षण का अनुभव हुआ कि सारे जीवन भर के लिये अविस्मरणीय बन गया। सहज गम्भीरता तथा सौम्यता भरा सात्त्विक वातावरण था।

तिब्बत में सीता, राम, लक्ष्मण की उपासना का सच्चा रहस्य क्या होगा? राम जाने! त्रिपुटी की परिक्रमा करते हुए हाथ में दीपक लिये हुए एक अंधेरी कोठरी में लक्ष्मी जी के दर्शन कराये। मुख्य मन्दिर की दीवालों के साथ लगी आलमारियों में तिब्बती धर्म ग्रन्थों को सावधानी से कपड़ों में लपेट कर व्यवस्थित रखा हुआ था।

दूसरे मन्दिर में जाते ही ऊपर नजर की तो नेपाल के जंगल का जबरदस्त विकराल बाघ—पिंजर दहाड़ता हुआ मुह वाला टंगा हुआ था एक तरफ विशालकाय याक चंवर तथा अन्य जंगली जानवरों के हाड़ पीजर टाँग कर ऐसी भयंकरता के वातावरण का सृजन किया था कि कपकपी छूटे। क्यों न हो यह तो कराल विकराल महाकाली का मन्दिर है न? 'टी' देवता की चतुर्भुज मूर्ति यहाँ से दाहिने तरफ है और भी अनेक देवी देवताओं की मूर्तियाँ प्रतिष्ठित हैं आगे जाते हुए गिरनार के घटोत्कच्च को भीमकाय विशाल भव्य महान मूर्ति से सारा मन्दिर छा गया है। "ग्याल छावा" नाम के देवता की यह मूर्ति है अन्य एक मन्दिर में सप्तर्षि की सी शांत मूर्ति पद्मासीन स्थित समाधिस्थ है। मूर्तियों का दर्शन करके पर ऊपर गये।

तिब्बती साध्वी चौमू "चौकीदार की तरह ऊपर के मंजले में खड़ी थी हाथ से ॐ मणि पद्मे हुम" का धर्मचक्र घूमा रही थी। पास ही में भालू जैसा भयंकर कुत्ता बँधा हुआ है।

बुद्ध देव (लामा गुरु) की श्वेत संगमरमर की मूर्ति शान्त गम्भीर भाव धारण किये हुए स्थित है पास ही धर्मग्रन्थों से भरा हुआ पुस्तकालय देखकर फिर त्रिपुटी राम के मन्दिर में आये। बहुत से लामा लोग एकत्रित हुये थे। कर्मकांड की पूजन विधि की पूर्णाहुति होने से ढोल, शहनाईयाँ से नगाई बगैरह बजने लगे। आशीर्वाद प्राप्त करके दर्शन करके जीवन में अद्भुत इतिहास को संजो कर बाहर आये।

चंवर गाय के दूध के साथ रोटी खा कर पेट पूजन किया।

"खोचरनाथ" प्राचीन मठ मन्दिर गुम्फा को प्रणाम करके प्रस्थान किया। करनाली नदी किनारे पहुँचे। तब दोपहर के बाद तीन का समय होने से नदी पूरे जोर से घुंघयाट करती, गरजती, दौड़ रही थी क्योंकि हिमालय की नदियों में दोपहर को वर्फ पिघलते हुए हमेशा पानी जोर से बढ़ जाता है।

जोगपंग की रानी घोड़े पर राजशाही शान से जा रही थी। नौकर भी सवार बनकर साथ भाग रहे थे। दो तिब्बती मजदूर पीले फूल के गमले उठा कर चले जा रहे थे।

तिब्बत की भूमि में आज अठारह मील की मुसाफरी घोड़े पर सवार हो करके तिब्बत के तीर्थस्थान की यात्रा पूर्ण करके जीवन भर की अद्‌भुत याद हृदय में सोच कर आनन्दित हुए।

"आज मिल सब गीत गाओ उस प्रभु को धन्यवाद।

ॐ शान्ति २०-११-८३

मन्दिर कुटीर घाटकोपर बम्बई–८६

(३१) पुरांग में राष्ट्रीय प्रचार

दिनांक १७ अगस्त १९३१ सोमवार

करनाली नदी में स्नान करके आत्म पूजन किया। भोजन बाद ताकला कोट का भव्य किला देखने के लिए प्रस्थान किया। हमारे तम्बू से बायें हाथ खड़ी सीधी चढ़ाई चढ़कर किले में पहुँचे।

किले में दो भाग हैं। एक तो धार्मिक लामा गुरु का मन्दिर मठ दूसरा राजनेता जोंगपोंग का महल। प्रार्थना मन्दिर के विशाल कक्ष में अनेक आसन बिछे हुए थे। जहाँ पर लामा दाबा बैठकर कर्मकांड सहित पूजन करते हैं। दीवाल पर ल्हासा में बने हुए बुद्ध देव के चित्र कपड़ें में बने हुए टँगे थे। मन्दिर के अन्तः मार्ग में विशालकाय पद्मासन लगाये समाधिस्थ भव्य और शान्त बुद्ध देव की पीतल की मूर्ति सुन्दर सिंहासन में स्थित थी। पास की अन्य तीन मूर्ति के पोशाक कबीर पंथी जैसे थे। एक तरफ धर्मग्रन्थों तथा दूसरी तरफ ढोल तथा वाद्य यन्त्र थे। तिब्बत के मन्दिर मठ तथा गोम्फा में साधारणतः अँधेरा खूब रहता है। बहुत से स्थानों पर दिन में भी दीपक बिना कुछ न दिखाई पड़ें।

धर्मगुरु बड़े लामा की कक्ष में गये। चारों तरफ देवी देवताओं की मूर्तियाँ स्थित थी। लामा ने महात्मा गाँधी तथा ज्ञाखर (भारत) और अंग्रेज सरकार के विषय में बहुत सी बातें पूछीं। अन्त में कहा अंग्रेजी सरकार को अस्पृश्य रखने में आनन्द है।

मन्दिर से बाहर निकल कर राज प्रसाद के दरवाजे के पास पहुँचे। लाल रंग से रंगा हुआ विशाल महल है। आंगन में लाल रंग का तिब्बती मजबूत घोड़ा बँधा हुआ था। पास ही में भालू जैसा भयंकर काला कुत्ता यमराज की याद दिलाता था। अच्छी बात यह थी कि वह मजबूत लोहे की जंजीर से जकड़ा हुआ था। अंधेरे गलियारे में से प्रसार होकर एक के बाद एक ऐसे तीन कमरों के पर्दों को उठाते हुए तिब्बती राजपुरुष राजपाल गवर्नर जोंगपंग के कक्ष में प्रवेश किया।

'ज्यू' प्रणाम कहकर आसन पर विराजने को कहा। कमरा छोटा तो था पर सजावट सुन्दर थी। जोंगपंग की रानी जो कल हमें खोचरनाथ मिली थी, वह धर्मग्रंथ का पाठ करती हुई पूजन विधि में बैठी हुयी थी। सौम्य चेहरे पर सात्त्विक मधुर भाव टपकता था पर जोंगपंग भयंकर मालूम दिया। जैसे आँख में से क्रूरता टपकती हो। सिर पर के लम्बे बाल की चोटी बनाकर शृंगार कर लिया था। श्वेत रेशमी कुर्ते पर बनात का लबादा तथा घुटने तक का तिब्बती बूट पहने हुए था।

'जोंगपंग' एक तरह राजा कहा जाता है। परन्तु मंडी का माल सस्ते में खरीद कर मँहगे भाव में बेचने वाला कुशल व्यापारी भी है। वहाँ के राजा व्यापारी वहाँ की जनता का कल्याण क्या हो? जोंगपंग ने फोटो खिचवाने की उत्सुकता बतलाई। इसलिए छत पर उजाले में गये। जोंगपंग तथा उनकी बारह वर्ष की लड़की का फोटो लिया। छत पर से नीचे का दूर-दूर का दृश्य दर्शनीय और आकर्षक था।

राजपुरुष के राजमहल में अनाज का संग्रह बहुत है। किला ऊँचाई पर होने से पानी बहुत नीचे से लाना पड़ता है। गरीब लोग बारी-बारी से बेगार में खड़ी चढ़ाई चढ़कर पानी पहुँचाते हैं। इस कष्टदायक बेगार के लिए थोड़ी नमकीन; चाय तथा सत्तू दिया जाता है। बड़ी कृपा। शासन व्यवस्था के लिए लिखित कोई मनु स्मृति की तरह कानून नहीं है। जोंगपंग की जबान से निकला ही कानून है। शिकायत करने आने वाले को प्रथम तो हंटर पड़ते हैं, बाद में रिपोर्ट सुनी जाये। मुलजिम को बुलाकर शुरू में और अन्त में भी हंटर की प्रसादी मिले। इससे शिकायत बहुत ही कम होती है। बड़े जुर्म करने वालों के हाथ पैर काटना या जिन्दे कच्चे चमड़े के थैले में सी देना आदि भयंकर सजा होती है।

भारत की स्वतन्त्रता के प्रचार के लिए भारत वर्ष के ब्यांस चोदांख दारमा के भोटिए व्यापारियों की एक सभा हुई। तिब्बत की भूमि में भारत स्वतन्त्रता का सन्देश देने का यहाँ भी सौभाग्य ज्ञानिमा मंडी की तरह प्राप्त हुआ। यह परमात्मा की कृपा है।

तिब्बत प्रदेश जगत की छत (Roof of the world)

रहस्यमय प्रदेश जादुगरों का देश (Mysterrious land)

लामा धर्मगुरु की भूमि, आदि नाम से विश्व में विख्यात है।

ताकलाकोट मंडी में जलाने की लकड़ी का अभाव होने से सन् १९३१ में रुपये की दस सेर मिलती थी। आटा रुपये का पाँच सेर, चावल चार सेर, घी दो रुपये सेर, मिट्टी तेल एक रुपया का बोतल और ज्ञानिमा मंडी में चावल तीन सेर, मिर्च एक सेर, घी रुपये का आधा सेर भाव था। वह भी बहुत मँहगा लगा। आज सन् ८३ में तो यह सब सतयुग का भाव मालूम देता है। समय की बलिहारी तथा संसार की विचित्रता है।

ॐ शान्ति २३-११-८३

लक्ष्मीनारायण मन्दिर कुटीर, घाटकोपर, बम्बई

(३२) भारत प्रदेश

दिनांक १८ अगस्त १९३१, मंगलवार

शबनम जैसी हलकी फुहार सी वर्षा प्रातःकाल से ही शुरू हो गई। "टावा" और पासंग नाम के हूणियों के पाँच-पाँच घोड़े पन्द्रह रुपये प्रति घोड़ा किराये से गर्ब्यांक तक का ठहराया।

प्रार्थना आत्मपूजन के बाद पेट पूजन करके दस बजे प्रस्थान किया। करनाली गंगा पार करके 'मगरुम' गाँव के तिब्बती बौद्ध मन्दिर का दर्शन करके आगे बढ़े।

आकाश के साथ बातें करने वाले उतुंग हिम पर्वत के सामने पाँच मील चलने के बाद लिपूलेख घाटे की जड़ में पहुँचे। हल्दी-घाटी जैसी एक संकरी घाटी में स्वच्छ जल का झरणा कल-कल करता हुआ प्रवाहित होता था। शीतल जल पी कर कमर कस कर कठिन चढ़ाई चढ़ने के लिए कटिबद्ध हुए। समुद्री सतह से १६७५० फीट पर लीपूलेख धुरा की धुरंधर चढ़ाई धीरे-धीरे चढ़ने लगे। सुन्दर रंग-बिरंगे पुष्पों का मखमल सा गलीचा कुदरत ने बिछा रखा था। हर ग्लेशियर में इस मौसम में पुष्प खिलते हैं, आगे-पीछे, इधर-उधर 'गल' हिम ग्लेशियर थे। छुआरा आदि थोड़ा सा मेवा खाते हुए 'सोऽहम' जप जपते हुए दम ब दम पहाड़ को दबाते हुए डग भरते हुए स्वर्ग की सीढ़ी पर एक-एक कदम उठाते हुए चढ़ने लगे।

One Step enough for me. "मोर एक डगलुं बस थाय।"

ताजे बर्फ में चलते हुए ठंडी हवा की सुसुवाय से शरीर समतोल न रह कर मानो नशे की हालत में इधर-उधर लुढ़कने लगा। इतने में "गंगा गिरि गिर गये।" की पुकार सुनाई दी। इस साधु के पैर में दर्द था, अतः घोड़े पर सवार थे। ईश्वर की कृपा कि गंगागिरि गंगा में प्रवाहित नहीं हुए। समय पर सहायता प्राप्त होते ही रक्षा हुई। राम राखे उन्हें कौन चाखे ?

१६७५० फीट की ऊँचाई के हिमालय पर्वत पर खड़ा हूँ। हवा देवी हुँकार शुं-कार सुसवाती चामुंडा देवी का विकराल रूप धर लिया। इन्द्रदेव भी साथी सहित तांडव नृत्य दिखाने उपस्थित हुए। भयंकर रौद्र स्वरूप बन गया था। बादल यहाँ-वहाँ अठखेलियाँ खेलने लगे। कैसा आनन्द ? लीपूलेख पर लो-लय-लागी (लगन)।

भारत की "आत्मा की और परमात्मा की"

भारत वर्ष एक तरफ तो दूसरी तरफ तिब्बत प्रदेश बीच में उतुंग हिमगिरि लिपूलेख पर खड़े हुए चिन्तन चल रहा है। तिब्बत भूमि से विदा प्रस्थान करते हुए हृदय में विरह व्यथा हुई ! जहाँ कैलास मानसरोवर सिन्धु सतलज शतद्रु आदि गंगा की पवित्र तीर्थ यात्रा करने का सद्भाग्य प्राप्त हुआ। उसकी स्मृति से दिल में क्या-क्या अजीबो-गरीब, अनुपम भावना हिलोरे देने लगीं ? इसी भूमि में जीवन भर के संजोये हुए पवित्र संकल्प सम्पूर्ण हुए। वहाँ प्रेम तो होता ही है इस भूमि को हार्दिक प्रणाम करके भाव भरे हृदय से विदा लेकर बर्फ पर विसर्पण करते हुए खिसकते-खिसकते भारत भूमि मातृभूमि के चरणों में पहुँचे तब रोमांच खड़े हुए। हृदय भर आया। आँख में अश्रुधारा बहने लगा।

अय माता तू ही सर्वस्व है।
तेरे ही काम आऊँ तेरा ही मन्त्र गाऊँ,
मन और देह तुझ पर बलिदान में चढ़ाऊँ।

जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसि।

तीन मील के उतार के बाद डुंग नाम के पड़ाव पर डेरा तम्बु डाला गया। लीपूलेख से उद्गम होता जल प्रवाहित होता, यहाँ स्वच्छ झरनों के रूप में बहता है। घास तथा लकड़ी यहाँ प्राप्त है। एक छोटी सी धर्मशाला भी है। यहाँ पर ठण्ड अधिक मालूम दी।

दिनांक १९ अगस्त १९३१, बुधवार

हिमालय की कन्या काली गंगा में स्नान करने गया। पानी अतिशय शीतल काली गंगा की शोभा कैसी अद्भुत ? साक्षात् विष्णु भगवान का हृदय स्थान समुद्र गंगा हिमालय आदि ऐसे विविध स्वरूप धारण करते है। जैसे कि विष्णु भगवान के विविध स्वरूप। विविधता और विशालता में विष्णु का वर्ण तो वर्णनातीत है। काली गंगा गम्भीर और शीतल स्वभाव ॐ कार रूपी अनाहत ध्वनि चित्त की चंचलता तथा मलीनता दूर लेकर अपूर्व आत्म शान्ति का अनुभव होता है। विश्व में सार तत्त्व निष्काम कर्मयोग का ज्वलंत दृष्टांत गंगा सतत देती है।

कैलास यात्री गण अब भारत वर्ष की सीमाओं में ही पहुँच गये हैं। प्रथम पड़ाव से प्रस्थान करके दो उतुंग पर्वतों की घाटी में काली के किनारे चले। लाठी की तरह सीधे और कठिन उतार के बाद आसान उतार आया। अन्त में थोड़ी चढ़ाई के बाद गर्ब्यांग गाँव आता है।

तिब्बत के रुंड मुंड बिना जंगल के सूखे पर्वत, वामन बृक्ष सही पर दो फीट के ही प्लेटो प्रदेश, यह सब दृश्य का अब तो मात्र इतिहास ही रहा। अब तो भारत भूमि के ऊँचे देवदार बृक्ष सुरई तथा भोजपत्र आदि वृक्षों के जंगल दिखाई देते हैं।

काला पानी ग्राम के बाद कौला गाँव में उवा, जौ, फाफर, उगल चुवा आदि के के खेत दिखाई दिये। ताकलाकोट जाने वाले भोटिया व्यापारी तथा महिलाओं का मंडल मिला। ताकलाकोट गर्ब्यांग से सिर्फ दो दिन का रास्ता होने से बहुत से भोटिये व्यापारी परिवार के साथ मंडी में जाते हैं। एक तरह से आना-जाना रहता है।

काला पानी गाँव के पास काली मिट्टी वाला झरणा मिलने से पानी का रंग काला होता है। काली नदी के इस पार भारत की सीमा और सामने पार नेपाल की सीमा साथ-साथ चलती है। अतः कुछ समय में नेपाल की हद में तो थोड़ी देर में भारत हद में हमें चलना पड़ता था। अन्त में नेपाल की सीमा पर एक पुल पार करके काली के सामने पार भारत की सीमा में लगभग मील भर की कठिन चढ़ाई चढ़कर गर्ब्यांग गाँव में प्रवेश किया।

तिब्बत की तीर्थ यात्रा के सत्ताइस दिन के बाद प्रथम बार आज इतना बड़ा गाँव तथा पचासों घर अनेक लहलहाते खेतों की भारत भूमि में दर्शन हुए।

ईश्वर कृपा गाँव के बीच एक सुन्दर मकान में डेरा डाला, जो कि हमारे मित्र श्री मोहन सिंह गर्ब्याल का है। लगभग एक माह वस्त्र कुटीर श्वेत तम्बू में निवास के बाद पत्थर के अच्छे मकान में निवास किया। रोज की आदत तम्बू में निवास की रही, अतः आज विचित्र नवीनता लगी। अभ्यास एक अद्‌भुत चीज है। जेल से छूटने पर भी सन् ४२ में ऐसा ही अनुभव हृदय में हुआ था।

काली गंगा का सतत कलरव अखंड अजपा जाप की तरह अनाहद ध्वनि सुनाई देती रही है। शब्द ब्रह्म परमात्मा के अर्थ में है।

ॐ शान्ति ३०-११-८३

लक्ष्मीनारायण मन्दिर कुटीर, घाटकोपर, बम्बई

तिब्बत व नेपाल और भारत—त्रिपुटी की सीमा पर

दिनांक २० अगस्त, १९३१ गुरुवार

श्री कैलास मानसरोवर यात्रा सानन्द सम्पूर्ण करके भारत माता के चरणों में (भारत प्रवेश) पहुँचने की सूचना मित्रों को पत्र द्वारा दे दी गई। "पवित्र संकल्प की पूर्णाहुति"।

जोहार घाटी का भारत वर्ष के अन्तिम ग्राम मिलन अल्मोड़ा से १०५ मील दूर है, वैसे ही इस तरफ सीमान्त पर १४५ मील दूर है—समुद्री सतह से लगभग दस हजार फीट की ऊँचाई पर यह ग्राम है।

श्रावण मास की वर्षा की तरह दिन रात सतत् वर्षा होती रही। पक्के मकान में पहुँचने के बाद इन्द्रदेव ने अपना प्रचंड रूप प्रकट किया—वह अच्छा किया। नहीं तो तम्बू में रहते इतनी वर्षा होती तो? "पर तेरे मन की तो" के आगे इतिहास ही पलट जाता है। नैपोलियन वाटरलू के युद्ध में जीत जाता तो? आज संसार का इतिहास अन्य रीति से बनता। पर ईश्वर इच्छा बली यसी।

गर्ब्यांग गाँव पहाड़ के पेट में ही बसा हुआ है। पहाड़ कच्चे होने से काली नदी के गर्भ में हर समय थोड़ी-थोड़ी जमीन गायब होती जा रही है। अगर ऐसा क्रम चलता रहा तो गर्ब्यांग गाँव ही कहीं गायब न हो जाय? यानि अधिक नुकसान

की सम्भावना है। मिलम के मुकाबले में यहाँ के मकान पक्के और मजबूत हैं। और एक मंजले वाले हैं।

काली पार के जंगलों में से लकड़ी लाकर भोजन बनाते हैं। चारों तरफ हरे-हरे खेत हैं। फसल में फाफर, उगल, उवा, जौ, गेहूँ आदि होता है। सामने नेपाल के उतुंग गगन चुम्बित पर्वत आसमान से बातें करते हुए आजादी के दीवाने की तरह खड़े हैं।

श्रावण मास होने से प्रकृति सद्यःस्नाता बन कर हरी साड़ी पहन कर हरियाली छाकर हरि का सतत स्मरण कराती पुर बहार से शोभित है।

ब्याँस चौदाँस दारमा की भोटिया स्त्रियाँ पर्दा नहीं रखती। खुली हवा में प्रकृति की गोद में कातने का बिनने का तथा कृषि कार्य सतत करते रहने से शरीर का बांधा मजबूत है। चाँदी के सिक्के और छोटी चम्मच, मोती मूंगा परवाला के हार पहिनने का रिवाज है। इस तरफ के लोग अशिक्षित होते हुए भी सरल हैं। आधुनिक सभ्यता का प्रचार जोहार में ज्यादा है, पर जो सभ्यता संस्कारिता और स्वधर्म भुला दे वैसी शिक्षा किस काम की ?

सतत वर्षा से आज सारा दिन घनघोर हो गया था। मालपा-गाला और निर-पनिआ का रास्ता भयंकर रीति से खराब हो जाने से डाक भी नहीं पहुँची। अब भी कैलास वास होने के कई प्रसंग सिर पर झूल रहे हैं। पर "राम राखे उन्हें कौन चाखे?"

२१ अगस्त १९३१ शुक्रवार

व्यास ऋषि ने यहाँ तपस्या की होगी। तब शायद यह इलाका 'ब्यांस' प्रदेश कहलाता होगा। और व्यास मुनि के चार + दस = चौदह शिष्यों ने नीचे की भूमि पर तप किया होगा। तब यह भूमि प्रदेश 'चौदांस' कहलाता होगा जो भी हो पर हिमालय तो ऋषि मुनि तपस्विओं के तप करने योग्य भूमि है।

"बन तृण पर्वत है—परब्रह्म।"

अति वर्षा रोकने के लिए जोहारी भोटीआ जनता 'हरदेवल' देवता की पूजा करते हैं यहाँ की जनता ब्यांस, चौदांस दारमा के लोग 'कून' देवता की पूजा करते हैं।

तिब्बती लामा ओला तथा वर्षा को रोकने के लिये कर्मकांड विधि मन्त्रों द्वारा जादू टोना का सहारा लेते हुए युद्ध सा करते हैं। जड़ी बूटी की धूप जलाते हैं। मेघराजा को मनाने के लिये अनेक विचित्र विधियाँ हैं। ईश्वरीय लीला भी अद्भुत है। कहीं वर्षा तो कहीं सूखा, ईश्वर तेरी माया कहीं धूप कहीं छाया।

दिनांक २२ + २३ अगस्त १९३१ शनिवार, रविवार

वर्षा से पुल टूट जाने का समाचार डाक का हरकारा (पोस्टमैन) लाया। मजदूर अभी पुल मरम्मत के लिये पहुँचे नहीं हैं।

पर्वत के शिखर पर तो कोई माई का लाल वीर पूत ही जा सकता है।

अतः दोनों दिन यहीं पड़ाव करना पड़ा। डाक तथा डायरी लिखने का काफी समय मिला। रोज-रोज वस्त्र कुटीर तम्बू में घर बसाना और फिर घर समेटने के काम से यहाँ कुछ ही दिन सही—गाँव के मकान में रहने का अवसर मिलने से अच्छा भी लगा। फिर भी यहाँ से डेरा डंडा उठाना तो है ही। संसार भी तो धर्मशाला है जहाँ से हर किसी को डेरा उठाना ही पड़ता है। मनुष्य का मन अगर शान्त है तो बाहर से चंचलता पर्यटन यात्रा होते हुए भी शान्ति है।

"अकर्म में कर्म और कर्म में अकर्म"

इस तत्त्व ज्ञान में गहरा रहस्य है।

योगिनांप्यगहनम्।

गब्यांग भारत वर्ष का तथा नेपाल की सीमान्त के गाँव में सन् १९३१ में भोजन तथा अन्य सामग्री के जो भाव थे उस समय काफी मँहगे माने जाते थे। मजदूर या घोड़े खच्चर की पीठ पर अल्मोड़े से डेढ़ सौ मील की दूरी से लाना पड़ता था। फिर भी आज ८३-८४ के भाव से तो वह सतयुग के भी कहे जावें। क्या ईश्वर की माया है। एक रुपये का पाँच सेर गेहूँ का आटा। अच्छा चावल रुपये का चार सेर, घी आधा सेर, मिट्टी तेल के बोतल बारह आने की। फिर भी गरीब लोगों की गरीबी हर युग में एक समान है। द्रोणाचार्य के पुत्र को दूध पीने की अभिलाषा हुई तो माता ने चावल को घोलकर सफेद पानी दूध के रूप में बालक को देकर फुसलाने का प्रयत्न किया।

आज भी गब्यांग के गरीब लोग बांक नाम की वनस्पति की जड़ खोदकर सब्जी या अचार बनाकर रोटी के साथ खाकर वैश्वानर पेट ज्वाला को शान्त करते हैं।

बांक के ऊपर का हिस्सा नागफेन के नथुने का होता है। पांगर आटे की रोटी बनाकर भूख को शान्त करते हैं।

भक्त सुन्दर दास जी ने कहा—"पेट भयो बड़ो पाप भयो।"

परन्तु पीठ की तरह पेट में खड्डा न होता तो अच्छा था परन्तु ? जंगली जानवरों में इधर शेर, बरड़ (भरड़), भालू, बर्फानी बाघ तथा कस्तूरी मृग वगैरह काफी संख्या में हैं। जोहार मिलम में खटमल, मक्खी, मच्छर नहीं थे। पर इधर तो इनकी बस्ती बहुत है। मिलम में वृक्ष का अभाव और रुंडमुण्ड पर्वत है। पर यहाँ तो सुन्दर हरियाली तथा वृक्षों के घने जंगल हैं।

ॐ शान्ति २-१२-८३ द्वितीय पुष्प कैलास मानसरोवर
लक्ष्मी नारायण कुटीर घाटकोपर बम्बई—८६

(३४) निरपनिआ या निर्वाण

दिनाक २४ अगस्त, सोमवार १९३१

गब्यांग से गन्तव्य स्थान के लिए प्रस्थान की तैयारी की। प्रातः प्रार्थना, आत्म-पूजन, पेटपूजन के बाद परमात्मा का स्मरण करते हुए प्रयाण किया। अब भी आगे खतरनाक रास्ता तय करना ही है। थोड़ी दूर तक मित्र विदा देने आये। उन्होंने प्रेम भरी विदा देकर सावधानी से जाने का निवेदन किया।

नेपाल के बर्फानी पहाड़ों के श्वेत शिखर सामने ही है। हरे-भरे जगल, नीचे काली गंगा, श्वेत शुभ्र रजत प्रवाह सी रेलती प्रवाहित होती बहती जा रही है।

"अय सावक भक्त ! जल मार्ग द्वारा इष्ट स्थान पर शीघ्र पहुँच सकेगा ? जब तक इष्ट देवता के विरह में तेरे नेत्र अश्रु पूर्ण नहीं होते, तब तक तेरा शुष्क तपस्या और उपवास से कुछ नहीं होने का। जमीन का रास्ता जल के रास्ते से लम्बा होवा है। धरती पर दौड़ती रेलवे ट्रेन से समुद्री रास्ते बम्बई से द्वारिका पहुँचने में कम समय लगता है। शुष्क ज्ञान वेदान्त से भक्ति का मार्ग आसान और छोटा है। इसके लिए भी ईश्वर की कृपा चाहिये ना।"

गंगा किनारे—नदी किनारे—मानसरोवर या समुद्र किनारे, इष्ट देवता की झाँकी होना स्वाभाविक है। जल को बहाता हुआ वरुण देवता है। पाताल लोक में पहुँचाता हुआ नीचे और नीचे उतार उतरते चार मील चले। तब बूँदी गाँव में यात्री-गण आये। वहाँ एक पथिक ने कहा कि आगे का रास्ता कल की वर्षा से खतरनाक बन

गया है । आदमी तो शायद किसी तरह पैदल जा सकें । परन्तु घोड़ा जाना मुश्किल है । दो घंटे विचार विनिमय के बाद तय किया कि दो पार्टी बनायी जाय । घोड़े वाले यात्री-गण यहाँ रहें । और पैदल जाने वाले जो अधिक संख्या में हैं, आगे बढ़ें । ऊँचे पर्वतों की घाटी में गंगा की गोद में चले जा रहे हैं । 'अणिचुक्यों सौ बरस जिये ।' यानी संकट समय बीत जाने पर सौ वर्ष जिये । अगर कहीं एक इंच भी चुके तो काली गंगा के गर्भ में सौ वर्ष पूरा कहाँ से ? दो तीन बालिस्त चौड़े रास्ते से देह को उठाकर जीव सहित पार हो जाना ही अद्भुत बात है । अनुभव बिना कोरी कल्पना से इसका क्या अन्दाज आ सकता है ।

लिपूलेख हिमालय से पर्वत माला को तोड़ती-फोड़ती, टेढ़े-मेढ़े इधर-उधर गर्जना करती, उछलती, कूदती, फाँदती कहीं भी रुके बिना मस्तानी चाल से निष्काम कर्म योग का पाठ सिखलाती हुई इंजीनियर की तरह रास्ता बनाती हुई काली गंगा बह रही है । विशाल होते हुए भी सँकरे और गहरे वक्षस्थल पर उछलने वाली पुनीत गंगा अपने निर्मल जल से दोनों तरफ के तट को स्पर्श करती महत्व के गौरव सहित प्रवाहित हो रही है । इस अपूर्व और अद्भुत् दिव्य दृश्य को घंटों तक देखते रहने पर भी हृदय थकता नहीं । अरे सन्तोष या तृप्ति ही नहीं होती । इस दृश्य को देखकर जागृत सविकल्प समाधि में मस्त हो लीन बन जाते हैं !

परम शान्त ओम शान्ति

आकाश और पाताल के बीच पर्वत की परवान की खड़ मय भागते हुये यात्रीगण चले जा रहे हैं । कहीं-कहीं तो ऊपर से जल धारा पड़ती है । जैसे जटाधारी शिव पर गंगा की धारा क्योंकि पर्वत के झरने से पथिक के मस्तक पर धारा पड़ती है । एक जगह तो कीचड़ भी घुटने तक मिला । एक चौड़े बड़े झरने के जल से भरी कुम्भकरण की खोपड़े ने जैसे भीम का गर्व गला दिया था । वैसे ही हमारा गर्व भगवान ने गला दिया । सारी यात्रा में अनेक नदी, नाले, झरने आते रहे । कहीं तो घोड़े की पीठ पर, कहीं याक पर या खच्चर पर कहीं तो प्रेमी मित्र की पीठ पर तो कहीं मजदूर पर पार करते रहते थे । परन्तु यहाँ इन सबके कुछ नहीं होने से बुट, मोजे, बैंडेज उतार कर झरने पार करके फिर पहनने पड़े । हाथी तो निकल गया पर पूँछ रह गयी ।

श्रद्धालु साथी यात्री सेठ जी को भी पैदल ही मजबूरन चलना पड़ा । भारी वजन की देह को चलने में काफी श्रम पड़ता था । एक मील चलते थे तो घड़ी एक घंटे से भी आगे चल पड़ती थी । रास्ता काफी लम्बा मालूम दिया । अँधेरा गाढ़ा बनता गया । मेरी तो शोर्ट साइट थी । फिर भी राम-राम कहते हुए एक कदम सम्भाल कर रखने

के बाद ही दूसरा कदम उठाता था। उस काले और घने अन्धकार में भी पहाड़ी प्रदेश का अनुपम सौन्दर्य दिखायी देता था। आँख से स्पष्ट न दिखायी देते हुए भी कान से झरने के कलरव से प्रकृति की अँधेरी छटा का अनुभव हो रहा था। शान्त एकान्त में इस भयंकर सीन, निस्तब्धता भाव भरी भावना की प्रेरणा देती थी।

"छिरपती" उडियार पर भूतपूर्व लखपति सेठ लालसिंह फत्र्याल इस घाटी की महान विभूति के दर्शन हुए जो पहले काफी धनी रहे थे। पर दान करते-करते गरीब हो गये हैं। ऐसा कहा जाता है। परन्तु सेवा भाव का अस्तित्व था ही। यहाँ का पुल टूट जाने से अपने साथियों सहित कष्ट सहन करते हुए भी पथिकों के लिए पुल तैयार करा दिया। सेवा का अहंभाव रखे बिना निष्काम सेवा की जावे वही सच्ची और आदर्श सेवा है। सेवा सदृश अवनी तल पर धर्म दूसरा नहीं है। गबांग से मालपा तक की ११ मील की यात्रा हुई। मालपा में मात्र हरकारे की एक झोपड़ी ही है। पर उस झोपड़ी में भी तो हमारे लिए आश्रय स्थान यानी की एक महल सा बन गया।

दिनांक २५ अगस्त १९३१ मंगलवार प्रातः काल पहाड़ी झरने पर स्नान करके प्रार्थना और आत्म पूजन के बाद, पेटपूजन करके प्रस्थान किया। चरैवति, चरैवति, चरैवः। काली के बायीं किनारे से चढ़ाई शुरू हुई। सूर्य देवता का प्रचण्ड प्रताप था। एक धोधमार बहते हुए झरने के किनारे भजन ललकारते हुए मस्त होकर बैठ गया। सामने के स्वतन्त्र राष्ट्र नेपाल के पर्वतों को देखकर भारत की स्वतन्त्रता के लिए दिल में कई प्रेरणायें उत्पन्न होती रहीं। भारत वर्ष स्वतन्त्र कब होगा, हम भी स्वराज्य के लिए नम्र साधक ही तो हैं ही। मातृ भूमि के नम्र सेवक। अय मातृ भूमि तेरे ही चरणों में शीश नवाऊँ, सेवा में तेरी सारे भेदों को भूल जाऊँ, वह पुण्य नाम तेराप्रतिदिन सुनूँ ओर सुनाऊँ, तेरे ही काम आऊँ, तेरे ही मन्त्र गाऊँ। मन और देह तुम पर बलिदान में चढ़ाऊँ। अय मातृ भूमि।

जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।

काली पर का पुल पार करके फिर नेपाल की सीमा में पहुँचे। काली गंगा का फोटो लिया, चरणामृत पिया। काली किनारे चलते हुए सरिता का पानी उछलकर पैर पर आता रहा। पर्वत पर से पड़ते हुए प्रचण्ड जल के प्रपात के पास पहुँचे। वह तो स्वतन्त्र प्रदेश का प्रवाह है न! दूर-दूर जोर से छींटे उड़कर छोटे से बादल बनते रहे। आजाद मुल्क की आन-बान-शान अनूठी ही होती है न। इस जबरदस्त घो घो करते हुए घो घो मार्ग जल प्रपात तथा काली गंगा की गर्जन तर्जन कैसी अपूर्व है।

गंगा अपनी शीतलता तथा निर्मलता द्वारा विष्णुपन दर्शाती है। प्रबल वेग सुसुवाट, घुघुवाट, सिंह-गर्जन, शेर दहाड़ तथा अस्थि भक्षण द्वारा स्वयं की शक्ति प्रकट

करती है । विष्णु और शिव दोनों की झलक दिखाती पोशक और नाशक बाबा पुरी जगत को कृतार्थ करने दौड़ी जा रही है । गंगा की तरंग इस स्थान पर मगरमच्छ सी आवाज करती छलांग मारती आगे बढ़ रही है । नीचे के तल में न मालूम कितने बड़े-बड़े पत्थर खड़क शिलायें पड़ी होंगी । जिससे गंगा की लहरें झाग झाग हो जाती हैं । तरंगे कितने सारी घुंमरड़िया (लोटपोट) खाती हैं । यहाँ तो गंगा की धारा भयानक झरना बन रही है । विपुल मात्रा में जल एकदम पड़ता है और फिर उछलता है । ये तो गंगा की उनमत्तता प्रकट करने वाले फैन हवा में नाच रहे हैं । या केसरी सिंह की केशावली हवा में उड़ रही है । गंगा गरजती हुई आवेश और जोश के साथ बहती जा रही है । ओह मृग रूपी अहंकार ? यहाँ आ तेरा शिकार करूँ । ओ अज्ञानरूपी सियार तेरी अहंता, ममता रूपी मासचर्म को चबा डालूंगा । हाड़-मांस को अलग कर दूँगा । ओ मोह रूपी पत्थर आ तुझे चीरकर टुकड़े-टुकड़े कर डालूं । पर्वतों को तोड़ती-फोड़ती आ रही है । अब तेरी बारी है । राम ।

काली गंगा को मिलने के लिए वहाँ झरणा इतनी जोर से दौड़ता है मानो माता और पुत्र का वर्षों के वियोग के बाद मिलन हैं । बछिया गाय को कितने वेग से मिलने दौड़ती है । इसी झरने का पुल टूट जाने से हमें चार दिन तक गर्ब्यांग में यात्रा स्थगित कर रुकना पड़ा । अभी भी अस्थाई पर खतरनाक पुल तैयार हो पाया है । दो लम्बे लठ्ठे बिछाकर उसके ऊपर टेढ़े-मेढ़े लकड़ी के टुकड़े बाँधकर पुल तैयार काम-लायक बना पाये हैं । मनुष्य जीव जानवर गाय, बैल, घोड़े, खच्चर, बकरी आदि हजारों रुपयों का माल भगवान के भरोसे इसी पुल से पार होते हैं । नेपाल की हद में एकाध मील चलकर स्वतन्त्र भूमि के हवा से ताजा बन गये । जो प्रेरक शक्ति, स्फूर्ति स्वतन्त्र हवा में है । वह परतन्त्रता में कहाँ । फिर दुबारा एक पुल पार करके निरपनिया की जड़ में पहुँचे । सामने ही ऊँचे और ऊँचे आकाश को स्पर्श करती हुई स्वर्ग की सीढ़ी की तरह सीधी श्वेत लकीर की तरह पगडंडी दिखायी दी । बस यही है निरपनिया । जिसकी भयंकरता और विकटता के विषय पर पहले से सुनते आ रहे हैं और भुक्त-भोगी अनुभव की वाणी से वर्णन कर गये हैं ।

परमात्मा का स्मरण कर कमर कसकर विकट सीधी चढ़ाई चढ़ने लगे । यात्री साथी सेठ जी के शब्दों में दो मिनट चले और दस मिनट बैठे । आधे फर्लांग की चढ़ाई में आधा घंटा आराम, पर इस भक्त चढ़ाई में भी दारमा का मजदूर पक्का एक मन का बोझ पीठ पर उठाकर पहाड़ को दबाकर हमसे भी आगे बढ़ जाता है । श्रम निष्ठा के उपासक श्रम देवता पुज्यनीय हैं । यात्री त्रिपुटी तो चींटी के वेग से, गोकुल गाय, इन्द्र गोप की सी चाल से, स्फूर्ति से ऐतिहासिक निरपनिया चढ़ने लगी ।

सीधी और सँकरी पगडंडी कहीं तो एक ही कदम पैर रखने लायक और कहीं इतनी चौड़ी। एक तरह आसमान को स्पर्श करती हुई पहाड़ की सीधी करार तो दूसरी तरफ पाताल में प्रवाहित होती हुयी काली गंगा। हिम्मत हारने वाले को अगर चक्कर आ जावे तो चौरासी योनी से मुक्त होकर सदा की समाधि, उसमें भी फिर ऊपर से पत्थर पड़ने का भय भी है ही। अगर गिरे तो बम का कार्य करे। जनक राजा के यहाँ सुखदेव जी को कच्चे सूत के तार से लटकाये हुए एक ही पत्थर का भय था। पर यहाँ तो अनेक थे।

समुद्री सतह से ९००० फीट पर "एक डंगलु बस थाय, एक कदम बस हों" एक-एक कदम उठाते हुए शिवोहं सोऽहं सोऽहं का जप जपते हुए सर्प की सी टेढ़ी-मेढ़ी पगडंडी पर चढ़ते जा रहे हैं। फिर भी ऊँटाधूरा की भयंकर घबराहट का यहाँ एक अंश भी नहीं था। पेट में भूख लगी तो पैर पीछे पड़ने लगे। प्रकृति यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति।

हरियाली छाये हुए सामने के खेत देखते हुए पहाड़ी किले में से होते हुए अन्त में नारायण ओम का नाम लेते हुए निरपनिया की झंडीधार शिखर पर पहुँचे। ॐ शान्ति। बादल नृत्य करने लगे। कोहरा छा गया। थकावट उतर गई। थोड़ी दूर जाते ही 'जिप्ती' दुकान के पास पहुँचे। मक्के के भुट्टे से भूख को शान्त किया। फिर आगे प्रयाण किया।

गाला गलगड आठ मील चलकर एक झप्पर में डेरा डाला। बड़ी देर तक बातें होती रहीं। यात्रियों को कष्ट के बाद आत्मानन्द हुआ। रोटी गुड़ से पेटपूजन करके देव के आशीर्वाद रूप वर्षा से समाधि भंग हुई। तपकेश्वर महादेव की तरह मस्तक पर टप-टप बूँद-बूँद पानी टपक रहा था।

भगवान के दस अवतार में 'कच्छप' (कछुवा) तथा 'मत्स्य' अवतार की झाँकी श्रद्धालु भक्तों को होती है न ?

ॐ शान्ति ५-१२-८३

लक्ष्मी नारायण मन्दिर कुटीर घाटकोपर बम्बई–८६

(३५) तपोवन धारचूला

दिनांक २६ अगस्त, १९३१ सोमवार

"आज मिल सब गीत गाओ उस प्रभु को धन्यवाद"

कैलाशपति महादेव की कृपा से कैलाश यात्रा में कैलाशवास होने के अनेक कठिन

प्रसंगों को पार करके भारत की सीमा के अन्तर्गत आनन्द पूर्वक पहुँचे । 'संकट इतना भयप्रद नहीं होता जितना संकट का विचार होता ।'' संकट के स्वागत में तो आनन्द आता है । सहृदुःखो शंकुजीवी प्रभो ऐ प्रार्थना मारी ।

व्यास ऋषि का व्यांस देश तथा उनके चौदह शिष्यों के चौदांस प्रदेश के तपो भूमि में दसों दिश सृष्टि सौन्दर्य निहारते हुए तृप्ति नहीं होती । सात्विक दृष्टि से सृष्टि सौन्दर्य देखते हुए सृजनहार सृष्टा परमात्मा की पोथी खोलकर पूजन करने के बराबर है। 'सत्यं शिवम् सुन्दरम्' ।

कैलाश डायरी का विस्तृत लेखन कार्य का यहाँ श्रीगणेश हुआ । रोजाना दैनन्दिनी तो अगले दिन की प्रातः प्रार्थना के बाद लिखने का सदा नियम तो है ही । उस पर से कुछ विस्तृत विवरण के साथ समय-समय पर लिखते जाना । वैसे तो इसके बाद कई बार गुजराती तथा हिन्दी में भी डायरी लिखते रहने का प्रयत्न होता रहा । जब-जब लिखते तब-तब मानों कैलाश मानसरोवर यात्रा ही करते हैं । ऐसा तो दृश्य चित्रण मन के सामने होता ही रहता है । निमित्त तो कुछ अन्य बनते रहे परन्तु मन में तो स्वान्तः सुखाय ही होता रहा यही ईश्वर कृपा ।

एक बार विश्व वन्द्य राष्ट्रपिता बापू ने कैलाश यात्रा नवजीवन में छापने को माँगी थी । तब तीसरी बार खाली स्टेट बिनसर में संशोधित रूप में लिखना शुरू किया था । परन्तु उस समय विविध रूप में व्यस्त रहकर कर्मनिष्ठ रहे कि बापू को भेजने में असमर्थ हो गये । फिर भी लिखकर पूर्ण हुई । इसके बाद सन् १९६५ में हिन्दी भाषा में लिखने का प्रयत्न हुआ । इसी आधार पर आज सन् १९८३ में पांडुलिपि तैयार की जा रही है । इस तरह हर समय मानस रीति से कैलाश यात्रा सतत चलती रही । कैलाश पति शंकर महादेव की यही कृपा है । इन संस्मरणों के साथ-साथ स्वाध्याय का भी आनन्द लेता रहा ।

स्वामी रामतीर्थ का स्वाध्याय मनन आदि यात्रा में भी नियमानुसार चलता रहा है । वैसे ही ऊन का कताई यज्ञ भी ईश्वर प्रीत्यर्थ पूजन दैनिक नियम का अंग ही बन गया ।

आज इस छप्पर में मुकाम रहने से कैलाश डायरी लेखन कताई यज्ञ जप यज्ञ तथा स्वाध्याय होता रहा । बादल के नृत्य उनका आवागमन विधिता भरे दृश्यों तथा परमात्मा के प्रकृति की लीला, अतृप्त नयनों से निहारते हुए आज का दिन गाला पड़ाव में बिताया । गाला को गलगढ़ भी कहते हैं । पुराने समय में यहाँ बर्फ हिममय गढ़ होगा । उस समय हिम यहाँ गलता रहता होगा । तब गलगढ़ नाम पड़ा ।

दिनांक २७ अगस्त १९३१, गुरुवार

परमात्मा का स्मरण कर यात्रा के लिये आगे प्रस्थान किया। पटवारी के प्रबन्ध से मजदूर मिल गये। एकाध मील तो मैदानी रास्ता मिला। बाद में तीन मील की सीधी चढ़ाई आयी। गाढ़ बीहड़ जंगल में से जाते हुए मायावती अद्वैत आश्रम (स्वामी विवेकानन्द द्वारा स्थापित) के जंगल का स्मरण हो आया। शेर, भालू का निवास स्थान ही सही। आगे जाते हुए "भूख कहे मेरा जोर कि बने मक्का-चोर" खेत में कोई थे ही नहीं। किससे पूछे अन्त में पेट को पूछ कर भुट्टा लिया। पर भूख का भूत तो और भयंकर बन गया।

कुदरत रूपी चतुर चित्रकार द्वारा चित्रित चौदांस प्रदेश की चतुर्दिक लीला की चतुराई से लीला-रंजन होता रहा। छोटे से सुन्दर श्वेत मकान, हरे पीले खेतों के पास से श्वेत सूत्र से रजत देह धारी झरने हरी साड़ी की किनारी की तरह रूपहली झालर सी झलकते चमकते थे। आकाश को स्पर्श करता निखरता विबिध रंग वाला सतरंगी मेघ धनुष प्रत्यन्चा चढ़ा कर मनोरंजन कर रहा था। वर्षा से रास्ता धुल कर खुद कर टूट गया था। पर इससे क्या ? ध्येय लक्ष्य बिन्दु तक तो पहुँचना है ना। रूंग-सिरखा-सिरदाम गाँव पार करते हुए रात को आठ बजे सोसा गांव में आराम के साथ बैठें। तुरन्त ही भुट्टा भुना हुआ तथा सुखाड़ी गुड़पापड़ी से वैस्वा नर रूपी जैठराग्नि को हवन सामग्री अर्पित करके शान्त किया। कलयुग में तो अन्न समा प्राण है। आज की यात्रा पूरे दस मील की हुई।

कल के टपकेश्वर महादेव का जो आश्रम था तो वहाँ पाठशाला के सात्विक अध्यापक के पवित्र वातावरण की छाया में आश्रय में शान्ति प्राप्त की।

जिला बोर्ड के अध्यापक श्री ईश्वरीदत्त पाण्डेय जी शिक्षण कार्य करते हैं। पवित्र आत्मा साधक और सांस्कारी सात्विक सज्जन हैं। भविष्य में यह सम्बन्ध उनकी मृत्यु तक शायद सन् ७५ तक सतत रहा। वे पूज्य श्री नारायण स्वामी के सत-संग में वर्षों तक रह कर श्री नारायण आश्रम की सुचारू रूप से व्यवस्था अन्तिम सहायता करते रहे। "श्री नारायण कृपा"

पवित्र आत्मा ईश्वर भक्त श्री ईश्वरीदत्त पाण्डेय जी से उस समय से आध्यात्मिक सम्बन्ध सन् १९३१ में हुआ। तब से उस इलाके में प्रतिवर्ष राष्ट्रीय व रचनात्मक कार्य

के लिये यात्रा होती रही। तब उनका सतसंग होना ही था। सन् ३७ में श्री नारायण स्वामी जी ने सोसाग्राम से तीन मील दूर आश्रम स्थापित किया तब इस साधक ने नौकरी से त्याग पत्र देकर नारायण को ही समर्पण कर दिया। अट्ठाईस वर्ष व्यतीत होने पर भी यह कर्तव्य निष्ठ होकर नारायण परायण बन कर नारायण के निर्माण के बाद भी नारायण के आदर्श और पवित्र वातावरण की रक्षा करने का पूरा-पूरा प्रयत्न करते रहे।

दिनांक २८ अगस्त १९३१, शुक्रवार

पर्वतीय एकान्त झरने पर जाकर स्नान आत्म पूजन करके पेट पूजन पश्चात् परमात्मा का स्मरण करके प्रस्थान किया। सोसाग्राम में भोटिया लोगों के चालीस पचास घर हैं। छोटी सी धर्मशाला तथा पाठशाला हैं। अब तो वहाँ औषधालय हैं तथा दूर के झरने से नल द्वारा पानी भी आ गया है।

"सोलह श्रृंगार सजो महिलायें ऊन कातती हुई का फोटो भी लिया" चौदांस सोसा की चोटी से अब नीचे उतरने लगे। छिलासों, छारदांग, रौतालपांगू गाँव होते हुए आगे बढ़े इन गाँवों में भविष्य में तो कितनी हो बार कर्तव्य अर्थे आना पड़ा। ड्यूटी एण्ड ब्यूटी की राष्ट्रीय कार्य के अर्थे। श्री नारायण स्वामी जी ने आश्रम स्थापित करने के बाद से प्रतिवर्ष कर्तव्य तथा तीर्थ यात्रा के लिये आते रहे। यह सब सुमधूर संस्मरण हृदय में संजोये हुए हैं।

ईश्वर की असीम कृपा से सदा रही।

पाताल पहुँचता हुआ उतार उतरते हुए पाँगू से ठाड़ीधार उतरते रास्ते में धोलीगंगा के किनारे आने के पहले तीन चार स्थान पर रास्ता टूट जाने के कारण भयानक खतरनाक बना था। पर वह सब राम की कृपा से पार करके आराम के साथ चलते रहे।

दारमा से दौड़ती आती धोलीगंगा झाग झाग झग होती जोर से उछलती उमड़ती कूदती-फाँदती उग्र भवानी रूप धारण करती हुई काली गंगा को मिलने को बहती रहती है। पुल पार करके पौन मील की चढ़ाई चढ़कर खेला स्कूल में डेरा डाला। आज आठ मील की यात्रा हुई।

खेला-एला-रेला यह सब नजदीक ही है यहाँ पर केला काफी होता है।—हालांकि ऊँची जात का नहीं परन्तु यात्रियों के पोषण दायक फल है ही।

खेला ग्राम में लगभग १५० घर की बस्ती है। ज्यादातर जमींदार किसान हैं। दारमा, चौदांस तथा व्यांस का दरवाजा होने से रास्ता अधिक व्यस्त रहता है। यहाँ पोस्ट आफिस भी है। रात १० बजे से भोजन करके निद्रा देवी के चरण शरण में ओम शान्ति।

मानसिक स्थिति शान्त और सात्विक रहती है तब अवर्णनीय आत्मानन्द की अनुभूति होती है। मन अन्तरमुख बनकर आत्म चिन्तिन में लीन होता है। जीवन का सर्वोत्तम सारतत्व यह है।

"परम शान्ति"

दिनांक २९ अगस्त १९३१, शनिवार

प्रातः झरना पर स्नान करके उगते हुए सूर्य सम्मुख पत्थर पर स्थित आसन होकर आकाश को स्पर्श करते हुए हिमाच्छादित श्वेत हिमगिरि श्रींग के सम्मुख प्रार्थना तथा आत्म पूजन किया। मानों सविकल्प समाधि।

इसके भोजन उपरान्त वही क्रम—रोज नया गाँव तथा नया स्थान नया समाज नया दृश्य तथा रोज सामान खोलकर घर बसाओ फिर उसे दूसरे दिन सपेरों और आगे प्रस्थान–प्रयाण यात्रा को कैसा चलता, फिरता, घूमता, घुमक्कड़, घूमन्त जीवन का यह भी एक आनन्द है।

काली गंगा के चरण में पहुँचते ही वहाँ धोली और काली गंगा का संगम, मानों कि गंगा जमुना का संगम, और यहाँ पर अन्य सखीसरिता कुछ-कुछ ऐतिहासिक, आध्यात्मिक गोष्ठी, कहने दौड़ती, मदमती, गजमती, चाल से उछलती हुई आ रही है। और यहाँ बना त्रिवेणी संगम।

भारत और नेपाल के ऊंचे पर्वतों की सकरी घाटी में गर्मी के मारे अकुलाहट होती रही। उस दुर्गम पहाड़ों के बीच काली गंगा कहीं भी रुके बिना बज्र जैसे पहाड़ों के बीच तोड़ती-फोड़ती, काटती हुई दौड़ी जा रही है। जल, तदनरम होते हुए भी कालीमीढ़ सख्त खड़कों को पत्थरों को भेदती हुई इंजीनियर की तरह अपना रास्ता बना लेती हैं। नम्रता की प्रबलता और अहिंसा की अद्भुत शाक्ति !

सूर्य नारायण की तेजस्वी धूप लगने से कहीं वृक्ष की छाया में सोते, आराम करते बैठते फिर उठते चले जा रहे हैं। ठंडी हवा की खुशनुमा लहरें जब आती हैं तब ताजगी मालूम देती हैं। कैलास की याद करते हुए संजय की तरह तच्च संस्मृत्य संस्मृत्य के अनुसार रोमांच खड़े हो जाते हैं। सात्त्विक मनोवृत्ति की यह अद्भुत स्थिति, कहाँ काली गंगा की लीला निहारते हुए भारत माता की पूजा करते हुए नेपाल के पहाड़ों से स्वतन्त्र राष्ट्र की प्रेरणा पाते हुए कतुये से ऊन कातते हुए जप यज्ञ चलते रहने पर अनाशक्ति योग गीता का मनन करते हुए मस्ती से भजन करते हुए छोटे मोटे जल प्रपातों के घोष व झरनों के नृत्य निहारते हुए आठ मील का रास्ता तय करके तपोवन धारचूला पहुँचे।

श्री रामकृष्ण मिशन आश्रम के स्वामी श्री अनुभवानन्द जी को प्रणाम किया। आज एक युग यानी बहुत दिनों बाद राष्ट्र की परिस्थिति के तथा पूज्य बापू जी के समाचार प्राप्त हुए। अभी तक तो हम दुनिया से अलग रहस्य भूमि लामाओं के देश में पाश्चात्य सभ्यता से दूर विचित्र भूमि में विचरण कर रहे थे। जहाँ डाक, तार, अखबार, रेडियो नहीं, रास्ता नहीं, सड़क नहीं, मकान होटल या गाँव तथा शहर नहीं। संसार के कोलाहल से दूर वह एक जीवन है जहाँ अन्तर्मुख होने के लिए कुदरतन प्रेरणा मिलती रहती है।

राष्ट्र ध्वज सत्याग्रह सन् ३० में गोरखा मिल्ट्री लाठी चार्ज से टूटे हुए पैर में पीड़ा अधिक होने लगी। चढ़ाई उतार के रास्ते में यह होना स्वाभाविक है। गरम पानी की थैली। (Hot Water Bag) से सेंक किया। वैसे तो रोज करना ही पड़ता है तथा होमियो पैथिक दवाई, आरनिका (Arnica) तथा शिलाजीत का सहारा सतत लिया ही जाता है। सत्याग्रह की यह अमर पर अदृश्य प्रसादी के लिए गौरव है। ब्रिटिश सरकार के जमाने में बहादुरी के लिए विक्टोरिया क्रास इनायत किया जाता है। वर्तमान में पद्मभूषण महावीर चक्र आदि से विभूषित किया जाता है। परन्तु इस प्रसादी के सामने गौड़ है। "Without name and fame"—Without press and plete-form. Foun dation stone. की तरह गुमनाम बनकर आत्म सन्तोष ही सर्वोच्च पुरस्कार है। यही ईश्वरीय प्रसादी है। विश्व में अनुभव सिद्ध, सत्य तथ्य, बुलन्द आवाज से पुकारा जा सकता है।

मूकं करोति वाचालं पंगु लंघयते गिरिम्।
यत् कृपा तम हम बन्दे परमानन्द माधवम्॥

सन् ३० मई में छाती तथा पैर की हड्डी टूटी और एक ही वर्ष में सन् ३१ जून में १८–२० हजार फीट की ऊँचाई के हिमालय पहाड़ों में कैलाश मानसरोवर यात्रा। "ईश्वर की असीम कृपा"।

दिनांक ३० अगस्त १९३१ रविवार

जल प्रपात के दोहरे धोध से बने झरने पर आनन्द के साथ कपड़े धोये। गोरख ने कपड़े की तरह मोह को धो डाला था। मोह सिलाकर पटक-पटक कर घेरी कुन्दी कीनी राम। सारी कैलाश यात्रा में यानी तीन माह में w की तीन हिमालय के तीन दुर्गम पहाड़ ऊँटाधुरा, जयन्ती कुँगरी, बिंगरी घाटी पार करते समय १८ हजार फीट पर स्नान करने में असमर्थ रहा। वह भी स्वास्थ्य की असुविधा के कारण। नहीं तो स्नान असम्भव तो नहीं था। अन्यत्र सर्वत्र बर्फानी शीतल जल से स्नान करके अपूर्व और अद्भुत् स्फूर्ति प्राप्त होती रही। इतना ही नहीं परन्तु बहादुरी से पर डरते-डरते हड्डी गला दे, ऐसे हिमालय के शीतल जल से लगभग प्रति सप्ताह कपड़े धोने के भी नियमित क्रम की रक्षा हो पायी। यह ईश्वर कृपा।

कैलास यात्रा कुशलता से आनन्द पूर्वक बम्बई के भाटिया सेठ श्री बल्लभ दास, तुलसी दास तथा पहाड़ के भोटिया सेठ श्री दुर्गासिंह रावत के साथ लेखक को करने का सद्भाग्य मिला। इस त्रिपुटी का वियोग अब नजदीक के भविष्य में होने से फोटो लेकर शाश्वत संयोग का प्रयोग कर लिया। कैलाश वास होने के अनेक प्रसंगों से तथा भयंकर दुर्गम रास्तों से अकस्मात की अनेक सम्भावनाओं से सकुशल पार करके भारत माता की प्रेम भरी गोद में आनन्द पूर्वक पहुँचने का समाचार पत्रों द्वारा मित्रों को लिख भेजा।

बद्रीनारायण की यात्रा करते समय भोटिया महिला रूमा देवी ने अपनी सखी लाटी देवी के साथ जन सेवा करने का संकल्प किया था। काली कमलीवाला बाबा की प्रेरणा से बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री, यमनोत्री आदि तीर्थ स्थानों में तीर्थ यात्राओं की सेवा का अनुभव अनुकरणीय प्रबन्ध किया गया। इस युग में इन कठिनतम यात्रा में जो सुविधा देने का कल्याणकारी पवित्र कार्य हुआ। वह तो अद्भुत ही था, उसी के अनुसार दारमा डोटी, चौदांस, व्यांस के रास्ते जाने वाले कैलाश मानसरोवर यात्रियों के लिए मध्य स्थान धारचूला में एक कुटीर खड़ी की थी। अल्मोड़ा से गर्ब्यांग तक के सीमान्त के सभी गाँव के रास्ते में कैलाश यात्रियों के लिए विश्राम स्थान की व्यवस्था तथा नये मजदूरों के प्रबन्ध करना आदि बहुत ही कल्याणकारी सेवा कार्य किया। इसके लिए रोमा देवी तथा लाटी देवी के यात्री गण कृतज्ञ हैं। वर्तमान में तो कैलाश मान-

सरोवर की यात्रा पहले के मुकाबले में काफी सुविधा जनक तथा आसान बन गई है। समय की बलिहारी।

कैलाश यात्रा से लौटते समय सन् २४ में श्री रामकृष्ण आश्रम के स्वामी श्री अनुभवानन्द जी, श्रीमती रोमा देवी के आग्रह से सेवा कार्य के लिए यहाँ रुक गये। अस्कोट के रजवार (तालुकेदार) ने तपोवन धारचूला के लिए थोड़ी भूमि दान में अर्पण की। तीन चार मकान भी तैयार किये गये। काली गंगा के किनारे शिव मंदिर भी स्थापित किया है। काली के किनारे गरम पानी का झरना है। जो गन्धक मिश्रित जल है। कैलाश के तिर्थ यात्रियों के अलावा अन्य पहाड़ी मुसाफिरों के लिए यह उपयोगी स्थान है। यहाँ एक औषधालय भी है।

योग निष्ठ तपस्वी स्वामी श्री रामजी का (एम० ए०) सन् १९२९ में कैलाश यात्रा जाते समय यहीं कैलाश वास हो गया था। निधन हुआ।

जैन भूमि श्री तिलक विजय सूरी जी तथा गुजराती सोना बहिन ने बीमारी में यहाँ आराम किया था।

सन् १९३१ में यानी हमारी यात्रा के समय में ही महाराजा मैसूर ने कैलाश यात्रा जाते समय कुछ दान प्रदान किया था। आशा रखें कि तपोवन का कार्य भविष्य में जनता के लिए कल्याणकारी सेवा करके तपोवन नाम सार्थक होगा।

श्री श्री आनन्दमयी माँ भी कैलास यात्रा गयीं। तब उनके साथ 'भाई जी' थे। जो स्वामी मौनानन्दजी कहलाये। उनका भी निर्वाण कैलाश यात्रा के रास्ते में हुआ था।

प्राचीन समय में ऋषि मुनि तपस्वी पवित्र आत्मा पर्वतों की घाटी में प्रचण्ड जलप्रपात धो-धो करते अनाहत ध्वनि के पास तथा पर्वतों के शिखर पर आश्रम बनाकर परमात्मा की पूजा में लीन बनकर विश्व कल्याण के पवित्र संकल्प करते हुए—

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा दुःख माप्नुयात्॥

विश्व कल्याण करते रहे। आज भी ऐसे तपोनिष्ट हैं व होंगे, उनके दर्शन की अभिलाषा हृदय में सँजोई हुई है।

अपूर्व अवसर एवो क्यारे आवशे, क्यारे थईसुं बाह्यान्तर निर्ग्रन्थजो।

ॐ शान्ति १०-१२-८३

लक्ष्मीनारायण मन्दिर कुटीर घाटकोपर बम्बई–८६

(३६) अस्कोट-साधक शिक्षक

दिनांक ३१ अगस्त, १९३१ सोमवार

प्रातः विधि स्नान आत्म पूजन के बाद परमात्मा का स्मरण करके प्रस्थान किया। दो मील चलने के बाद धारचूला गाँव आया। आजकल तो यहाँ स्थायी आबादी बहुत कम है। पर शीतकाल में ब्यांस, चौदांस, दारमा के भोटिये व्यापारी तिब्बत के व्यापार के बाद अपने परिवार के साथ आते हैं। तब यहाँ की रौनक बढ़ जाती है। यहाँ एक डाक बंगला तथा पाठशाला है। अमेरिकन मिशनरी ने अपना कायमी मुकाम बना लिया है। उनकी तरफ से भी औषधालय तथा पाठशाला का काम होता है।

यहाँ पर काली नदी में विशाल पट कर देने से उसकी गोद में पक्के मकान भी बने हैं। सामने नेपाल की हद में भी मकान बने हैं। शीतकाल में लकड़ी का एक अस्थायी पुल बनाया जाता है। वर्षा ऋतु में रस्सी का पुल बनाकर काम चलाते हैं। मजबूत रस्से के साथ गरेड़ी (घिरी) होती है। उसके नीचे छोटी लकड़ी बाँधकर टांक देते हैं। उसके ऊपर पैर रखकर लटकते हुए सामने पार खींचे जाते हैं। कच्चे आदमी का काम नहीं। मजबूत शरीर और हिम्मत बाज दिल वाला जा सकता है।

हरियाली से छाये हुए चारों तरफ धान के खेत लहराते हैं। आँख और दिल में शान्ति छा जाती है। पहाड़ों में मखमली हरियाली से प्रकृति सद्य स्नाता बनकर सतत हरिमय हरि का स्मरण कराती है। "हरी आई हरियाली" हरि ॐ।

आम, आँवला, हरड़ा, बहेड़ा, अमरूद, नारंगी, केले आदि वृक्षों की भरमार होने से सुन्दर बगीचा बन गया था। नवम्बर में जौलजीवी मेले में इस तरफ के केले, नारंगी, गन्ने, शहद आदि विपुल मात्रा में आते हैं।

काली गंगा घड़ी में दूर तो फिर नजदीक पर हमारे साथ बराबर रहती है। छः मील चल कर १२ बजे दोपहर 'कालिका' गाँव के पास, मन्दिर के पास, वृक्षों की छाया में डेरा डाला।

गाँव के लोग मिलने आये। रजवार साही जुल्म तथा अन्याय की बाते सुनाते रहे। हृदय करुणा तथा अनुकम्पा से भर गया। अस्कोट का राजा रजवार शुद्ध क्षेत्रीय वंश के गिने जाते हैं। उस वंश के वंशज इस प्रदेश का राजा है। पर ईश्वरीय अंश-

देवांशी-गो ब्राह्मण प्रतिपालक, जनसेवक प्रजा के रक्षक राजा वर्तमान युग में नहीं हैं। अब तो प्रजा पीड़क व भक्षक हैं। जनता पर जुल्म अन्याय होने वाली करुण कहानी सुनी। पर "नोपजे नरथी तो कोई न रहे दुःखी" हृदय व्यथित हुआ।

परन्तु इस अन्याय के सामने आवाज उठाने वाले बारडोली के किसानों की बहादुरी की कहानी सुनाई पर यहाँ सरदार वीरबल्लभ भाई पटेल जैसा सच्ची लगन वाले देश भक्त की आवश्यकता है। मरता क्या नहीं करता, बगावत हिंसा खून खराबी भी हो सकती हैं। इस समय तो लोगों को शान्ति तथा अहिंसा की बात कही। पर स्वयं को अशान्ति हुई।

पवित्र संकल्प कभी अपूर्ण नहीं होता सच्ची प्रेरणा करुणा है। पवित्र कार्य करती है। "तुलसी हाय गरीब की कभी न खाली जाय, मुए ढोर के चाम से लोहा भष्म हो जाय।"

अस्कोट की रजवार साही के अन्याय के लिये सन् ३७, ३८ में गाँव-गाँव तूफानी दौरा करके प्रचंड जन-शक्ति जाग्रत करने का सद्भाग्य लेखक को प्राप्त हुआ। अभूतपूर्व जनशक्ति के परिणाम स्वरूप जननायक जवाहर लाल जी से मिले। उन्होंने (नेशनल हेराल्ड में) 'अस्कोट' नाम का आग उगलता लेख लिख कर शासन का तख्त हिला दिया। और अन्त में बन्दोबस्त बना। इससे बेहूदी बेगार बन्द हुई।

जनता पर से अन्याय का बोझ उतरा। इस जन-शक्ति द्वारा अहिसात्मक सत्याग्रह सफल हुआ। एक ज्वलन्त इतिहास का वर्णन लम्बी कहानी है।

रजवार के इलाकों के उन बीहड़ जंगलों के बीच के गाँव के झोपड़ों में जहाँ रास्ता नहीं, खतरनाक पगडण्डी में बन्दर की तरह एक ही लट्ठे के पुल पर पार करना तथा उन बनमानुषों के बीच कुछ स्वयं सेवकों के साथ १५ दिन का दौरा किया। वह जीवनमय अविस्मरणीय इतिहास है।

तपोवन धारचूला से कैलाश। (तिब्बती) यात्री की पोशाक बदल कर अब भारतीय पर्वतीय पर्यटन की पोशाक पहन ली। पायजामा, कुर्ता, टोपी, मोजा, बँडेजीत कन्धे पर बगली थैला, हाथ में लाठी बगैरा है। तिब्बती बर्फानी हिमालय पहाड़ों में तो ऊनी बनियान, गरम कोट, गरम शाल आदि उपयोग करना पड़ता था।

कालिका ग्राम के पास वृक्षों की छाया में मन्दिर के पास भोजन करके थोड़ा आराम किया। नैपाली मजदूरों का फोटो लिया और आगे प्रयाण किया।

आज १२ मील की यात्रा करने के बाद बलुवाकोट, बोन पाठशाला में डेरा डाला। यहाँ रोटी, सब्जी के भोजन के बाद प्रार्थना पश्चात् निद्रासनस्थ हुए। पर दो

तीन बार नींद खुल गयी। क्योंकि इन्द्रदेव ने जोर से वर्षा की और शिवजी की तरह सिर पर जलाधारी टपक रही थी।

दिनांक १ सितम्बर १९३१, मंगलवार

अल्मीड़ा अब ८० मील दूर है। लगातार दो माह से अधिक यानी ७० दिन का सतत सफर करते रहने से अब निश्चित स्थान पर पहुँचने की अभिलाषा होना स्वाभाविक है। इसलिये अब मजदूर के बदले बोझ के लिये तीन खच्चर तथा सेठ जी की सवारी के लिए एक खच्चर की व्यवस्था की गई। प्रति खच्चर अल्मोड़ा तक का १० रु० ठहराया गया। अब तो फ्रंटिअर मेल की तरह शीघ्रता के साथ सफर होने लगा।

परमात्मा का स्मरण करते प्रातः काल ही यात्रा के लिये प्रस्थान किया।

बादल तथा कोहरे के आवरण से पृथ्वी की प्रकृति की विविधता छिप सी गयी थी। "आवरण आतें धर्म विश्व में रमाड़वा।"

"आत्म स्वरूप मधुर प्रणव ओम् तत्सत ओम् सदा।।"

बादल भी घड़ी में सिह, बाघ, मनुष्य की सी आकृति धारण करके अनेक विविध दृश्यों को आलेखते हुए पर्वत के शिखर पर तथा नीचे तले में लोटते पड़ते दिखायी दे रहे थे।

जौंलजीवी तक तो तदन मैदान रास्ता मिला। वहाँ पर काली तथा गोरी गंगा के संगम स्थान पर स्थित हुआ। और गंगा के प्रवाह के साथ विचार-प्रवाह भी चला। तीन वर्ष पहले सर्व प्रथम पहाड़ में पैदल पर्यटन किया तब इसी स्थान पर स्नान, आत्म-पूजन तथा राष्ट्र सेवा का श्री गणेश किया था। जनसम्पर्क भी बढ़ता गया। जौलजीवी में आकर जीवन में ज्वलन्त ज्योति जलाकर आत्मानन्द का अनुभव किया था। इसके बाद तो वर्षों तक प्रतिवर्ष श्री गाँधी आश्रम के लिये ऊन खरीदने तथा राष्ट्रीय प्रचारार्थ आता रहा। "एक पन्थ दो काज।"

काली गंगा का काला रंग (काली मिट्टी के कारण) तथा गोरी गंगा का गोरे रंग से गंगा जमुना के संगम का सा तीर्थ स्थान बना है। संगम का दृश्य सचमुच

सुहावना तथा आकर्षक है। सात्त्विक मनोवृत्ति वाले साधक को ऐसे प्राकृतिक सौन्दर्य 'सच्चिदानन्द' की झाँकी करा दें यह स्वाभाविक है। तीन घंटे इस जागृत सविकल्प समाधि में तल्लीन होकर परमात्मा का पूजन करता रहा। बाद में ईश्वर स्मरण करते हुए आगे की यात्रा के लिये प्रस्थान किया।

गंगा माता का वियोग होने पर कुछ अकुलाहट विरह व्यथा तो होती है न? उसमें फिर अस्कोट की कठिन चढ़ाई, संगम से 'गर्जिया' पुल तक का सवा मील का सीधा रास्ता था, और यहाँ से आसमान की ओर चढ़ने की सीधी चढ़ाई—किसान को कांध जारे ऐसी कड़ी धूप, इन सबसे अकुलाहट होती रही। भाद्र पद माह की प्रचंड धूप से डर कर किसान सन्यासी बनने की कहानी कही जाती है। राभ जाने।

"सोऽहम शिवोऽहम्" का अखन्ड जप श्वासोंच्छवास के साथ जपते हुए एक-एक कदम उठाते हुए पहाड़ को देखते हुए अस्कोट की धर्मशाला में पहुँचे। संगम स्थान पर तीन घंटे की तपस्या करते रहे। उस समय सेठ जी अन्य यात्री साथी के सहित आगे बढ़ गये थे और धर्मशाला में "दाल भात का भोजन" तैयार कर रखा था। अतः पेट पूजन किया।

अस्कोट लगभग ५ हजार फीट की ऊँचाई पर सुन्दर स्थान है। हिमालय का दृश्य सामने है तथा नीचे कालीगंगा लकीर सी बहती है। सामने ही नेपाल की पहाड़ियों का मनोहर दृश्य है। वहाँ का राजा रजवार है। उसका महल ऊँची टेकरी पर है। यात्रियों के लिये अच्छी धर्मशाला है। पुरानी परिपाटी के अनुसार यात्रियों को एक बार भोजन सामग्री दाल, चावल, आटा आदि देने का रिवाज अब भी जारी रखा है। डाक-बंगला तथा पोस्ट आफिस और पाठशाला है। इसके बाद तो भविष्य में इसी अस्कोट में राष्ट्रीय प्रचार स्वतन्त्रता का सन्देश जनसेवा कार्यों के लिये आने का सद्भाग्य मिला। इसी इलाके में निष्ठावान् राष्ट्र सेवकों का भी सक्रिय सहयोग सतत मिलता रहा। भारत माता की स्वतन्त्रा का सन्देश तो आसेतु हिमालय गूँजता रहा। साधक शिक्षक श्री शेरसिंह जी के मिलने का आकर्षण हृदय में होने से अस्कोट से साथियों से विदा लेकर अकेले ही आगे प्रस्थान किया।

अकेले पहाड़ी सड़कों पर थोड़ी दूर जाते ही मूसलाधार वर्षा बरसने लगी। ऐसी ही बरसात में चाल भी खूब बढ़ी। पहाड़ी प्रचंड वर्षा में तो रेन कोट भी रोने लगा। और अन्दर के कपड़े भी भींग गये। बलुवाकोट से अस्कोट ११ मील और वहाँ से डीडी-हाट सात मील कुल अट्ठारह मील की यात्रा आज करके श्री शेरसिंह के सत्संग में पहुँचे।

अल्मोड़े जिले के आदर्श सेवक—कर्मनिष्ठ अध्यापकों में से वह भी एक भाई हैं।

उनका संयम नियम व्रत तप तथा स्वाध्याय और पुरुषार्थ प्रसंशनीय तथा अनुकरणीय है। ऐसे जिज्ञासी मुमुक्षु साधक का सत्संग होना ईश्वर की कृपा ही है।

साधक की साधना के विचार आते रहे। रे जीव रे मन, रे हंस, तू चिन्ता क्यों करता है। योगक्षेम वहीं चलता है जो ईश्वर का अनन्य भक्त है।

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

सांसारिक तथा पारमार्थिक आवश्यकता भी अनन्य चिन्तन शील को परमात्मा पूर्ण करते हैं। और वह भी अभय वचन ईश्वर का है।

"नहि कल्याण कृत् कश्चित् दुर्गतिं तात गच्छति।"

ॐ शान्ति १३-१२-८३

लक्ष्मी नारायण मन्दिर कुटीर, घाटकोपर, बम्बई—८६

(३७) सरजू तट पर जनमाष्टमी
दिनांक २ सितम्बर १९३१, बुधवार

"संसारमां सरसों रहेने मन भारी पास"

जल कमल वत् निरलेप निर्मोही अनासक्त ऐसे मुमुक्ष के सत्संग से सात्विक आनन्द का अनुभव होता है। शिक्षक शेरसिंह डीडीहाट पाठशाला के प्रधान अध्यापक हैं। उनकी शाला में ऊन कताई शिक्षण का निरीक्षण करना था। क्योंकि अल्मोड़ा जिले में तिब्बत से प्रवेश करते हुए गर्वयांग से Director of Khadi Department Distt. Board, Almora की हैसियत से आन ड्यूटी हो गये थे। सिर्फ सत्ताइस दिन तिब्बत प्रदेश में रहें वह समय छुट्टी का माना गया था।

अल्मोड़ा जिले की ४०० पाठशालाओं में राष्ट्र भावना के प्रतीक स्वरूप राष्ट्र-पिता बापू के रचनात्मक कार्य, खादी द्वारा आजादी के मंत्र के प्रचार का अपूर्व और अद्भुत प्रयोग करने का सद्भाग्य प्राप्त हुआ। जहाँ कहीं भी जावें राष्ट्रीय गीत द्वारा स्वागत होता ही था। यहाँ भी राष्ट्रीय गान से स्वागत हुआ। पाठशाला के विद्यार्थियों के साथ सम्मिलित हुए। आदर्श अध्यापक की पाठशाला में आश्रम के से वातावरण की

झाँकी होना स्वाभाविक है। फिर वह भी हिमालय पर्वत के अन्तर भाग में। सरस्वती मन्दिर की उपासना, विद्या का आदर्श, सदाचार, सेवा, स्वदेशी वगैरह को लेकर पंचशील पर प्रवचन दिया। विद्यार्थियों से कुछ प्रश्न राष्ट्रीयता के भी पूछे। कताई दंगल भी कराया। इस तरह पाठशाला के निरीक्षण पूर्ण करके सभी से प्रेम पूर्वक विदा लेकर परमात्मा का स्मरण करके प्रस्थान किया।

हरे भरे हरियाली छाये हुए पहाड़ों को देखते हुए हरि स्मरण करते हुए एकाकी अडुले सिंह की तरह चलते हुए हिमालय की भव्यता दिव्यता के विचार करते हुए स्वयं को भूलकर सीधे मैदानी रास्ता पार करने लगा। दूर-दूर रुपहले रेले की तरह चाँदी सी चमकती राम गंगा का दर्शन होते ही उतार शुरू हो गया। एक हथुआ देवल (देवालय) का दर्शन रास्ते से अलग थोड़ी दूर जाकर किया। जनश्रुति है कि—"एक ही पत्थर में से एक ही खड़क में (Rock) एक ही रात में एक ही हाथ से अष्ट स्तम्भ सहित मन्दिर शिवलिंग जलधारी तथा परिक्रमा का स्थान बना है। इसके अलावा नीचे पानी का कुण्ड भी उसी खड़क में से बनाया है। वह सचमुच हस्त कला का अनुपम कौशल है। पर शास्त्र की दृष्टि से मन्दिर का मुख सही दिशा में न होने के कारण मन्दिर-शिवलिंग अपूज्य रहता है। परन्तु कला तो पूजनीय है ही।

गीता-अवधूत गीता आदि नित्य नियम के स्वाध्याय के साधन सहित बगल थैला श्री दुर्गा सिंह रावत के साथ आगे चला गया था। उसकी खोज करते हुए शाम को थल के फारेस्ट बंगले में श्री सेठ वल्लभ दास जी के पास से प्राप्त होने पर चिन्ता मिटी। और नित्य नियम अटल रहने से चित्त प्रसन्न हुआ। क्योंकि सन् १९१७ से ही नित्य नियमानुसार गीता पाठ स्वाध्याय आदि करने का व्रत सा ही बन गया है। हर परिस्थिति में जेल में या यात्रा में भी वह नियम पालन का सतत तथा प्रामाणिकता से प्रयत्न करने का रहा हैं। ईश्वर कृपा से यह नियम सदा रहा है।

थल के फारेस्ट बंगले में आत्म पूजन के बाद भोजन किया। फिर तो ऐसे सोये कि घोड़े बेच दिये हों। भयानक गर्जन तर्जन, बिजली के कड़ाके-भड़ाके सहित मेघ वर्षा शुरू हुई। टपकिया महादेव की तरह टप-टप-टप पानी टपकता रहा। पर ऊपर रेन कोट डालकर फिर समाधिस्थ हुए। ॐ शान्ति।

डोडीहाट से थल ११ मील दूर है। डीडीहाट लगभग ६०००, छ हजार फीट की ऊँचाई पर है। वहाँ से ३ हजार फीट नीचे उतरकर थल है। अतः गर्मी तो खूब लगी। और हाल ही में अभी-अभी तिब्बत से १७-१८ हजार फीट की ऊँचाई पर हिमालय हो आये थे न। अल्मोड़ा वहाँ से ५२ मील है।

दिनांक ३ सितम्बर १९३१, गुरुवार

प्रातः काल उषा समय होते ही हिमांचल पंचाचूली पर्वत के पाँच शिखर (पाँच पाण्डव रूप) शिखर के सूर्य के सुनहली किरण से पाँच भगवा वेषधारी ऋषि के से अपूर्व और दिव्य दर्शन हुए। स्नान, आत्म पूजन प्रार्थना के बाद प्रस्थान किया। पहाड़ में साधारणतः औसत चाल प्रति घंटे तीन मील की रहती है। इसी अभ्यासानुसार भविष्य में राष्ट्रीय कर्तव्य अर्थे मीटिंग सभा आश्रम केन्द्र तथा पाठशाला में पहुँचने के समय का कार्यक्रम बनाया जाता रहा। कभी तो तीन मील से अधिक भी स्पीड रहती थी। पर अपवाद के बतौर बेरीनाग १० मील की यात्रा के बाद पहुँचे। वहाँ एक दुकान पर अखबार देखे। दुनिया के कुछ समाचार मिले। राष्ट्रपिता बापू राउण्ड टैबिल कानफरेंस के लिए लन्दन गये हैं। अतः कुछ समय के लिए राष्ट्रीय परिस्थिति के धधकते ज्वालामुखी कुछ शान्त प्रतीत होने लगे। अन्त में तो अशान्ति अनिवार्य है। जब तक अशान्ति न मिले त्याग और बलिदान दिये बिना स्वतन्त्रता स्वराज्य कैसे मिले ?

बेरीनाग से आगे ४ मील गोदीगाड़ नदी के किनारे डेरा डाला। तीन वर्ष पहले इसी रास्ते कोटेश्वर महादेव के मेले में गया था। वहाँ पहाड़ के अन्दर लम्बी गुफा कोटर में शिवजी स्थित हैं। "शिवहर शंकर गौरीशं शिव हर रे, शिव हर रो"।

बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री, यमनोत्री आदि सारे उत्तराखण्ड तथा कुमाऊँ के पहाड़ों के रास्ते में स्थान-स्थान पर चट्टी यानी दुकानें होती हैं। वहाँ भोजन सामग्री तथा रसोई के लिए बर्तन और जलावन (लकड़ी) मिलती है। अलावा रात्रि विश्राम के लिए स्थान भी मिल जाते हैं। यह व्यवस्था यात्रियों के लिए वरदान रूप है। क्योंकि पहाड़ों की कठिन यात्रा में दो, चार, पाँच, दस मील के अन्तर पर यह स्थान मिल जाने से श्रमित पथिकों को आराम मिल जाता है।

दिनांक ४ सितम्बर, १९३१ शुक्रवार

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी तथा रामनवमी आदि धार्मिक त्योहार के कारण पूर्ण पुरुषोत्तम तथा मर्यादा पुरुषोत्तम और ईश्वर के अनेक स्वरूप में भारतीय हिन्दू पूजन

करके आत्मोन्नति का प्रयत्न करते हैं। यह प्रशंसनीय है। अनेक सन्त महात्मा तपस्वियों का पूजन होता है। पर सच्ची पूजा उनके आदर्शानुसार आचरण में है। सन्त महात्मा पवित्र आत्मा जो आदर्श कह गये हैं उन्हें आचरण में लावें और आत्म बल तथा आत्म दर्शन का उनकी भाँति अनुभव प्राप्त करने का प्रयत्न ही सच्ची साधना तथा पूजा है। परमात्मा ऐसी सच्ची साधना करने का सबको सामर्थ्य और आत्मबल अर्पे, यही प्रार्थना है। श्रीकृष्ण जन्माष्टमी निमित्त आज ल्हासा तिब्बत की सुगन्धित अगरबत्ती तथा दीपक जलाकर शान्त चित्त से गीता के अट्ठारह अध्याय का स्वाध्याय किया। कतवे से ऊन कातते हुए गायत्री मन्त्र का जप करके राष्ट्र सेवा का यज्ञ करके आगे की यात्रा के लिए प्रयाण किया।

नदी के वार-पार के हरे-भरे हरियाली छायी हुई खेत तथा ऊँचे-नीचे इधर-उधर खड़िया मिट्टी या चूने से पोते हुए श्वेत मकान तथा हरे-भरे जंगल से भरी पर्वत माला के बीच में प्रवाहित होते झरनों का मधुर गान अनाहत ध्वनि सुनते हुए लक्ष्य की तरफ कदम उठाते गये।

पहाड़ की कठिन चढ़ाई पूर्ण होते ही एक दुकान पर आलू की सब्जी का फलाहार करके शक्ति प्राप्त करके आगे बढ़े। अब उतार मिश्रित मैदानी रास्ता आया। अन्त में सरयू गंगामाता के दर्शन होते ही थकावट उतरने लगी। अब इन्द्रदेव के आशीर्वाद से तो ताजा बन गये। सरयू गंगा में स्नान करके फिर अनाशक्ति योग गीता का पारायण करके श्रीकृष्ण भगवान पूजन व स्मरण बार-बार करने लगे।

श्रीकृष्ण की गीता समझने के लिए तो अर्जुन बनना चाहिये। यानी इनकी सी जिज्ञासुर्वृत्ति नम्रता, शरणागति, ऋजुता तथा सरलता की प्रथम आवश्यकता है। फिर तो गीता समझानें के लिए कृष्ण जन्म यानी अवतार अपनें ही हृदय में होना निश्चित ही है। First deserve and their desire. पात्र होते ही स्वभावतः ज्ञान की सुविधा हो जाती है। श्रीकृष्ण भगवान ने गीता में गाया है—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत, अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्, धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे॥

साधक के मन में जब-जब धर्म की ग्लानि आसुरी सम्पत्त का आविर्भाव होता जाता है। तब तब साधक रक्षार्थ सद, असद विवेक आत्मबल रूपी श्रीकृष्ण रूपी भगवान का जन्म होता है। अभय वचन से साधक निर्बल होने पर भी बलराम का स्मरण करता है। "हरे को हरि नाम, निर्बल को बल राम" श्रीकृष्ण भगवान अन्त में फिर से अभय दान देकर अभ्यासी साधक को अर्पण करते हैं।

सर्वं धर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यः मोक्षयिष्यामि मा शुचः ।।

ॐ शान्ति १६-१२-८३

लक्ष्मीनाराण मन्दिर कुटीर, घाटकोपर, बम्बई–८६

(३८) उत्तर वृन्दावन
दिनांक ५ सितम्बर १९३१ शनिवार

प्रातः काल ब्राह्म मुहूर्त में सरयू गंगा में स्नान किया। प्रार्थना आत्म पूजन गीता पाठ स्वाध्याय के गायत्री मन्त्र के साथ कताई यज्ञ किया। काली गंगा का काला रंग गोरी गंगा का गोरा रंग, सरयू गंगा का लाल रंग, यह सब वर्षा ऋतु में मिट्टी के कारण इस तरह विभिन्न रूप पर्वतीय गंगा के चलते रहते हैं। अनेकता में एक–एकता में अनेक। 'एकोऽहम् बहु स्यामं सर्वत्र परमात्मा'।

इन्द्रदेव ने प्रातः से ही वर्षा शुरू कर दी। घंटे पर घंटे व्यतीत होते रहे पर वर्षा रुकती ही नहीं थी। मानव जाने मैं करूँ करतल वाले कोय, आदर्या अधूरा रहे न हरि करे सो होय। आसमान में नजर डालकर खच्चर वाले निराशा प्रकट कर रहे थे। पर साहस के सामने संकट क्या कर सकता है? कमर कसकर बरसती वर्षा में परमात्मा का स्मरण कर १२ बजे आगे की यात्रा के लिए प्रस्थान किया। ४–५ मील चले, पर वर्षा कहे मेरा जोर। लाठी हाथ में लेकर पर्वतों को दबाते हुए कदम-कदम पर चढ़ते ही गये तब तो इन्द्रदेव को भी ईर्ष्या हुई होगी। बरसात में पर्वत, पृथ्वी, बृक्ष, जंगल और आसमान में ऐसा तो मंगलमय मनोहर स्वरूप बनाया कि हृदय आनन्द से नाचने लगा।

वर्षा का जोर बढ़ता ही गया। पर अब तो लूट जाने के बाद लालच काहे की और पानी से तन तरबोर होकर भीग जाने पर भय काहे का? अन्त में ११ मील चलकर धौलछीना डाक बंगले में डेरा डाला। कैलाश यात्रा के श्री गणेश में प्रथम पड़ाव यहाँ था और अन्तिम पड़ाव भी एक तरह से यहीं हुआ। ईश्वर के प्रति अतिकृतज्ञता प्रकट की कि कैलाश मानसरोवर की यात्रा सम्पूर्ण हुई। अगर फिर दौस बरूरने जमीनस्त तें हमीनस्तो हमीनस्तो हमीनस्त। अगर दुनिया में कहीं स्वर्ग है तो यहीं है। स्वर्ग यानी आतमानन्द का अनुभव।

दिनांक ६ सितम्बर, १९३१ रविवार

मेघ महाराजा ने महान मोर्चा जमा लिया। वर्षा चाहे पृथ्वी और आकाश को एक कर दे। पर अब तो कैलाश यात्री शंकर के शरणागत को रोकने की शक्ति नहीं है। साथी यात्री श्री सेठ वल्लभदास भाई तो सीधे अल्मोड़ा गये। पर यशोदा माता के दर्शन बिना यात्रा की पूर्णाहुति कैसे हो ? अतः झोला-झंडा-डंडा लेकर परमात्मा का स्मरण करके उत्तर वृन्दावन-मिरतोला के लिए प्रस्थान किया। यात्रा प्रयांण के पहले स्नान, प्रार्थना, आत्म पूजन के बाद पेट पूजन से निवृत्त हो गये थे। पहाड़ी पगडंडी तथा रास्तों में खूब घूमते रहने पर भी रास्ते की जानकारी कम रही। एकदम अजनबी पगडंडी पकड़कर बहुत ही भटकना पड़ा। वैंदरभी बन मा बल चले। आड़े टेढ़े-मेढ़े रास्ते नदी, नाले, झरने पार करते हुए खेतों में कूदते फाँदते सीधे ऊँचे और ऊँचे पहाड़ों में चढ़ते हुए अन्त में सड़क खोज पाया। झरमर-झरमर वर्षा नृत्य करते बादल सद्यःस्नाता पृथ्वी, हरे-भरे हरियाली, छाये हुए जंगल आदि से प्रकृति का निखरता हुआ, सुन्दर स्वरूप निहारते हुए, थकावट या घबराहट का तो नामोनिशान ही नहीं रहा। मन में सात्विक आनन्द भरा हो वहाँ सर्वत्र आनन्द।

उत्तर वृन्दावन दिन में ३ बजे पहुँचा। अगली रात जन्माष्टमी के व्रत तथा जागरण के कारण वृन्दावन वासी सब कोई सोये हुए थे। 'या निशा सर्वाभूतानाम्' के अनुसार शान्त थे। कताई यज्ञ के साथ जप करते हुए मन्दिर के द्वार पर धरना सा दिया।

"द्वार उमोहू भोलो, जगन्नाथ द्वार खोलो"
मुझ साथ कई बोलो चकडोलन चढ़ायो,
बैठे हैं तेरे दर पे तो कुछ कर उठेंगे, वा वस्ल (दर्शन) भी हो जायेगा
या मर के उठेंगे।

इसी द्वार के अन्दर श्री कृष्ण भगवान की मूर्ति है। मंगल मन्दिर खोलों, दयामय मंगल मन्दिर खोलों। जीवन वन अति वेगे वटाथुं द्वारा शिशु भोलो दीनौ नाम मधुर तम रट्यों निरन्तर शिशुसह प्रेमो बोलो, दिव्य तृषातुर आव्यो, बालक, प्रेम अमिरस ढोलों।

मंगल मन्दिर अन्त में खुला। यशोदा माँ तथा श्रीकृष्ण वैरागी गोपालदा आदि से प्रणाम करके आशीर्वाद पाया। जितनी देर तक बाहर राह देखते हुए तप किया

था। उसके पुरस्कार स्वरूप भजन और भोजन का आनन्द प्राप्त हुआ। राह देखें सो राहत पावें।

यशोदा माँ का प्रेम तो मातृ वात्सल्यता से सराबोर है ही और गोपालदा के पवित्र प्रेम की वर्षा इतनी होती है कि हृदय गद्गद् हो जाता है। इस तपस्वी टोली के भजन सुनने के बाद समाधिस्थ—निद्रा देवी की शरण में।

ॐ शान्ति

दिनांक ७ सितम्बर, १९३१ सोमवार

श्रीकृष्ण प्रेम के साथ निर्माणाधीन मन्दिर में गये। अभी एकाध महीने का काम बाकी है। मन्दिर की प्रतिष्ठा के समय पवनाहारी बाबा के भतीजे आने वाले है। श्री पवनाहारी बाबा प्रख्यात सन्त तपस्वी पवित्र आत्मा साधु थे। इनकी तपश्चर्या से स्वामी श्री विवेकानन्द जी प्रभावित थे। राधा कृष्ण मन्दिर की रचना जागेश्वर मन्दिर जैसी प्राचीन मिश्रित अर्वाचीन कलामय है। पुस्तकालय, औषधालय, भण्डार घर, रसोईघर तथा यशोदा माँ के लिए रहने का कमरा आदि की सुविधा है। यशोदा माँ ने स्नान करने की आज्ञा दी। इसके बाद आत्म-पूजन, स्वाध्याय के बाद प्रार्थना ठाकौर जी की आरती के बाद सबके साथ भोजन किया। बंगाली मिठाई सन्देश भी चखने को मिला। शाम की आरती के बाद श्रीकृष्ण प्रेम ने प्रेम सहित भक्ति रस के भजन, मृदंग बजाते हुए गाये। हारमोनियम भी अच्छा बजा लेते हैं। बंगाली और हिन्दी भजन के अच्छे ज्ञाता है। भावविभोर होकर भक्ति भाव सहित भजन प्रेम से सराबोर होकर गाते हैं। तब सच्चे वैष्णव का दर्शन हुआ। ऐसा सात्विक आनन्द आता है।

राधाकृष्ण मन्दिर की प्रतिष्ठा के समय यशोदा माँ तथा गोपाल दा के प्रेम भरे निमन्त्रण से उपस्थित होने का सदभाग्य प्राप्त हुआ था। गोपाल दा के साथ मन्दिर की शिखर पर १०८ बार सूत्र लगाने की विधि बड़े साहस निष्ठा और प्रेम सहित की थी। यह सब संस्मरण हृदय में संजोये हुए हैं। अब तो यशोदा माँ गोपाल दा हरीदास स्वामी (डा० अलेक्जेण्डर) यशोदा माँ की पुत्री मोती रानी भी गोपाल दा से दोक्षा लेकर शिष्या बनकर अर्पिता देवी नाम धारण किये हुए। इन सब विभूतियों का निर्वाण हो गया है। परन्तु उनके प्रेम प्रसंग तो जीवन में अविस्मरणीय है। इन

पवित्र आत्मायें जिनके सतसंग में वर्षों तक रहें उनकी उपमा भरे प्रेम की वर्षा के अनेक संस्मरणों का वर्णन करने की अभिलाषा को रोक नहीं सका। अतः इनके संस्मरण अन्त में दिये जायेंगे।

ॐ शान्ति

सन् १९२८ में हिमालय अल्मोड़ा आने के बाद विविध रूप से मातृ वात्सल्य का अनुभव होता रहा। लगभग दो वर्ष की आयु में जनेता माता का वियोग हो जाने पर मातृहीन बन गया था। हृदय में सरसता का अभाव सा होकर नीरसता महसूस होती थी। परन्तु अल्मोड़े आने पर यशोदा माँ आनन्दमयी माँ (मदर कुक) श्रीमती बालाश्री देवी श्रीमती गंगा माँ के प्रेम से मातृ प्रेम से सराबोर होने पर जीवन में सरसता आने लगी। जन्मभूमि भारत माता के प्रेम सहित श्रद्धा स्थापित हो रही थी। धरती माता गौ माता आदि के रूप में मातृ दर्शन की भावना जागृत होती रही। "जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरियसी प्रणाम हो वन्दन हो मातृ वत्सला को।"

श्री रामकृष्ण परमहंस ने माँ के रूप में काली माँ का पूजन करके भक्ति का सरल पथ प्रदर्शन किया। अनेक भक्त ईश्वर को माँ के रूप में भक्ति भाव से निर्दोष बालक बनकर समझ आत्म दर्शन करके आत्म शान्ति प्राप्त कर चुके हैं।

माता विहोणो सुनो संसार जेम साकर विना सुनो के सार।
जननी नी जोड सखी नहीं जड़े रे लोटो॥

इस तरह जीवन में जब-जब जिस चीज यानी भौतिकता का महत्व नहीं परन्तु आध्यात्मिकता की उत्कट अभिलाषा होते ही प्राप्त होते ही हैं। यह अनुभव सिद्ध है। हृदय की उत्कट अभिलाषा तड़पन पवित्र भावना होनी चाहिए। अन्तर वाह्य सभी तरह की आवश्यकता वह परमात्मा पूर्ण करते हैं।

अनन्याश्चि तपन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्यामि मुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥

जगत में निस्वार्थ निष्काम प्रेम अनासक्त होकर सात्विक आनन्द प्राप्त होता है। वह अपूर्व अद्भुत तथा दिव्य है।

ॐ शान्ति १-११-८३
लक्ष्मी नारायण मन्दिर कुटीर, घाटकोपर, बम्बई—८६

(ब) उत्तर बृन्दावन की विभूतियाँ :
"श्री श्री कृष्ण प्रेम वैरागी तथा अन्य पवित्र आत्मा"

योगी श्री कृष्ण प्रेम

हिमालय अलमोड़ा में राष्ट्रपिता बापू के आदेश और आशीर्वाद सहित सन् १९२८ के अगस्त माह में पवित्र आदर्श को हृदय में संजोकर आये। अपरिचित प्रदेश, अपरिचित भाषा, भेष, रहन-सहन वाले भिन्न समाज में आये होने पर भी—आत्मीयता जैसा आनन्द आया। भारतवर्ष तो एक ही है और "बसुधैव कुटुम्बकम्" की तरह सारा विश्व एक ही है "एकोअस्मि बहुस्याम" "आत्मवत् सर्व भूतेपु" की आत्मा की गहराई में जीवन में सतत् होती रही है।

हिमालय में साधुसन्त पवित्र आत्माओं की आन्तरिक अभिलाषा सदा से रही है। हिमालय में अब पचपन वर्ष रहते दम्यनि अनेक अदभुत आध्यात्म-सम्पन्न सन्त पवित्र आत्माओं के दर्शन हुआ करते हैं। आज ऐसे अपूर्व अनोखे तथा अजीव अंग्रेज गौरांग साधु के संस्मरण (परिचय) देने में आनन्द होता है।

हिमालय में अल्मोड़ा नगर के उत्तर की तरफ दो मील दूर नारायण तिवारी देवालय के पास शान्ति कुटीर में स्थित हुआ। नगर के आसपास सृष्टि, सौन्दर्य, निरीक्षण, उपसनार्थ, बारंबार जाता रहता था। एकबार नगर के दक्षिण की तरफ "राम कृष्ण आश्रम" के नीचे चिल्कापेटा बंगले में पहुँच गया।

श्री कृष्ण प्रेम (अंग्रेज साधु) तथा उनके "गुरु मां यशोदा मां" के प्रथम दर्शन करते ही हृदय में अद्भुत आनन्द का सात्विक अनुभव हुआ। मानो कि जन्म-जन्म के पूर्व परिचित प्रेमी हों इस तरह मिले। मेरी उम्र लगभग २३ वर्ष की होगी। और वे तो बहुत बड़े थे परन्तु प्रेम में छोटे बड़ों का प्रश्न ही नहीं रहता। "सबसे ऊँची प्रेम सगाई"।

यशोदा मां—(पूर्वाश्रम का नाम श्रीमती मोनिका देवी) में मातृवत्सलता विपुल मात्रा में भरी पड़ी थी। अभी झरते नेत्रों में से प्रेम तो निखारता रहता था मुझे पुत्र की तरह अपनाकर अन्त तक आत्मीय जन बना लिया, दो वर्ष की उम्र में माता का स्वर्गवास हो जाने से मातृविहीण पुत्र को मातृ प्रेम प्राप्त हुआ। वे तो कितनों की माता बनी।

श्री श्री कृष्ण प्रेम वैरागी (Sri Henry Ronald Nixon) अंग्रेज सद्ग्रस्थ रहे। कैम्ब्रीज यूनिवरसिटी के ग्रेजुवेट होने पर प्रथम विश्व युद्ध सन् १९१४ से १८ में हवाई जहाज में योद्धा (पाईलेट) का काम किया था। परन्तु संस्कार पवित्र थे। धार्मिक मनोवृत्ति जन्म से रही। कहा जाता है कि एकबार इन्हें Vision (झांकी) हुई कि हाथ में बंसरी धारण किये मोर मुकुट धारी दर्शन मूर्ति की झांकी हुई। बहुतों को पूछा—"यह क्या हो गया" परन्तु कोई सन्तोष जनक उत्तर नहीं मिल पाया किसी ने कहा, "कोई भारतीय शायद बतला सकें" इंगलैण्ड में उस समय भारत-लखनऊ यूनिवरसिटी के वाइस चान्सलर श्री ज्ञानेन्द्र नाथ चक्रवर्ती तथा उनकी पत्नी मौनका देवी आये हुये थे।

जिज्ञासु अंग्रेज युवक चक्रवर्ती दम्पत्ति को मिले। अपनी राम कथा सुनाई उत्तर मिला "यह तो हमारे श्री कृष्ण हैं"। जिन्होंने गीता, अर्जुन को सुनाई उन्होंने अंग्रेजी में अनुवाद गीता का श्री एनीबेसैन्ट रचित दिया।

जिज्ञासा तीव्रतर होती गयी। और अन्त में इंगलैण्ड छोड़कर इस युगल दम्पत्ति के साथ भारत वर्ष आने का निर्णय कर लिया। वाइसचान्सलर ने लखनऊ यूनिवरसिटी में श्री निक्सन को अंग्रेजी का प्रोफेसर नियुक्त किया। शिक्षक बनने पर भी वे तो शिक्षार्थी ही रहे। भारतीय संस्कृति "धार्मिकता तथा आध्यात्मिकता के विद्यार्थी की हैसियत से अष्टांग अध्ययनशील बने। वेद वेदान्त, पुराण, वैश्णव धर्म, रामानुज, बौद्धधर्म तथा तंत्रशास्त्र आदि धर्मशास्त्रों का गहन अध्ययन किया। अंग्रेजी तो मातृ भाषा थी ही। परन्तु संस्कृत, हिन्दी, बंगला, आदि भाषा अच्छी तरह सीख ली। संस्कृत के तो अच्छे विद्वान बन गये।

श्री ज्ञानेन्द्र नाथ चक्रवर्ती महाशय रिटायर्ड होकर "काशी" गये तो श्री निक्सन भी मां के साथ काशी आ गये। नौकरी करने के लिए तो वे भारत में नहीं आये थे। काशी में पण्डित मदन मोहन मालवीय जी स्थापित हिन्दू यूनविर्सिटी में मालवीय जी के आग्रह से प्रोफेसर बने।

श्रीमती मोनिका देवी चक्रवर्ती जी सन् १९२७ में अल्मोड़ा आ गयीं। और यहाँ वैष्णव धर्म श्री गौंराग देव चैतन्य महाप्रभु के सम्प्रदाय के अनुसार दीक्षा लेकर सन्यास ग्रहण करके "यशोदा मां" वैरागनी बन गयी पति जिन्दा होने पर पति की आज्ञा से उन्हें गुरु मानकर संन्यास लिया था।

यशोदा मां से श्री निक्सन ने दीक्षा लेकर "श्री कृष्ण प्रेम वैरागी" साधु बन गये। इस तरह यशोदा मां के गोपाल बने। श्री कृष्ण भगवान तथा यशोदा मां —इस तरह यह भी यशोदा मां के गोपाल बन गये।

एक समय के अपटूडेट अंग्रेज युवक पाईलेट—योद्धा गोरा साहब, प्रोफेसर आज गेरुवा वस्त्रधारी वैष्णव साधु गोपाल दा बनकर साधना करने लगे ।

गेरुवा —(भगवा) रंग का अञ्चल देह पर लपेट लिया, शिखा रखी । कान छिदवाकर उसमें मणिका पहनी । सिले हुए वस्त्र धारण नहीं करने का व्रत लिया, लकड़ी के तख्त पर या भूमि पर सोना, पर लकड़ी की चांखडी (खड़ाऊ, चट्टी) पहनना, मधुकरी (भिक्षा मांग कर आटा, दाल, सब्जी) स्वयं पकाकर रसोई बनाना, बर्तन साफ करना, कपड़ा धोना, सफाई करना आदि का अभ्यास (आदत) करने पर कठिन तपश्चर्या तितिक्षा बढ़ने लगी ।

संध्या पूजन, भजन जब ध्यान धारण स्वाध्याय और प्रातः मध्यान्त सांय आरती नैवेद्य आदि में समय व्यतीत होने लगा ।

सात्विक साधक, यम-नियम, संयम के व्रत पालन करते हुए सर्वधर्म का गहरा अध्ययन करके ज्ञान प्राप्त करने पर भी स्वयं को "प्रेममय भक्त" होना पसन्द किया । प्रेम विचार, वाणी, आचरण में आप ही आप प्रकट हुआ करता था । "श्री कृष्ण प्रेम" नाम सार्थक बना ।

शंकर भगवान शिवजी के सर्प की तरह गले में रुद्राक्ष की माला सुशोभित है । पूरे छः फिट मजबूत, हट्टे कट्टे देह पर भगवा चादर ओढ़ी है । भगवी धोती कमर पर लपेटी है । सिर पर गेरुवा रंग का साफा बंधा हुआ है । हजारों में से नरशार्दूल की तरह अलग पहचाने जायें, गौंराग अंग्रेज साधु को देखो, जिसकी आँख से अभी झरती मधुरता, कपाल तप से तेजस्वी बना है, चेहरा सदा हँसता हुआ, प्रथम दृष्टि से जिनके प्रति पूज्य भाव प्रकट हों, यह सब जिस भव्य, दिव्य मूर्ति में दर्शन हो, तब समझो कि यह तो —"श्री कृष्ण प्रेम वैरागी" है ।

यशोदा मां का दुलारा गोपाल दा

श्री कृष्ण प्रेम के इंग्लैन्ड निवासी कुछ मित्रगण भी भारतीय संस्कृति, धार्मिकता तथा आध्यात्मिकता से आकर्षित होकर भारत में श्री श्री कृष्ण प्रेम के सत्संग के लिये आने लगें । कुछ तो स्थाई रूप से उनसे दीक्षा लेकर स्थायी रूप से साधु बनकर रहने लगें । और साधु की साधना करते हुए देह भी भारत भूमि में त्याग दिये । Dr. Alexander (Indian Medical Service I. M. S.) मद्रास में सिविल सर्जन थे ।

वे श्री श्री कृष्ण प्रेम के पुराने मित्र थे। उन्होंने अपना स्थानान्तरण उत्तर प्रदेश लखनऊ मेडिकल कालेज, में करा लिया। जिससे अल्मोड़े में रहने वाले "यशोद मां" तथा "श्री श्री कृष्ण प्रेम" के सत्संग करने के सुअवसर बार-बार मिल सके। शनि-रवि और एकाध दिन की छुट्टी लेकर हर हफ्ते या हर माह, कार द्वारा अल्मोड़ा पहुँच जाते थे। कैसी अपूर्व जिज्ञासा? अन्त में नौकरी से त्यागपत्र दे दिया और ब्रह्मचारी बनकर "श्वेत वस्त्र धारी" सत्संग में सतत रहने लगे। अभी गेरुवा वस्त्रधारी साधु नहीं बने थे, इस दर्मियान दूसरा विश्व युद्ध शुरू हो गया। डाक्टरों की कमी होने से अनिवार्य मिलिट्री में आने का आर्डर मिला। मिलिट्री में याने हिंसा युद्ध में जाने की Dr. Alexander की अनिच्छा थी। अंग्रेज मिलिट्री बोर्ड के सामने कानपुर में अपने को स्वयं इस तरह उपस्थित हुए कि सभी सदस्य आश्चर्यचकित बन गये।

गेरुवा अचल पहिना हुआ हाथों में कमंडल, गले में माला, सिर सफाचट मुण्डन किया हुआ वैष्णवी त्रिपुंड (तिलक) कपाल पर धारण करके इस अंग्रेज डाक्टर एलेक्जेण्डर को देखकर के मैम्बरान दिगमूढ़ से बन गये Are you Dr. Alexander I. M. S. उत्तर हूँकार में दिया।

"राष्ट्र पर विपत्ति आयी है, आप टेकनिकल डाक्टर हैं तो मिलट्री में सम्मिलित होने के लिए राष्ट्र सेवा का उपदेश दिया। उत्तर दिया कि "मैं मानव सेवा करने के लिए तैयार हूँ। घायलों की सेवा करने में आनन्द आवेगा। परन्तु मैं ब्रह्मचारी वैष्णव साधु हूँ। मिल्ट्री यूनिफार्म पहनने की आज्ञा मेरे गुरु तथा सम्प्रदाय की नहीं है। इस वेष में मानव सेवा करने को तैयार हूँ।

साधु के लिए क्या हो? इस पर मिलट्री बोर्ड के सदस्य सोचने लगे। अंग्रेजी कानून में तो रोमन कैथोलिक प्रोटेस्टैंट साधु को तो Conscription यानी अनिवार्य सेवा से मुक्त रखने का नियम है। पर भारतीय वैष्णव साधु हालाकि वह अंग्रेज है तो क्या करना चाहिए? डाक्टर ऐलैक जैन्डर की दृढ़ता तथा भारतीय संस्कृति और आध्यात्मिकता के प्रति अगाध, अटल श्रद्धा की विजय हुई। उन्हें मुक्त कर दिया।

स्वामी श्री हरिदास नाम धारण करके श्री श्रीकृष्ण प्रेम से दीक्षा लेकर डाक्टर ऐलैक जैन्डर चुस्त वैष्णव साधु बन गये और उत्तर वृन्दावन में मरते दम तक दरिद्र नारायण बीमारों की सेवा अनासक्त होकर निष्काम सेवा प्रेमभाव से करते रहे। श्री हरिदास ठेठ अंग्रेज होने पर भी ग्रामीण जनता की सेवा करते हुए टूटी-फूटी हिन्दी भाषा बोलने लगे थे। एक बीमार ग्रामीण को औषधि देते हुए कहा—"अभ्यास करना" वह तो कुछ समझा नहीं गोपाल दा को पूछा 'अभ्यास क्या? गोपाल दा गम्भीर विचार में पड़ गये परन्तु हिन्दी के अच्छे ज्ञाता होने पर अर्थ बतलाया—अभ्यास और व्यायाम

करो। हम सब लोग खूब हँस पड़े। ऐसे पवित्र आत्मा का कहाँ का जन्म और कहाँ का मरण ? निर्वाण गति रबर्ड जोर्ज पूल साहब अच्छे चित्रकार थे। बहुत शान्त और सौम्य मूर्ति, वर्षों तक यशोदा माँ तथा श्री श्री कृष्ण प्रेम के साथ भारतवर्ष अल्मोड़ा-उत्तर वृन्दावन में रहने के बाद इंग्लैंड गये।

श्री कीटली साहब वयोवृद्ध साधक सज्जन उत्तर वृन्दावन में काफी समय रहकर (गोलोक) सिधार गये। यही उनका निर्वाण हो गया।

श्रीमती वेब (Mrs. Webb) वृद्धा महिला ने इंग्लैंड से आकर उत्तर वृन्दावन में सत्संग स्वाध्याय करते हुये यहाँ निर्वाण गति प्राप्त की।

Mr. Fibbs साधना के लिए कुछ समय तो रहे। पर उनके संस्कार यहाँ की साधना, संयम, तप और तितीक्षा के लिए साथ न दे सकने के कारण इंग्लेंड चले गये।

"परमात्मा सर्वत्र है, सबका है" के अनुसार उत्तर वृन्दावन के साधक तपस्वीयों में से कुछ यहीं निर्वाण गति पा गये। शिखाधारी, मालाधारी, भगवाधारी शान्त सौम्य मूर्ति आशीष दा सबको आनन्द और आशीर्वाद दे रहे हैं।

श्री श्री कृष्ण प्रेम को एक अनन्य भक्त समर्पित भावना सहित प्राप्त हो गये। वह अंग्रेज नवयुवक टाटा एअर लाइन्स के हवाई जहाज में इन्जीनियर थे। वे जिज्ञासु प्रवृत्ति के थे ही पवित्र संस्कार भी थे। आध्यात्मिकता तथा शान्ति की शोध में दक्षिण में श्री रमण महर्षि, श्री रामदास स्वामी योगी, श्री अरविन्द आदि अनेक सन्तों के सत्संग के बाद उत्तर बृन्दावन में प्रथम बार आये थे तब एक नागा बाबा ने भविष्य वाणी की कि अन्त में उत्तर वृन्दावन में आना पड़ेगा।

साधु की भविष्य वाणी सत्य हुई गुरु की शोध में अन्त उत्तर बृन्दावन में साधक ब्रह्मचारी रूप में रही और शीघ्र ही "श्री श्री कृष्ण प्रेम" से दीक्षा लेकर श्री माधव आशीष नाम धारण करके आज भी उत्तर वृन्दावन में आश्रम के उत्तराधिकारी के रूप में स्थित हैं।

गोपाल दा की तरह ऊँचे कदावर भरा पूरी देह, गौरवर्ण, शिखाधारी, मालाधारी, भगव-गेरुआधारी, प्रेमाण, शान्त सौम्य मूर्ति आशीष दा सबको आशीर्वाद दे रहे हैं।

उत्तर वृन्दावन की एक अद्भुत् अपूर्व और अनोखी विभूति यशोदा माँ की पुत्री मोती रानी यहाँ स्थायी निवास करके गोपाल को गुरु बनाकर दीक्षा लेकर अर्पिता देवी नाम धारण करके साधुनी बन गई थी। वर्षों तक साधन-भजन भक्ति भाव में लीन रही।

यशोदा माँ की तरह अनेक रोग पालकर सदा बीमार रहने पर भी बद्रीनाथ की यात्रा गुरु के साथ पैदल की। उस समय पैदल ही यात्रा करनी पड़ती थी। विश्व में गुरु की सेवा करने वाले तो सैकड़ों मिल सकते हैं। पर शिष्यों की सेवा महीनों तक निष्ठा तथा प्रेमपूर्वक करने वाले गुरु तो दुर्लभ ही हैं। शिष्या अर्पिता देवी अन्त में गुरु की गोद में ही श्री श्री कृष्ण प्रेम के चरणों में सदा के लिए समाधिस्थ हो निर्वाण गति प्राप्त हुई। कैसी निष्काम सेवा ?

यशोदा माँ तो श्री श्रीकृष्ण प्रेम की माता ही है न ? गोपाल-गोपाल कहते माँ थकती नहीं थी। बीमार माँ ने पुत्र का नाम गोपाल रखा था। और गोपाल का भी मा मा कहते हुए मुँह सूख जाता था। गुरु शिष्य के सम्बन्ध, माता पुत्र का पवित्र प्रेम स्पष्ट दिखाई देता था। माँ जब मधुर आवाज से सुरीले स्वर में संगीत मय भजन गाती थी, तब स्वयं सरस्वती देवी अवतरित हो हिमालय में गुंजन करती हुई ऐसा मालूम पड़ता था। चित्रकला में तो माँ चित्रलेखा की कलामय सखी ही रही। भागवत के अनेक प्रसंगों में जीते जागते जीवन्त भववाही चित्र बनाये हैं। —कि देखने वाले दंग हो जावे। बोधि वृक्ष के नीचे बुद्ध देवता का सजीव चित्र आलेखा है। औषधि की ज्ञाता तो थीं, मानों धनवन्तरी का अवतार हो। दवा के साथ दुआ आशीर्वाद देकर जनसेवा, निष्काम भाव से करते रहने से जनता की श्रद्धा भाजन रहीं। मातृ प्रेम, मातृ वात्सल्य की साक्षात मूर्ति यशोदा माँ को शत प्रणाम।

यशोदा माँ भक्त प्रेमी होने पर भी उनमें ज्ञान की तेजस्विता भी रही। श्री निकसन, श्री अलेकजेण्डर, श्री केटली, श्री पूल, श्रीमती वेब आदि अनेक विदेशी शिष्य बने। भारतीय तो अनेक शिष्य थे ही। यूरोपियनों को आकर्षण करने की शक्ति उनकी आध्यात्मिकता व तप के कारण थी। वह अपूर्व और कमाल की रही। इंग्लैंड फ्रांस, जर्मनी, स्विटजरलैण्ड, इटली आदि अनेक देशों का पर्यटन उन्होंने कई बार किया है।

यशोदा माँ की मातृ भाषा बंगाली है। हिन्दी और अंग्रेजी अच्छी तरह धारा प्रवाह बोल सकती हैं और लिख सकती है। संस्कृत का भी ज्ञान है। एकान्तसेवन तथा साधना के लिए काशी से हिमालय अल्मोड़ा आयीं। अधिक एकान्त के लिए अल्मोड़ा से १५ मील जागेश्वर के पास मिरतोला उत्तर वृन्दावन आयीं। यहाँ भी एकान्त सेवन करने के लिए मन्दिर से थोड़ी दूर भूमिगत गुफा बनाई है। जहाँ रोज जप ध्यान करती हैं। भक्ति शान्ति हम दोनों दम्पत्ति के प्रति यशोदा माँ तथा गोपाल दा का अद्भुत प्रेम रहा। पूर्व जन्म का ही ऋणानुबन्ध होगा। सौराष्ट्र, गुजरात से १९२८ में सौराष्ट्र, समुद्र किनारे से हिमालय में भोली-भाली १४ वर्ष की

भक्ति देवी पवित्र आत्मा की दैवी सम्पत्ति लेकर पहुँची। तब यशोदा माँ ने पुत्र-वधू की तरह प्रेम से स्वागत किया। इस अनजान दूर स्थान में मातृ वात्सल्य की अमिट दृष्टि की वर्षा भक्ति पर हुई। भक्ति को और मुझे भी हिन्दी भाषा बिलकुल आती नहीं थी। मानों हिन्दी सिखाना शुरू किया। सचित्र महाभारत तथा अन्य धार्मिक पुस्तक पढ़ने को देती रहीं। इतना ही नहीं, भक्ति की बुद्धि तथा अन्य गुप्त गुणों का विकास करने में माँ निमित्त बनी। ऊन कताई तथा स्वेटर बनाना आदि निटिंग कार्य भी सिखातीं रहीं। हिमालय में हमारी माँ मिल गयी। राष्ट्र ध्वज सत्याग्रह सन् ३० में गोरखा मिलिट्री के डंडे से छाती तथा पैर की हड्डी टूटी। सिर भी फूटा। हास्पिटल में घायल होकर भीष्म की सी बाण शय्या पर पड़े थे। पर यशोदा माँ और गोपाल दा आशीर्वाद देने आये थे। पुत्र की चोट से माता का हृदय हाहाकार कर उठा। द्रवित होकर चिल्ला उठी, बेटा! तुमको किसने मारा? ऐसा स्वराज्य किस काम का? माता की व्यथा की वह पुकार थी।

स्वतन्त्रता संग्राम सन् १९४२ का आन्दोलन जोर से चल रहा था। Quit India भारत छोड़ो का बुलन्द नारा हिमालय से रामेश्वर तक और द्वारिका से जगन्नाथपुरी तक गूंज उठा। यशोदा माँ का हृदय व्यथित हो उठा। उस समय श्री कृपाल सिंधु मिश्रा I. C. S. जिले के डिप्टी कमिश्नर थे। वे माँ के नजदीक के रिश्तेदार थे। उन्हे कहना तो नहीं चाहिए था, पर मातृ प्रेम के कारण कहा। मेरा एक पुत्र शान्ति है। उन्हें अन्याय न हो। परन्तु ब्रिटिश सरकार के इस रक्षक ने हमारा श्री गाँधी आश्रम जब्त किया। सारे आश्रम भाई गिरफ्तार कर लिये। फाँसी से तो बच गये परन्तु जेल में जाना ही पड़ा। इस समय माँ का हृदय हाहाकार करता रहा। (व्यथित हुआ) कल्याण के लिए प्रार्थना करते रहे।

जेल से १५ माह बाद छूटने पर (बरेली सेन्ट्रल जेल) अल्मोड़ा जिले के साथी जो अन्य जेलों में थे उनके गाँवों में घरों में पहुँच कर घर वालों को सान्त्वना यथा शक्ति आर्थिक सहायता देने का प्रयत्न किया। इस यात्रा में सुश्री सरलादेवी Miss. Catlenne Mery Heilenous) भी साथ थीं। उस समय उत्तर वृन्दावन माँ तथा गोपाल दा के चरणों में जेल से छूटने पर ४५ दिन बाद प्रणाम किया। यशोदा मां ने व्यथित हृदय से कहा—सरकार ने तुमको फाँसी पर न चढ़ाकर शहीद होने से बचा तो लिया पर हमारी भक्ति बहू की कैसी करुणा कहानी रही? उसके पुत्र का इस बीच देहावसान हो चुका था। रामायण में लक्ष्मण की उर्मिला की सीता से भी करुण दशा रही। वैसे ही भक्ति का बलिदान तो अज्ञात पर अभूतपूर्व रहा। अब शीघ्र ही उनके पास बम्बई पहुँच जाओ। चार पाँच दिन हमारे पास विश्राम करो।"

अल्मोड़ा जाने पर तो ५० दिन की आजादी के बाद रात बारह बजे दोबारा कृष्ण मन्दिर जेल में पहुँच गए। असल में गिरफ्तारी का वारंट तो सालम से घूमता हुआ उत्तर-वृन्दावन पहुँच गया था। जब हम वहाँ थे। परन्तु पुलिस आफीसर यशोदा माँ का भक्त था। मुझ पर भी प्रेम था। उन्हें तो मालूम था कि अभी तो जेल से ही छूटे हैं। फिर आश्रम में गिरफ्तार करने के लिए उनकी अन्तरआत्मा तैयार नहीं थी। अतः लिख दिया कि वहाँ से चले गये।

आश्चर्य कारक एक घटना और घट गई। उत्तर वृन्दावन से २२ मील की पैदल यात्रा करके अल्मोड़ा पाताल देवी से श्री श्री आनन्दमयी माँ के आश्रम में सरला बहन के साथ पहुँचे। तब प्रेम से भोजन का निमन्त्रण दिया। हमारा कोई ठिकाना तो था नहीं। कपड़े भी नहीं थे। अतः माँ का प्रेम भरा निमन्त्रण स्वीकार किया। स्नान भोजन के बाद दिवाल के सहारे हम दोनों बैठे थे। श्री श्री आनन्दमयी माँ आँगन में घूम रहीं थीं। बाते चल रही थीं। हमारा कार्यक्रम पूछा। हमने कहा अब जेल से मुक्त हुए हैं तो बम्बई घर वालों से मिलने जायेंगे।—माँ थोड़ी देर बाद बोली। अभी तो बम्बई जाना नहीं होगा।—इस समय तो वह बात गम्भीरता से नहीं ली। पर उसी दिन रात को १२ बजे पुलिस थाने के कमरे के बिस्तर पर सोया। तब माँ का कहना याद आया। बम्बई के बदले जेल कृष्ण मन्दिर में आ जाना पड़ा। सन्तों की वाणी सत्य सिद्ध हुई। भविष्यवाणी भी गम्भीरता से कह देते हैं। पर हम साधारण मनुष्य बाद में समझते हैं। प्रणाम हो, वन्दन हो मातृ शक्ति के लिये। श्री रामकृष्ण ये काली देवी की माँ के रूप में उपासना करके भक्ति की अद्भुत और आसान साधना बतलाई। माता की गोद में भक्त आराम से सोता है। माँ के प्रेम से सराबोर हो जाता है। कैलाश मानसरोवर की यात्रा से दिनांक ६ सितम्बर ३१ के दिन उत्तर वृन्दावन में यशोदा माँ तथा गोपाल दा के दर्शन और आशीर्वाद से यात्रा की पूर्णाहुति हुई। आत्म शान्ति हुई। उत्तर वृन्दावन अल्मोड़ा से १५ मील दूर जागेश्वर के ऊपर विस्तृत भूमि जिसका विस्तार लगभग दो तीन मील है। बाँझ और चीड़ तथा अन्य वृक्षों का जंगल है। समुद्र सतह से लगभग ७ हजार फीट की ऊँचाई पर है। सुन्दर शान्त और एकान्त स्थान है। हिमालय का अन्तरभागी ही है। शीत काल में तो दो तीन फीट बरफ पड़ता है। जागेश्वर, दण्डेश्वर तथा वृहद् (वृद्ध) जागेश्वर ईशानेश्वर आदि प्राचीन मन्दिर नजदीक है। सुन्दर बगीचा है। सेव, आड़ू आदि फल है। राधारानी का पुष्प बगीचा बना है। गोपाल कृषि बागवानी मधुमक्खी पालन पुष्प वाटिका तथा फलोद्यान आदि प्रवृति प्रभु प्रीत्यर्थे पूजन अर्थे करते रहे हैं।

वाराणसी काशी वैसे हिमालय में उत्तर काशी मथुरा के पास बृन्दाबन के

हिमालय में यही वृन्दावन तीर्थ है विश्व वन्द्य राष्ट्रपिता बापू अल्मोड़ा आये तब यशोदा मां तथा गोपाल दा ने बापू दर्शन की अभिलाषा प्रकट की। मैंने कहा एक पत्र कृपया देवे हालाकि कि आवश्यकता नहीं थी। परन्तु विवेक के खातिर कहा। लिखने लगे तो कहा कि—हिन्दी में लिखिये। गुरु माँ तथा मैं आपके दर्शन के अभिलाषी हैं। कृपया कौन सा समय उपयुक्त होगा—एक अंग्रेज के हाथ का लिखा शुद्ध हिन्दी में पत्र पढ़कर बापू को आनन्द हुआ। दूसरे दिन प्रातःकाल ९ बजे का समय दिया। यशोदा मां तथा गोपाल दा ठीक समय तक बापू के पास पहुँचे। बापू ने प्रेम से स्वागत किया। पूछा "पहले क्या करते थे ?" "लड़ाई में" तब तो हिंसा खूब हुई होगी "श्रीकृष्ण प्रेम ने कहा हवाई जहाज में था अरे तब तो अधिक हिंसा। इस तरह विनोद करते हुए बापू ने उनके जीवन के विषय में जानकारी प्राप्त कर ली।

बापू का कार्यक्रम कौसानी में आराम करने का था। यहाँ पर अनाशक्ति योग (गीता) की भूमिका लिखी है। यहाँ से गरुड़ होकर बागेश्वर राष्ट्रीय धार्मिक तीर्थ और ऐतिहासिक स्थान—जहाँ कुमायू में कुली बेगार के विरोध में सत्याग्रह सफल हुआ था। वहाँ बापू को ले जाने का कार्यक्रम देशभक्त श्री मोहन जोशी ने बनाया था। वहाँ पर डांडी पर ले जा रहे थे। बीच में पैदल भी चलते थे पुरानी बातें करते रहे। तब बापू श्रीकृष्ण प्रेम के विषय में उत्सुकता से पूछने लगे थे। उनकी जीवन कथा तथा आध्यात्मिकता के विषय में कहता रहा—यह भी कहा कि प्रसिद्ध संगीतकार दिलीपरोय से योगी श्री अरविन्द ने कहा था कि—If you want to see a real yogi, go to Shri Krishna Prem at Almora. यह बात दिलीप रोय ने Among the Greats में लिखी है।

श्रीकृष्ण प्रेम की दो पुस्तक विशेषरूप से पठनीय तथा मननीय हैं। Yoga of Gita और कठोपनिषद से उनका गहरा अध्ययन आध्यात्मिक अनुभूति तथा भक्त हृदय की भावना का प्रकाश प्राप्त होता है। पौर्वात्य तथा पाश्चात्य तत्व ज्ञान का हृदय वाही निरूपण और सामंजस्य युक्त वर्णन जिनको दोनो ज्ञान का अनुभव है। अंग्रेजी में अन्य पुस्तक तथा विविध अनेक धार्मिक लेखा लिखते रहते थे।

यशोदा माँ की गम्भीर बीमारी के समय उनकी प्रेम पूर्वक सेवा करते हुए उनके शौचालय यानी कमोड साफ करते हुए कठिन साधना करते-करते कठोपनिषद पर जो टिप्पणी लिखी है वह अद्‌भुत है।

यूनिवर्सिटी तथा कालेज तथा अन्य संस्थाओं में निमन्त्रण आने पर प्रवचन देने जाया करते थे। परन्तु बाद में मौन साधक बने। गुरु यशोदा माँ की सेवा वर्षों तक गोपाल दा उनकी बीमारी में करते रहे। परन्तु शिष्या अर्पिता देवी की बीमारी में

उतनी ही निष्ठा व प्रेम से सेवा करते रहे। वह तो अभूतपूर्व तथा अद्भुत उदाहरण शायद ही अन्यत्र मिले। गुरु गोपाल दा ने शिष्या अर्पिता देवी को श्रीमद्भागवत् गीता अर्पण करते हुए निम्न प्रकार दीक्षा मन्त्र दिया था—

तमेव विद्धित्वातिमृत्युयेति
नान्यैः पन्था विद्यते वनाय।

Within your heart is Eternal Krishna. If you find him, you have found everything. If you loose him, you will have wasted your life even if the whole world resounds with your fame.

Yours ever
Shri Krishnaprem

स्वतन्त्रता संग्राम सन् ४२ में जेल से मुक्त होने पर सन् ४५ में उत्तर वृन्दावन गया। तब अर्पिता देवी को अर्पित गीता प्रसाद रूप मे मुझे गोपाल दा तथा शिष्या ने आशीर्वाद सहित दिया। आज भी अमूल्य प्रसादी मेरे पास है।

श्रीकृष्ण प्रेम प्रेम और आशीर्वाद सहित अनेक पत्र समय-समय पर मुझे लिखते रहते थे। उसमें से दो पत्रों की प्रतिलिपि निम्न प्रकार है —

Dear Shanti Bhai Mirtola 1-11-62

All loving greetings for your new year (दीपावली नूतन वर्ष) may it be happy year for you both. जय राधे

P.O. Mirtola, Almora Your affectionately
20-10-63 Gopala

Dear Shanti Bhai

May all blessings be your for new year. May it be a happy are for you both. One bringing light and unique peace.

Yes, we are both of us well and all goes smoothlly here. Accept our best wishes and all blessings you.

Yours affectionately
Gopala

अर्पिता देवी तो हमारे लिए सदा छोटी बहिन ही बनी रही। मुझे भाई जानकर प्रेम व श्रद्धा से चरण स्पर्श करती थी। परन्तु उन्होंने तो सन्यासिनी साधु अर्पिता देवी

बनने पर भी गृहस्थी को प्रणाम नहीं करना चाहिए। परन्तु अन्तिम समय में गम्भीर बीमारी में अल्मोड़ा में श्री ब्रस्टर साहब के स्थान पर मेरे पहुँचने पर करुण स्वर में कहने लगी। आप चरण ऊपर उठाइये ताकि चरण स्पर्श कर सकूं। शक्ति नहीं है कि देह को झुका सकूँ। कितना पवित्र प्रेम ?

इसके बाद गोपाल दा तथा आशीष दा उन्हें रानीखेत डाक बंगले ले गये। कुछ दिन के बाद निर्वाण गति प्राप्त की। उनकी अन्तिम अभिलाषा अनुसार देह को कार में काशी ले जाकर गंगा में प्रवाहित करके उनकी आत्मा को शान्ति प्रदान की।

श्री गाँधी आश्रम चनौदा में सन् ४७ में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद जो स्वराज्य मिला जिसमें भारत राष्ट्र खण्डित होकर लाखों लोगों का कतल बेघर बार होने पर पाकिस्तान बना। उसका मेरे हृदय पर आघात होने पर बीमार पड़ गया। तब गोपाल दा तथा मोती रानी ने आग्रह से इस भक्ति-शान्ति हम दोनों को उत्तर वृन्दावन बुलाया। तीन माह उनके सत्संग तथा सेवा का लाभ प्राप्त किया। वह समय जीवन में सदा स्मरणीय रहेगा। हम पर कितना पवित्र प्रेम और आशीर्वाद ? परमात्मा की पवित्र प्रसादी।

गोपाल दा तथा आशीष दा महीनों कलकत्ता आदि की यात्रा करके अल्मोड़ा सर जगदीश चन्द्र बोस के साथी (वैज्ञानिक) श्री बोसीसेन के घर ठहरे थे। वहाँ दर्शन हुआ। तब भोजन का निमन्त्रण दिया। मुझे मालूम था कि चुस्त वैष्णव या तो स्वयंपाकी या अन्यत्र पूरी शाक लेते थे। मैंने कहा – गोपाल दा पूरी साक बनेगा न ? अरे नहीं। भक्ति के हाथ के भात दाल का भोजन लेंगे। मैंने कहा—वैसे हम चुस्त वैष्णव नहीं। कंठी भी नहीं। पर गाँधीजी के साथी राष्ट्रवादी परन्तु सबसे ऊँची प्रेम सगाई-साग विधुर घर खाई। सर्वोदय कुटीर अल्मोड़ा में गोपाल दा आशीश दा ने भक्ति शान्ति के साथ भोजन किया। यह है पवित्र प्रेम की अद्‌भुत प्रसादी।

गोपाल दा ने एक बार मन्त्र सिद्धि का अनुभव बतलाया परन्तु उस चमत्कार को महत्व देते नहीं थे। आत्म दर्शन के लिए ऐसी सिद्धियों की आवश्यकता नहीं है। ऐसा हर पवित्र आत्मा सन्त कहते हैं। एक बार मौज के लिए मन्त्र सिद्धि बतलाई। मन्त्र पाठ करके लम्बा सूजा अपनी जांघ में घुसा दिया। खून का बूंद नहीं। पामिस्ट्री ज्योतिष के ज्ञाता थे। १५ अगस्त ४७ में भारत राष्ट्र स्वतन्त्र हुआ तब होरस्कोप मौज खातिर बनाया था। वह सब सत्य सिद्ध हुआ। श्रीकृष्ण प्रेम से एक बार प्रश्न पूछा। गोपाल दा इतने बड़े मजबूत शरीर और दिल दिमाग का उपयोग जनसेवा जन-कल्याण के लिए करना चाहिए न ? हँसकर प्रेम भरे शब्दों में कहा—पवित्र भावना से भी जन-कल्याण होता है। विज्ञान सिद्ध करता है कि ऊपर की हवा पतली बनकर और ऊपर

चढ़ती है तो नीचे की हवा स्वयं उस vacume ऊपर चढ़ती है। उसी तरह व्यक्ति की आत्मा पवित्र बनकर उन्नत होती है तो समष्टि की आत्मा भी स्वभावतः पवित्र बनकर उन्नत होकर ऊँचे उठती है। इस प्रक्रिया में विश्व कल्याण निहित है। सत्संकल्प पवित्र हृदय से स्फुरित हों तो सत्य सिद्ध बन जाता है। विश्व कल्याण के लिए हमारी प्राचीन ऋषि मुनि तपस्वी की प्रार्थना है।

सर्वेऽत्र सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखमाप्नुयात्॥

ओम शान्तिः शान्तिः शान्ति।

राष्ट्रपिता बापू से तीन प्रश्न पूछे थे। बहादुर और कायर में क्या फर्क? २. संकट पड़ा तो द्रौपदी ने श्रीकृष्ण का स्मरण किया तो सहायता दी। ३. सूरदास, तुलसीदास जैसे भक्तों ने नम्रता से प्रार्थना की। निर्बल के बलराम तू दयालुदीन हो। वह आत्म बली की प्रार्थना की। बापू ने सन्तोषजनक उत्तर दिया। उनमें से एक प्रश्न गोपाल दा से पूछा। दोनों के उत्तर लगभग एक से ही रहे। मनुष्य के जीवन में अकस्मात् आफत आ जाने पर दिल धड़कता हैं। तो दोनों में क्या फर्क? इस स्थिति में आपका क्या अनुभव हैं? मेरे कहने का मतलब था कि राष्ट्र ध्वज सत्याग्रह में जब डिकटेटर मैं था तब Disperse with in five minutes का आर्डर था। मारना या गोली चलाना। उस समय दिल धड़कने लगा। तो कायर और बहादुर में क्या फर्क? बापू और गोपाल दा ने कहा ऐसे समय मनुष्य का दिल धड़कता है। परन्तु फिर सोच विचार कर आत्मबल से मजबूत होकर मोर्चे पर डटे रहता है। वह बहादुर भागने वाला कायर, दिल मनुष्य का तो धड़केगा ही। शैतान या पत्थर या देवता को शायद ऐसा न हो। पर मनुष्य के लिए वह होना स्वाभाविक है पर अन्त में आत्मबल अटल रखता है।

गोपाल दा गीता के अभ्यासी थे ही। इनका सारा मन्दिर बगीचा गांव भूमि सहित साधन सम्पन्न आश्रम है। पर उनके एकमात्र ट्रस्टी ही श्री गोपाल दा रहे। परन्तु ट्रस्टी मात्र अनासक्त होकर सारी सम्पत्ति ठाकुर जी को मानकर वे मात्र व्यवस्था करने वाले यन्त्र मात्र हैं। श्री कृष्णार्पण समर्पण भावना—

यत् करोषि मदश्नद्धि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्॥

इसी कृष्णार्पण भावना से नैवेद्य रसोई बनाते रहे। पुष्प चुनते रहें। राधा-रानी के बगीचे से। चावल, दाल साफ करना, लेखन स्वाध्याय आदि जीवन व्यवहार

के समय हर समय हरिमय भावना बनी रहती। यानी तदाकार हेतु अनासक्त भावना की मात्रा बढ़ती गई। अधिकांश पुस्तक अल्मोड़ा में श्री राम कृष्ण आश्रम तथा डिग्री कालेज को अर्पण कर दी। अधिकांश फर्नीचर भी जनता में वितरण कर दिया। उसमें लोखड़ झूला शिष्या अर्पिता देवी को स्वयं बनाकर दिया। वह बढ़ई कार्य में भी होशियार थे।

मन्दिर का अधिकांश फर्नीचर स्वयं अपने हाथ से बनाया था, सब वितरण कर दिया। मन्दिर में पूजा के लिए लगभग ३५ देवी देवताओं की मूर्ति तथा यशोदा माँ के द्वारा आलिखित भगवान के प्रसंगों से चित्र आलेखे वितरण कर दिये थे। गोपाल दा पहले स्वयं आरती करते थे। मृदंग से भजन गाते थे। वह सब बाद में बन्द हो गये। वैराग्य के साथ पूर्णतः त्याग "त्याग न टकेरे वैराग्य बिना" यानी आशक्ति से भी अनासक्ति परन्तु अब तो अनासक्ति से भी अनासक्ति। श्रीकृष्ण प्रेम का साधना मन्त्र :—

सर्व धर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥

उत्तर वृन्दावन के अनेक साधक तथा विभूतियों को वन्दन। भक्त तथा भक्तों को भगवान की जय।

ॐ शान्ति २०-१२-८३
लक्ष्मीनारायण मन्दिर कुटीर घाटकोपर बम्बई—८६

दिनाक ८ सितम्बर, मंगलवार ११३१

प्रेममय पवित्र वातावरण में यशोदा मां तथा गोपाल दा के आग्रह से उत्तर वृन्दावन में ही रुक गये। मां तो पन्द्रह दिन तक रोकना चाहती थीं। मां का हृदय का प्रेम तथा वात्सल्य तो अद्भुत रहा परन्तु कर्तब्य की पुकार भी थी न ? आज का दिन "भक्त गाथा" पढ़ने में व्यतीत हुआ। तथा राधाकृष्ण मन्दिर की आरती भजन आदि में सम्मिलित हुआ।

"भक्त और भगवान की जय"

(४०) शान्ति कुटीर शैल-अल्मोड़ा

दिनांक ९ सितम्बर, बुधवार १९३१

प्रातःकाल प्रार्थना पूजन के बाद तैयार हुए। यशोदा मां ने प्रेम से पेट पूजा (नाश्ता) कराया। इसके बाद 'राधाकृष्ण' को तथा यशोदा मां, गोपाल दा आदि उत्तर वृन्दावन वासी विभूतियों—पवित्र आत्माओं को हार्दिक प्रणाम करके आशीर्वाद लेकर परमात्मा का स्मरण करके प्रस्थान किया।

बादल तो थे पर वर्षा नहीं थी। प्रकृति की अद्भुत लीला निहारते हुए चले जा रहे थे। एक झरणे पर स्नान-पूजन प्रार्थना करी। धौलछाना से पगडंडी के रास्ते 'पल्यो' ग्राम में आकर भाई प्रभुदास गाँधी—(महात्मा गाँधी के भतीजे के पुत्र) तथा गाँधी जी के पंचम पुत्र सेठ श्री जमना लाल बजाज के पुत्र श्री कमल नयन बजाज जो कि पुराण प्रेमी रहे उनसे तथा अन्य मित्रों से आनन्द पूर्वक मिलन हुआ।

पुराने मित्रों के साथ विनोंद वार्ता में दिन व्यतीत हुआ। शाम को सभी मित्रों के साथ प्रार्थना की। तदन्तर कैलास-मानसरोवर की यात्रा का कुछ अनुभव कह सुनाए।

दिनांक १० सितम्बर, वृहस्पतिवार १९३१

पाठशाला—(पल्योग्राम) का आज निरीक्षण किया। मित्रों के आग्रह से आज यहाँ रुक गये दिन में तथा "बुद्ध महावीर" गुजराती पुस्तक पढ़ने में आनन्द आया प्रार्थना भजन-भाज—आदि तो हुआ ही। प्रेममय सात्विक वातावरण में जीवन की रचना हो तो पवित्र आदर्श प्रति आगे बढ़ने का आत्मबल प्राप्त हुआ ही करता है।

दिनांक ११ सितम्बर, शुक्रवार १९३१

"सूरदास" एक अन्धे पहाड़ी ने गीत सुनाये।—शीघ्र कवि की शक्ति का दिग्दर्शन कराया। श्रीखंड पूरी से पेट पूजन, सब मित्रो के साथ किया। शाम को पर-

मात्मा का स्मरण कर प्रस्थान किया। तीन घंटे में नौ मील चल कर आल्मोड़ा शान्ति कुटीर में प्रवेश किया दीपक की ज्योति जला कर परम कृपालु परमात्मा की प्रार्थना की। दो माह अठारह दिन यानि उनहत्तरवें दिन श्री कैलास-मानसरोवर की यात्रा करके कुशल पूर्वक शान्ति कुटीर में शान्ति और आनन्द पूर्वक पहुँचे। परमात्मा की कृपा।

"आज मिल सब गीत गाओ।"

"उस प्रभु को धन्यवाद।"

दिनांक १२ सितम्बर, शनिवार १९३१

श्री कैलास मानसरोवर यात्रा के लिये शान्ति कुटीर-शैल-अल्मोड़ा से पुरुषोत्तम माह अधिक आषाढ़ कृष्ण पक्ष एकादशी के दिन प्रस्थान किया था। सौराष्ट्र से जब हिमालय में सन् अट्ठाइस (२८) में आये तब पुरुषोत्तम महीना ही था। और श्री कैलास मानसरोवर यात्रा के लिये प्रस्थान भी पुरुषोत्तम माह में हुआ। यह ईश्वरीय लीला का कैसा विधान? आज श्रावण वदी अमावस्या के दिन शान्ति कुटीर में आत्म शान्ति के साथ प्रवेश किया।

"परम कृपालु परमात्मा की कृपा"

अल्मोड़ा शहर से बागेश्वर और कैलास के रास्ते में दो मील दूर शैल ग्राम में शान्ति कुटीर है। सुन्दर और एकान्त स्थान है। शान्ति कुटीर के बरामदे में बैठ कर पहाड़ों का मनोहर दृश्य दिखाई देता है। पश्चिम में स्याही देवी श्यामा भगवती के पर्वत पर सूर्यास्त का अपूर्व दृश्य निहारना दैवी देन है। पूर्व तरफ सिमटोला का ऊँचा पहाड़ खड़ा है। वहाँ से अल्मोड़ा निवासी शीत काल का प्रथम हिम वर्षा का बरफ प्रसाद प्राप्त करते हैं। पश्चिम तरफ पाताल देवी का मन्दिर है। जहाँ वर्तमान में श्री श्री आनन्दमयी मां का आश्रम स्थित है। उत्तर की ओर कासार देवी का मन्दिर एक पहाड़ पर है। सामने की तरफ दूर "कल्प वृक्ष" पहाड़ी भाषा में "कपोबोट" है। जनता समय-समय पर इस वृक्ष का पूजन करती है। मनोकामना पूर्ण होती है तो कल्पबृक्ष का प्रताप इस कलि-युग में भी है न? कासार देवी के पहाड़ की हारमाला में इस तरफ पहिले पपरसली-स्नोव्य तथा कल मटीआ है। कासार देवी पर देवी का तथा शिव मन्दिर है। विस्तृत पहाड़ी में, वर्तमान में "जर्मन लामा" "अनागरिक" तथा उनकी पारसी पत्नी "ली गौतमी" का आश्रम रहा। सीटोली का जंगल भी हरियाली से छाया हुआ आकर्षक है और हरि का सतत् स्मरण कराता है। "जंगल में मंगल"

शान्ति कुटीर का दृश्य जैसा मनोहर और आकर्षक है। उसी तरह बहुत सी

पवित्र आत्माओं के चरण इस छोटी सी कुटिया में पड़े हैं जिससे उसका महत्व उनके आशीर्वाद से बढ़ गया है। एक तरह से ऐतिहासिक स्थान बन गया है।

पूज्य बापू जी (महात्मा गाँधी जी) ने शान्ति कुटीर में पदार्पण करके पवित्र बनाया है। मीरा बहिन (Miss Slade) तो इस कुटीर में दो-चार दिन रह कर निवास करके स्वयं भाखरी (रोटी) सब्जी बना कर स्वयं भोजन पाया तथा मुझे भी कराया Mrs. Cook मदर कुक (आनन्दी मां) ने तो मातृ प्रेम के आशीर्वाद की वर्षा अनेक बार की है। श्री रामदास गांधी तथा देवदास गांधी (महात्मा जी के पुत्र) श्री प्रभुदास गांधी (गांधी जी के भतीजे के पुत्र) श्री मथुरा दास भाई (Mayor of Bombay) गांधी जी के भान्जे तथा श्री कृष्ण दास गांधी श्री छोटे लाल (सत्याग्रह आश्रम साबरमती के सदस्य) आदि अनेक मित्रगण इस स्थान पर रहे हैं। डा० कैलाश नाथ काटजू श्री राम नरेश त्रिपाठी Dr. Erans wintz, स्वामी शिवानन्द जी (ऋषिकेश) स्वामी स्वयं ज्योति (स्वामी रामनाथ के गुजराती शिष्य) तथा पृथ्वीगंज के राजा साहब नागेन्द्र बहादुर सिंह जी ने यहाँ भोजन भी किया। बापू के पंचम पुत्र श्री जमना लाल बजाज उनकी पत्नी श्रीमती जानकी देवी बजाज, पुत्र श्री कमल नयन बजाज पुत्री श्री मदालसा बहिन आदि यहाँ निवास कर चुके हैं। श्री देव शर्मा जी (श्री अभय) गुरुकुल कांगड़ी तथा योगी श्री अरविंदआश्रम के साधक आदि अनेक पवित्र आत्मा तथा प्रेमी मित्रों से शान्ति कुटीर में रह कर सत्संग करने तथा आशीर्वाद प्राप्त करने का सद्भाग्य मुझे प्राप्त हुआ है यह परमात्मा की कृपा।

ॐ शान्ति २२-१२-८३
लक्ष्मी नारायण मन्दिर कुटीर घाटकोपर
बम्बई-६

(४१) पवित्र संकल्प की सिद्धि।

श्री कैलाश पति महादेव की कृपा से हिमालय के उत्तुंग हिमगिरि शिखर—पाँच, दस, पन्द्रह, सत्रह, अठारह, बीस हजार फीट की ऊँचाई पर भारत से दूर तिब्बत में श्री कैलाश दर्शन मानसरोवर स्नान करके स्थावराणाम हिमालय के दर्शन करके भारत माता की शरण में शान्तिपूर्वक पहुँचा।

"परम कृपालु परमात्मा की कृपा"

पवित्र संकल्प की सिद्धि से सात्विक आनन्द होना स्वाभाविक है। इससे आत्म शान्ति प्राप्त होती है।

"याद्दशी भावना तादृशी सिद्धिभवति"

पवित्र तीर्थयात्रा अर्थात् पैदल पर्यटन करने में परमात्मा का सतत स्मरण — यानि झांकी इस रहस्य की अनुभूति होती रही है। परमात्मा की प्रतिकृति लीलामय प्रकृति का सात्विक और सौम्य और सात्विक स्वरूप का इन हिमालय के पहाड़ों में ऐसा अद्भुत और दिव्य दर्शन होता है कि दिल रूपी दरिया (समुद्र) में आनन्द की पर्वत जैसी तरंगे उछलती हैं। चित्त शुद्धि द्वारा आत्म दर्शन हो यह तीर्थ यात्रा का पवित्र आदर्श है।

शास्त्र और पुराणों में पैदल पर्यटन से यात्रा करने का पवित्र महत्व है। गुरु मत्स्येन्द्र नाथ ने शिष्य गोरखनाथ को कठिन व्रत का पालन करते हुए बारह वर्ष तक पैदल यात्रा का आदेश देकर गोरखनाथ जैसे अद्भुत और मस्त योगी का सर्जन किया। अवधूत दत्तात्रेय भी तपोनिष्ठ चोबीस गुरु (साधारण से) से भी शिक्षा ग्रहण करके हाथ में त्रिशूल ग्रहण करके दुर्गम पर्वतों के शिखरों पर पहुँचकर विश्व को आध्यात्मिक उपदेश "अवधूत गीता" द्वारा देकर सर्वोत्तम योगी बने। गिरनार, आबू आदि उत्तुंग शिखरों पर अवधूत दत्तात्रेय गुरु के चरण स्थापित करके मन्दिर है।

तेजस्वी परशुराम हाथ में (फरसा) परशु लेकर पृथ्वी-भ्रमण करते रहे।

श्री रामचन्द्र उत्तर भारत अयोध्या से तीर्थ यात्रा बन-बन, जंगल-जंगल घूमते हुए दक्षिण में लंका जाकर राक्षस पति रावण को मारकर धर्म की स्थापना करके "मर्यादा पुरुषोत्तम बने। श्रीकृष्ण भगवान तो सर्वत्र वासुदेव होकर इतिहास बनाकर गीता का उपदेश देकर पूर्ण बने। पाँच पाँडव भी बन-बन पैदल भटककर अनेक तीर्थ यात्रा करते हुए श्रीकृष्ण भगवान के कृपापात्र बने।

समर्थ रामदास शिवाजी के गुरु ने पैदल यात्रा करके शिवाजी द्वारा भगवा झंडों को फहराकर धर्म रक्षार्थ जन कल्याण करते रहे। बुद्ध भगवान ने विश्व भ्रमण करते हुए प्रेम करुणा का सन्देश देकर महाभिनिष्काम करके संसार को "अहिंसा परमोधर्म" का उपदेश दिशा। वैदिक धर्म की स्थापना के लिए अखिल भारत वर्ष में दिग्विजय करके भगवान शंकराचार्य ने भारत के चारों दिशा में मठ स्थापित करने में भी विश्व कल्याण का ही पवित्र आदर्श रहा। उत्तर में बद्रीनाथ, दक्षिण में श्रृंगेरि मठ, पश्चिम में द्वारिका, पूर्व में जगन्नाथ पुरी। सारे भारत वर्ष को एकता प्रतिपादन की है।

स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ आदि अनेक सन्तों ने विश्व भर में भारतीय संस्कृति आध्यात्मिकता द्वारा विश्व कल्याण करते रहे।

विश्व बन्धु राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने भारत वर्ष में संसार भ्रमण करते हुए "अहिंसा और सत्य" सत्याग्रह अनुपम शस्त्र द्वारा जन शक्ति जाग्रति कर विश्व में अनोखा अद्भुत इतिहास का सृजन किया।

वर्तमान में सन्त बिनोबा जी ने हजारों मील पैदल यात्रा करके भूदान गंगा ग्राम स्वराज्य का सन्देश देकर आर्थिक विषमता मिटाने का अमोघ उपाय बनाया था।

"चरैवेति चरैरेति" – (उपनिषद)

"बैठे हुए का भाग्य बैठा रहता है। पड़े हुए का भाग्य सो जाता है। खड़े हुए का खड़ा हो जाता है। पर जो चलता है उसका भाग्य चलता है" यानि भाग्य फलता है अतः तू चला कर।

यही अनुभव हिमालय के पहाड़ों में लगभग पन्द्रह हजार मील से अधिक चल कर कैलास मानसरोवर, बद्रीनाथ आदि यात्रा करने का सद्भाग्य मिला। राष्ट्रीय व रचनात्मक कार्य करते हुए लगभग पचीस संस्थायें स्थापित किया। सक्रिय सहयोग दिया। यहाँ एक उपलब्धि ऐसी है जिससे आत्म शान्ति प्राप्त होती है। संत पवित्रात्माओं की कृपा से प्राप्त हुआ है।

वर्तमान में तो एक रात में आम्बाला दूसरे दिन काशी तीन दिन की यात्रा के बाद त्रिवेणी प्रयाग ऐसी जो ट्रेन से यात्रा होती है। वैसी यात्रा का महत्व कम है। परन्तु पैदल यात्रा जो कदम-कदम पर डग-डग पर होती है, उसमें परमात्मा का पवित्र स्मरण पग-पग पर होता रहे। उस यात्रा का महत्व विशेष है। और साहस के साथ संकट का स्वागत करने के प्रसंग आते रहते हैं। जिससे ईश्वर स्मरण होता रहे, वह यात्रा श्रेष्ठ गिनी जावे।

"संकट आने पर रोने वाला कायर, संकट सौम्यता से सहन करने वाला बहादुर संकट को आनन्द से सहन करने वाला शूरवीर।"

"संकट न हो तब भी निमन्त्रण देने वाला भक्त नारायण रूपी नर।" असल में संकट टलता नहीं पर उसे संकट महसूस न हो या एक पवित्र आदर्श के लिए संकट सहल बनाने वाले इतिहास का सर्जन करता है।

भारत राष्ट्र सन् १९४७ में स्वतन्त्र हुआ है। अब भारत माता आशा कर रही है कि नौजवान साहसिक सन्तान अपने ही राष्ट्र में रहा हुआ अद्भुत और दिव्य हिमालय रूपी स्वर्ग पर सदेह आरोहण करके इतिहास का सृजन करते रहें। इस तरह के साहस पवित्र आदर्श यानी राष्ट्र सेवा के लिए जनता की निष्काम सेवा के लिए होता रहे। आत्मबल सदा प्राप्त होता रहे ऐसी परमात्मा के प्रति प्रार्थना। "स्थावराणां हिमालयः ॥

परमात्मा सबको पवित्र आदर्श प्रति आगे बढ़ने के लिए आत्मबल अर्थे यही प्रार्थना।

उत्तिष्ठत ! जाग्रत !! प्राप्य वरान्निबोधत।
Arise Awake stop not till the goal is reached.

"सर्व धर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज। सत्यं शिवं सुन्दरम् ॥ सद चित आनन्द। सच्चिदानन्द।

ॐ शान्ति ! ॐ शान्ति !! ॐ शान्ति !!!

लक्ष्मीनारायण मन्दिर कुटीर, घाटकोपर, बम्बई-६८

सन्देश

यह हर्ष का विषय है कि स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, समाज सेवी स्वर्गीय श्री शान्ति त्रिवेदी की स्मृति में उनकी पुण्य तिथि पर श्रद्धांजलि स्वरूप उनकी हस्तलिखित डायरी का प्रकाशन उनकी सहधर्मणी श्रीमती भक्ति देवी द्वारा किया जा रहा है।

स्वर्गीय त्रिवेदी जी राष्ट्र पिता महात्मा गाँधी की अनुप्रेरणा से गुजरात से उत्तर प्रदेश के पर्वतांचल के अल्मोड़ा जनपद में आ बसे और स्थानीय जन-जीवन व संस्कृति में घुलमिल कर सार्वजनिक सेवा करते रहे। आशा है उनके संस्मरण पाठकों के लिये उपयोगी और प्रेरणादायक होंगे। उनके डायरी बद्ध इन संस्मरणों के सफल प्रकाशन के लिये मेरी शुभकामनाएँ।

नारायणदत्त तिवारी
मुख्यमंत्री उ० प्र०
विधान भवन लखनऊ ३ फरवरी १९८५

प्रिय भीखू भाई,

आपके पत्र दिनांक ११ फरवरी से आपके पूज्य पिता शान्तीलाल के देहान्त का दुःखद समाचार मिला। हमारे पुराने साथी एक-एक कर विदा हो रहे हैं। उस पीढ़ी के अब कम ही लोग दीख पड़ते हैं जिन्होने आजादी का शंखनाद देश भर में फूंका। पर्वतीय क्षेत्र उनका सदैव ऋणी रहेगा।

यहाँ किसी का वश नहीं चलता है। ईश्वर दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करें यही प्रार्थना है।

संकट की इस घड़ी में मेरी हार्दिक संवेदना स्वीकार करें।

हेमवती नन्दन बहुगुणा

प्रिय भाई भीखू जी,

ओम शान्ति।

श्री शान्ति लाल त्रिवेदी जी अब इस दुनिया में नहीं रहे यह समाचार उन लोगों के लिए हृदय विदारक एवं शोकाकुल करने वाला अवश्य हुआ होगा, जिनका गाँधी

वादी मूल्यों के प्रति आस्था और अनुराग है दुनियादारी की भाषा में भले ही उन्हें कुछ कहा जाय, लेकिन समाज व मानवता की सेवा के लिए तत्परता और अदम्य उत्साह उनमें युवाओं से भी अधिक था।

उनके दुनियाँ से चले जाने पर हमने एक प्रतिष्ठित एवं समर्पित समाज सेवी तथा गाँधी वादी नीतियों का प्रबल अनुयायी खो दिया है जिसकी पूर्ति नितान्त असम्भव है विशेष रूप से कुमायूं की जनता के लिए यह दुखद याद जिस अंचल को कर्म भूमि बनाकर उन्होंने यहाँ के जन जीवन के सुख-दुख में सरीक होकर कार्य किया मेरी तथा हमारी संस्थाओं की ओर से दिवंगत आत्मा की शक्ति के लिए श्रद्धांजलि के पुण्य-पुष्प अर्पित करने की कृपा हो।

धन्यवाद।

सादर

(प्रताप भैया)

श्री शान्ति लाल जी को जब भी मैं याद करता, मुझे सहसा भारतीय स्वतन्त्रा संग्राम के उस चरण की याद हो आती है। जब गाँधी जी और जवाहर लाल जी के नेतृत्व में सब कुछ चल रहा था, जब भारतीय राजनीति कुछ आदर्शों से प्रेरित थी, जन कल्याण की भावना से ओत प्रोत थी। राजनैतिक मत भेदों के होते हुए भी देश की आजादी के लिए सभी संघर्षरत थे। पर गाँधीजी द्वारा निर्धारित मार्ग पर सच्चाई से चलना, उनके सिद्धान्तों को सम्पूर्ण जीवन में लागू करते हुए राजनीतिक संघर्ष को आगे बढ़ाना यह उस समय भी कुछ बिरले लोगों द्वारा ही अपनाया जाता था। शान्ती लालजी इन्हीं विरले लोगों में से एक थे। उन्होंने पहाड़ों को अपनाया, उत्तराखण्ड की धरती को अपना कार्यक्षेत्र बनाया। वे निष्काम भाव से लोगों की सेवा में रत रहते थे। मैं उस समय साम्यवादी दल का सदस्य था कांग्रेस से और कांग्रेसी नेताओं से संघर्ष चलता रहता था पर शान्ति लाल जी ने कभी भी मुझे यह आभास नहीं होने दिया कि मैं विपरीत राजनीति को अपनाने के कारण, मानवीय स्तर पर उनसे अलग हूँ। वे जब भी मिलते प्यार से मिलते कुमायूं की लोक संस्कृति के क्षेत्र में जो भी काम हम कर रहे थे, उसके लिये शान्ति लाल जी हमेशा मुझे प्रेरित करते, अपने स्नेह और आशीर्वाद से मेरा मनोबल बढ़ाते, और अपना समर्थन प्रदान करते उनकी वह सौम्य मूर्ति, स्नेह पूर्ण दृष्टि और ममता से ओत प्रोत उनकी वार्ता मुझे हमेशा याद रहेगी।

मोहन उप्रेती

भाई शान्ति लाल जी के निधन का समाचार एक आकस्मिक आघात था। उनकी डायरी पुस्तक रूप में प्रकाशित हो रही है जानकर मन को शान्ति मिली उनकी हँसती हुई छवि आँखों के सामने आती है। चनौदा आश्रम उनकी साधना एवं कर्म-स्थली रहा है। पर्वत प्रान्त में कुमाऊँ के जन-जीवन एवं रहन-सहन को अपनाकर उन्होंने सबका दिल जीत लिया।

भारत माता ऐसे ही सपूतों के त्याग, तपस्या और बलिदान से मुस्करा उठेगी।

स्वतंत्रता संग्राम के प्रसिद्ध सेनानी आजादी के लिये सर्वस्व न्यौछावर करने वाले वीर एवं त्यागमूर्ति भाई शान्तिलाल जी सदा-सर्बदा याद रहेंगे। यही उनके प्रति श्रद्धांजलि है।

१४, गौतम पल्ली, लखनऊ तारा पांडे

२–२–८५

शान्ति भाई के लिए कुछ भी लिखना, मेरे लिए किसी पुण्ययज्ञ में पुण्याहुति देना ही लग रहा है बचपन की अनेक स्मृतियाँ, लेखनी को थाम रहीं हैं – उस व्यक्ति ने कुमांयू के लिए एक मौन साधक के रूप में जो किया वह कभी प्रकाश में नहीं आ पाया। हमारे लिए तो वे गृह के सदस्य थे, हमारी माँ से बा कहते थे।

मैं आज हृदय से उनका स्मरण करती हूँ, अपनी ओर से, समस्त कुमांयूवासियों की ओर से, उन्हें अपनी श्रद्धांजली अर्पित करती हूँ—उस स्वतन्त्रता के वीर सेनानी के प्रति जो सौराष्ट्र का होकर भी कुमांयू का होकर रह गया।

शिवानी

माननीय भक्ति बहिन जी !

सादर अभिवादन !!

पूज्य श्री शान्ति लाल भाई जी के स्वर्गवास का दुःखद समाचार मिला ! हृदय गहरे शोक से अभिभूत हो उठा है। इस प्रकार के महानुभाव जिनका अशेष जीवन जगत् हिताय ही सर्मपित रहा हो—जिन्होंने स्वार्थ का कभी चिन्तन तो क्या भावना भी नहीं

की जो स्वयं सादगी एवं असंग्रह का जीवन जीकर सदा लोक-कल्याण-पथ के पथिक रहे आज उन्हीं की विषादमयी निर्वाण दुर्घटना से भारी आघात लगा है। प्रतीत हो रहा है जैसे आज वसुन्धरा अपने अमूल्य रत्न को खो बैठी है। भारत एक आजीवन निःस्वार्थ सेवाधर्मी महापुरुष से वंचित हो गया है उसकी क्षति अपूरणीय है। स्वर्गीय भाई जी से हमारा प्रथम परिचय सन् ४३-४४ के आसपास कश्मीर के श्रीनगर और पहलगाँव में हुआ। तदनन्तर अल्मोड़ा में दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

श्री भाई जी के दर्शन एवं सान्निध्य का सौभाग्य बहुत ही नगण्य रहा। फिर भी इन सीमित क्षणों में उनके सरल, मधुर, गम्भीर, प्रसन्न और सादे व्यक्तित्व का जो प्रभाव पड़ा है वह अमिट है।

वे सहज सरल और मुक्त स्वभाव के अत्यन्त सज्जन थे। उनके साथ व्यतीत किये क्षण जीवन की अविस्मरणीय अमूल्य सम्पत्ति है। श्री गाँधी आश्रम से उनका सम्बन्ध सामान्य स्तर पर नहीं था। अपितु उनका जीवन ही गाँधीमय था। वे गाँधी विचारधारा के मूर्त रूप थे। वे शान्त और मूक भाव से निरन्तर लोकसेवा की एकान्त साधना में तल्लीन थे। वे तपस्वी थे साधक सिद्ध और उन्मुक्त पुरुष थे उन्हें किसी महत्त्व गौरव या मान की न चाह थी न लालसा।

आज उनके इहलीला संवरण की महाशोक मयी अनन्त यात्रा पर हम दोनों का हृदय इतना शोकाकुल हो उठा है तो आपके अपार दुख को क्या कह कर सान्त्वना दें समझ नहीं आता।

वे जीवनमुक्त थे आज मर कर भी जीवित हैं क्यों कि येषांनास्ति यशः काये जरा मरणजं भयम्'। वे अजर हैं अमर हैं यशस्वी सदा जीवित हैं।

प्रभु करुणामय इस असह्य शोक को सह पाने की क्षमता दे। यही एक मात्र प्रार्थना है।

आप हम दोनों की हार्दिक समवेदना (सम्वेदना) स्वीकार करें।

आपके महाशोक में समभागी

आपके

हरिवंश, शान्ताकोचर

स्व० शान्तिलालजी से मेरा पहला सम्पर्क १९२८ में हुआ। जब वे डिस्ट्रिक्ट बोर्ड अल्मोड़ा में कताई-बुनाई से संबंधित थे। हमारा मकान गोपाल धारा त्यूनरा के पास एकान्त जगह में था और वहीं शान्तिलाल जी के साथ स्व० ज्योति निवास जोशी और मैं कांग्रेस के पर्चे हाथ के लिथो प्रेस में छापते थे और शान्ति भाई "शक्ति" साप्ताहिक के माध्यम से उन्हें भेजवाते थे।

उसके बाद हमारे घर का सम्बन्ध उनसे रहा और परिवार के सदस्य के रूप में वे हमारे पास आते जाते रहे। उन्होंने कुमायूँ को अपना लिया और उसी प्रदेश में वे आत्मसात् हो गये। हमारे समय के कुमायूँ के वे एक महान कार्यकर्त्ता व युग प्रणेता थे। अभी भी चनौदा और कस्तूर बा आश्रम कौसानी इनकी यादगार के ज्वलन्त उदाहरण हैं।

भैरव दत्त सनवाल
(आई. सी. एस.)
भूतपूर्व मुख्य सचिव, उत्तर प्रदेश, २१-२-८३

श्री शान्तिलाल त्रिवेदी जी (शान्ति भाई) ने अपना जीवन कुमाऊँ की सेवा में उत्सर्ग कर दिया था। गुजराती होते हुए भी उनको कुमाऊँ के पर्वतों से और वहाँ की जनता से इतना प्यार हो गया था कि वे अपने को पहिले पर्वतीय उसके बाद गुजराती मानते थे। उन्होंने गांधीजी के सम्पर्क में कुछ समय साबरमती आश्रम में बिताने के बाद, उन्हीं के आदेश से कुमाऊँ को अपना लोक-सेवा क्षेत्र बनाया था। जब वह साबरमती आश्रम में थे तो एक दिन सुबह को जिस समय वह गीता पाठ कर रहे थे। एक बीमार आश्रमवासी ने उनसे पीने को पानी माँगा। इन्होंने सोचा कि अपना नित्य का गीता पाठ का कार्यक्रम बीच ही में छोड़कर उठना उचित नहीं है और पाठ करते रहे। किसी और व्यक्ति ने उस बीमार को पानी दे दिया। पर इन्हें यह शंका बनी रही कि गीता पाठ बीच में छोड़ना उचित होता कि नहीं। इन्होंने गांधीजी को अपनी शंका बतलाई। गाँधीजी ने कहा कि गीता जिस सेवा कार्य को करने का उपदेश देती है वह तो आपने किया नहीं और उस उपदेश को कार्यान्वित करने का मौका मिलने पर तुमने गीता पाठ को सेवा के कार्य से अधिक महत्त्व दिया, यह उचित कैसे हो सकता है। यह बात शान्ति भाई के हृदय में बैठ गयी और तबसे उन्होंने सेवा के कार्य के द्वारा ही गीता के आध्यात्मिक उपदेश को कार्यान्वित करने का व्रत ले लिया। उस सेवा के यज्ञ को उन्होंने पर्वतीय प्रदेश तथा देश की सेवा करके जीवन भर निभाया। जैसी लगन और दृढ़ता से वह इस कार्य में लगे वह सब कुमाऊँ वालों को ज्ञात है। चनौदा का गांधी आश्रम और ऊन की कताई, बुनाई का कार्य, यह सब शान्ति भाई जी की ही कुमाऊँ को और सारे देश को देन है। इस कार्य में उनकी पत्नी श्रीमती भक्ति बहिन बराबर उनके साथ रहीं

और उनकी तथा समाज की सेवा में उन्होंने भी अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया। यह कुमाऊँ का सौभाग्य था कि ऐसे सेवावृत्ति से भरपूर दम्पत्ति इस पिछड़े हुए इलाके को यहाँ की सामाजिक तथा आर्थिक उन्नति करने के व्यावहारिक कार्य में मार्ग प्रदर्शन के लिए आदर्श रूप से प्राप्त हुए। इसके लिए वह सब कुमावनियों के तथा देश के श्रद्धा के पात्र हैं।

मेरे पिताजी श्री पूर्णानन्द सनवाल, उस समय से शान्ति भाई और भक्ति बहिन के सम्पर्क में आ गये थे। जब वह पहिले पहिल अल्मोड़ा में आए थे। तब से इनकी मित्रता का हमारे सारे परिवार को सौभाग्य प्राप्त हुआ और इन दम्पत्ति का बड़ा स्नेह हम सबके साथ भी हो गया। मेरी बहिन श्रीमती गंगा देवी जोशी (आनन्द निवास, नैनीताल) और उनकी पुत्री कुमारी स्नेहलता जोशी, शान्ति भाई और भक्ति बहिन के इतना निकट आ गईं कि वह दोनों अपने आपको हमारे परिवार का ही सदस्य मानने लगे। मेरी पत्नी और मैं भी इसी नाते इन दम्पत्ति को अपना निकटतम सम्बन्धी मानते हैं।

स्नेहलता शान्तिभाई की मानसरोवर यात्रा की डायरी को प्रकाशित करवा रही है जिससे शान्तिभाई की भावनाओं की सारे देश को झलक मिल सके। यह मेरा सौभाग्य है कि मुझको भी इस सम्पर्क में अपनी श्रद्धांजलि उनको अर्पित करने का मौका मिला है।

केशव दत्त सनवाल
नई दिल्ली १२-२-८५

हमारी श्रद्धांजलि अर्पण है।

भानु भाई
कुश इन्टरप्राइज
पाणी गेट, सरसपुर, अहमदाबाद

श्री जयानन्द डिमरीजी, वाराणसी — अप्रैल १८, १९८५

स्नेही श्री डिमरीजी

सद्‌गत् श्री शान्तिलाल त्रिवेदीजी की धर्म पत्नी पू० भक्ति बहन द्वारा पत्र प्राप्त हुआ है कि पू० शान्ति भाई की कैलाश यात्रा की डायरी आपका विद्यालय छाप रहा है। प्रसन्नता हुई।

मैं अपने दो शब्द श्रद्धांजलि के रूप में प्रेषित कर रहा हूँ।

पू० शान्ति भाई त्रिवेदी के साथ मेरा संबंध बरसों तक रहा। वास्तव में वह मेरे बड़े भाई जैसे ही थे। हमारे बीच गहरा स्नेह था।

पू० शान्ति भाई ने अपना पूरा जीवन कूर्मांचल की जनता की सेवा में व्यतीत किया। जनता के प्रति किसी भी अन्याय के सामने शान्ति भाई संघर्ष करते रहें। उनको 'कुमाऊँ के बापू' कहना उचित होगा। उनका जीवन सार्थक हो गया। उनकी आत्मा को परम शान्ति प्रदान हो।

स्नेहाधीन,

नवनीत पारेख, गोवर्धन

खाली स्टेट अयारपानी, अल्मोड़ा

शान्ती लाल जी का नाम सुनते ही मेरे नेत्रों के सम्मुख एक सौम्य, सहृदय, मधुर मुस्कान वाले व्यक्ति की आकृति घूम जाती है, जिसे मैं बाल्यावस्था से ही राष्ट्रीय कांग्रेस की सभाओं, जुलूसों, चुनाव प्रचारों और विभिन्न प्रभात फेरियों में प्रायः देखती चली आई थी मेरे स्व० पिताजी श्री शब्बीर मोहम्मद खान और स्वर्गीय माताजी श्रीमती मोनिका शब्बीर मोहम्मद खान दोनों ही कांग्रेस के सक्रिय कार्यकर्ता रहे हैं और उनके माध्यम से ही मेरा परिचय शान्ती लाल जी से हुआ था। जब भी मिलते बड़े स्नेह से बातचीत करते, सर पर हाथ फेरते और कुशल समाचार पूछते।

वैसे तो प्रायः विभिन्न गांधीवादी कांग्रेसी तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं से मेरी भेंट होती रहती थी। पर उनके समान सेवाभाव, लगन और सहृदयता मैंने बहुत हीं कम व्यक्तियों में पायी। अपने विरोधियों तक से वह सहृदयता से मिलते, धैर्यपूर्वक उनकी बातें सुनते और विचारों की भिन्नता होते हुए भी किसी के प्रति भी मन में कटु भाव नहीं रखते। १९७१ में माताजी के देहान्त पर वह हमारे घर आये थे और जिन स्नेहयुक्त शब्दों में मुझे और पिताजी को सांत्वना दी और ढाढ़स बँधाया वह मुझे अभी तक याद है।

यद्यपि अब वह हमारे बीच नहीं रहे, पर अब भी जब कभी गर्मियों में कुछ दिनों के लिए अल्मोड़ा जाती हूँ तो लगता है कि गाँधी आश्रम के सामने, माल रोड पर अकस्मात मुठभेड़ हो जाने पर पूछ बैठेंगे। "अरे बिटिया तू दिल्ली से कब आई? दुबली लग रही है। लगता है सेहत का ध्यान नहीं रखती। तेरी नौकरी कैसी चल रही है? गाना गाना तो नहीं छोड़ा ना? कब वापस जायगी? ऐसे स्नेही थे शान्ती लाल जी।

नईमा (खान) उप्रेती

११०, एशिया हाउस

कस्तूरबा गाँधी मार्ग, नई दिल्ली

श्रद्धांजलि संस्मरण

भाई शान्ति लाल त्रिवेदी

लेखक : यमुना दत्त वैष्णव अशोक

सन् १९२८ के जुलाई या अगस्त की बात है मैं तब सोमेश्वर (अल्मोड़ा) मिडिल स्कूल में कक्षा ७ का विद्यार्थी था। उन दिनों ऊन की कताई-बुनाई जिला बोर्ड के स्कूलों में खेल-कूद की भाँति एक अनिवार्य विषय बन गयी थी। जाड़े के दिनों में शौका-भोटिए जब गाँव में डेरा डालते तो उनसे कच्चे ऊन की पिण्डियाँ खरीदी जाती थीं। आध सेर या पाव भर कच्चा ऊन तोल कर प्रत्येक विद्यार्थी को दिया जाता था। ऊन को साफ करने, उसकी गुनिया बनाने और फिर तकली (कतुआ) में कातने के लिए वह विद्यार्थियों को दी जाती थी। ऊन की डोरी के गोले बनाकर विद्यार्थी को फिर अध्यापक को वापस करने होते थे। अच्छी महीन कताई के लिए विद्यार्थियों के बीच प्रतियोगिताएँ होती थीं और वर्ष के अन्त में पूरे जिले के विद्यार्थियों के मध्य अल्मोड़ा में ऊन की कताई की प्रतियोगिता होती थी।

उस वर्ष विद्यालयों में कताई के कार्य का निरीक्षण करने के लिए गौर वर्ण के युवक जो बहुत साफ सफेद खादी के वस्त्र पहिने हुए थे बड़ी अटपटी हिन्दी में सोमेश्वर मिडिल स्कूल में हमारी तकुलियों के बारे में पूछने आ गये। अपने लाल चेहरे से वे मुझे ईसाई मिसनरी स्टेनली जौन्स के सगे भाई जैसे लगते थे। वे और कोई नहीं भाई शान्ति लाल जी त्रिवेदी थे जिन्हें गाँधी जी ने स्वपं अपनी कुमाऊ की प्रभावित यात्रा से एक वर्ष पहिले अल्मोड़ा भेजकर वहाँ लोगों में स्वदेशी वस्त्र के प्रति जन-जागृति उत्पन्न करने के लिए भेजा था।

सोमेश्वर से मिडिल परीक्षा उत्तीर्ण करके मैं अल्मोड़ा गया तब शान्ति लाल जी जिला स्वयं सेवक दल के कप्तान बना दिये गये थे। हमारे स्कूल में अंग्रेजी पढ़ाने वाले अंग्रेज पादरी ई० एस० ओकली उन दिनों अल्लोड़ा नगरपालिका के चेयरमैन थे। शान्ति लाल जी नगरपालिका स्कूलों में राष्ट्रगान और ऊन की कताई अनिवार्य कराने उनसे मिलने आते थे। पादरी ओकली साहब गाँधी जी के अनन्य भक्त थे किन्तु उन्हें ऊन की कताई करके उसी ऊन के बने वस्त्रों पर पूरे जिले के लिए कपड़ा तैयार करने की शान्ति लाल जी की योजना शेखचिल्ली जैसी बात लगती थी।

भाई शान्ति लाल जी राजकोट में जन्मे थे और अल्मोड़ा आने से पहले गाँधी जी के साबरमती आश्रम में सन् १९२१ से ही रहते आये थे। कुमाऊँ में प्रचलित गुलामी की प्रथा "कुली उतार" के विषय में गाँधी जी को पूरी जानकारी बीस के दशक से ही

निरन्तर दी जाती रही थी। सन् १९१८ में स्वर्गीय बदरीदत्त पाण्डे जी ने कलकत्ता जाकर कुमाऊँ में प्रचलित कुली उतार प्रथा से उनको अवगत कराया था। पाण्डे जी के ही शब्दों में—"सन् १९१८ में मैं कलकत्ता गया और वहाँ महात्मा गाँधी जी को कुमाऊँ के कुली-कलंक से अवगत कराया। मैंने कहा आपने दक्षिण अफ्रीका का कुली कलंक दूर किया। चम्पारन के निलहे गोरों से प्रजा को मुक्त किया, अब कुमाऊँ के भीषण कुली कलंक को भी दूर कर दीजिए।"

उन्होंने कहा था—"मेरे पास समय कम है। काम बहुत रहता है। मुझे भाई बार-बार सताना (अर्थात् याद दिलाना), जब मौका होगा आऊँगा।"

गाँधी जी को कुमाऊँ में कुली उतार के विरुद्ध चलाए जा रहे आन्दोलन की प्रगति की जानकारी पाण्डे जी तथा अन्य समाजसेवी लोग नियमित रूप से देते रहे। अन्ततः सन् १९२१ को उत्तरायणी मेले के अवसर पर तीनों जिलों के ग्राम प्रधानों ने कुली उतार के सभी सरकारी रजिस्टर और अभिलेख पाण्डे जी के आह्वान पर सरयू नदी में बहा दिये और मेले में डेरा डाले हुए जिला अधिकारी तथा अन्य विभागीय अधिकारियों को वापस लौटने या आगे दौरा करने का कोई साधन उपलब्ध न हो सका। गोमती और सरयू के संगम पर सभी ग्राम प्रधानों ने गंगा जल को हथेली में लेकर शपथ ली कि वे अब अंग्रेज अधिकारियों को उनके दौरे पर सामान ढोने के लिए कुली नहीं देंगे।

कुली उतार की दासता की इस समाप्ति की सूचना गाँधी जी के पास भेजी गयी। उन्होंने इसका उल्लेख अपने पत्र "यंग इण्डिया" में इस शब्दों में किया—"Few instances will be found in the history of India's awaking, during the last two decades to equal the great mass movement which brought to an abrupt and an age long system of slavery in Kumaon." (पिछले दो दशकों में भारत में विरली ही ऐसा कोई जनजागृति की घटना हुई होगी जैसी कि कुमाऊँ की युगों पुरानी दासता को प्रथा तत्काल समाप्त कर दिया जाना है।)

कुली उतार आन्दोलन की समाप्ति का समाचार लेकर बद्रीदत्त पाण्डे उसी वर्ष मई में गांधीजी से मिलने शिमला गये और गांधीजी को इस सफलता से उत्पन्न जागृति को स्वयं देखने के लिए कुमाऊ आने का निमन्त्रण दिया। गाँधीजी ने आने का वचन दिया किन्तु उनकी प्रस्तावित यात्रा टलते-टलते सन् १९२९ में कार्यान्वित हो सकी। इससे पहले गांधीजी ने अपने आश्रम के अनुयायी और अपने ही राजकोट के पड़ोसी शांतिलाल जो को कुमाऊ भेज दिया था। शांति लाल जी कोसी नदी की घाटी में घर-घर जाकर लोगों को तकली कातना और ऊनी खादी के लिए चर्खा कातने का काम सिखाने लगे। वे अब अविवाहित थे। उनकी धर्मपत्नी भक्ति बहिन ने कुमाऊनी बोली सीखकर पहाड़ी महिलाओं में ऊनी, खादी के प्रचार का काम अपने ऊपर ले लिया।

सन् १९२९ में लाहौर कांग्रेस में, ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत को औपनिवेशिक स्वराज्य देने का प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया गया था और गाँधीजी के कुमाऊ आने पर देश के लिए पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्ति के कांग्रेस के प्रस्ताव की चर्चा से लोगों में अपूर्व उत्साह था। अल्मोड़ा में अंग्रेज पादरी ई० एस० ओकली ने रैमजे हाई स्कूल प्रांगण में गांधीजी के स्वागत में अपना अभिनन्दन भाषण पढ़ा। अगले वर्ष नगरपालिका भवन पर कांग्रेस का झंडा फहराने का निश्चय किया गया। अंग्रेज जिला मजिस्ट्रेट ने इस प्रयत्न को विफल करने के लिए सशस्त्र गोरखा सैनिकों की एक टुकड़ी नगरपालिका कार्यालय के चतुर्दिक बिठा दी। कांग्रेस स्वयं सेवकों का दल झण्डा फहराते समय पुलिस और सैनिकों के नृशंस प्रहार का लक्ष्य बना। श्री मोहन जोशी सिर की चोट से विभ्रांत हो हो गये और फिर मृत्यु पर्यन्त स्वस्थ न हो सके। शान्ति लालजी की भी दो हड्डियां टूटी और वे कई मास अस्पताल में रहे।

शांतिलाल जी का रचनात्मक कार्य चलता ही रहा। यह दम्पत्ति चनौदा अल्मोड़ा के आस-पास के गाँव में गाँधीजी की अंग्रेज शिष्या सरला बहिन (कुमारी कैथरीन मेरी हाइलामन) के साथ महिलाओं में देशवासियों के स्वतन्त्रता प्राप्ति के जन्म सिद्ध अधिकारों के प्रति चेतना जागृत करने में संलग्न रहा। मेरे परिवार से वो उनका एक गुरु और उपदेशक का सा व्यवहार रहा। चरखा और तकली तो थी ही, ऊनी वस्त्र बुनने के लिए करघा भी हमारे घर पर लग गया।

सन् १९३९ में दूसरे महायुद्ध के छिड़ने पर गांधीजी ने व्यक्तिगत सत्याग्रह का आन्दोलन बताया। कुमाऊँ में पहले व्यक्तिगत सत्याग्रही मेरे बड़े भाई श्री विद्या धर वैष्णव चुने गये इसका श्रेय भाई शान्तिलाल जी को ही है।

राजनीतिक जागृति का केन्द्र चनौदा आश्रम सन् १९४२ में ब्रिटिश सरकार के कोप का भाजन बना। जिलाधिकारी ने आश्रम को ध्वस्त करके सभी कार्यकर्ताओं को बन्दी बना लिया। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त भाई शांति लाल जी ने सन् १९४२ के भारत छोड़ो आन्दोलन में शहीद हुए चनौदा के आस पास के गाँव के लोगों की स्मृति में चनौदा में शहीद स्मारक की स्थापना की और उस पर संगमरमर के पत्थर में शहीदों के नाम अंकित कराये। उनका रचनात्मक कार्य अब राजनीति से विलग सर्वोदय नीति के अनुसार चलने लगा। कुछ दिन गाँधी आश्रम चनौदा मे रहकर उसे फिर से जीवनदान देकर उन्होंने कौसानी में सरला बहिन के द्वारा कस्तूरबा महिला उत्थान मण्डल की स्थापना में योगदान किया। इस संस्था के लिए श्री पूर्णानन्द सनवाल जी एवं अन्य श्रोतों से भूमि की व्यवस्था की और जाड़े की ऋतु में बम्बई, कलकत्ता, अहमदाबाद आदि स्थानों में जाकर उस महिला उत्थान मंडल के लिए धन एकत्र किया और उसे वर्धा की शिक्षण संस्था सम्बद्ध कराया। वे स्वयं सभी संस्थाओं से विलग होकर अल्मोड़ा नगर में माला भवन की दो कोठरियों में निवास करने लगे। मुझे उनके आतिथ्य का यदा-कदा अवसर मिलता ही रहता। सन् १९४८-५० में वे रानीखेत आने

पर मेरे ही पास टिके थे। बीच के २५ वर्षों के व्यवधान के बाद फिर मेरा उनसे १९७३ के बाद पहले का सा पारिवारिक सम्बन्ध हो गया। वे जाड़े में अपनी बम्बई अहमदाबाद की ओर की यात्रा के उपरान्त अल्मोड़ा लौटते हुए नैनीताल आते और मुझे अवश्य दर्शन देते थे। मैं उनकी वार्तायें स्थानीय शिक्षण संस्थाओं तथा रोटरी क्लब में कर दिया करता था।

मोरारजी भाई ने उनसे कहा था कि— मनुष्य तो मात्र यन्त्र है और हम तो निमित्त मात्र हैं। फिर भी विश्व में अन्याय और असत्य न हो ऐसी अभिलाषा अवश्य है। ईश्वर को मैंने देखा नहीं परन्तु ईश्वर मुझे मिलता तो मैं पूछता—ऐसा क्यों होता है ? इसलिए हमें तो ईश्वर की इच्छानुसार तदनुकूल बनना चाहिए। अच्छा हुआ कि प्रधान मंत्रित्व के पाश से मैं जल्दी मुक्त हो पड़ा। ईश्वर जो करता है वह भला ही करता है।

मैंने पूछा – ऋषिकेश शिवानन्द आश्रम के प्रेसीडेन्ट स्वामी श्री चिदानन्द जी बम्बई में दो दिन के लिए आए थे और उनका दूसरा प्रवचन तारीख ९ फरवरी से १२ फरवरी तक बम्बई में था।

मोरारजी भाई बोले—हाँ वे तो भारत भर में तथा विदेश में भी जाते रहते हैं। तुम्हें अब बम्बई में अपने परिवार के साथ रहना चाहिए।

मोरारजी भाई से उन्होंने कहा था कि हिमालय में रहते हुए ५१ वर्ष हो चुके। यथाशक्ति राष्ट्रीय तथा रचनात्मक कार्य भी करता रहा। राष्ट्र ध्वज सत्याग्रह के समय दो हड्डियाँ भी टूट गयीं। अब तो आँख के दो आपरेशन भी हो गये हैं। गत १८ वर्ष से हृदय रोग (हार्ट ट्रबुल) है फिर भी हिमालय की जनता का प्रेम है। मुझे भी हिमालय के प्रति प्रेम है। गाँधी विचारधारा और सर्वोदय भावना का प्रचार छात्र-छात्राओं में करने का यथाशक्ति प्रयत्न करता रहता हूँ। वहाँ लगभग २५ संस्थाओं का शून्य में से सृजन किया। उनमें सक्रिय सहयोग दिया। अब सब दलों और संस्थाओं से तटस्थ हो गया हूँ।"

मोरारजी भाई ने बताया था कि वे मद्यनिषेध के कार्य में निष्ठा से लगे हैं। इन दोनों व्यक्तियों की वार्ता का कुछ अंश यहाँ प्रस्तुत है।

शांती भाई आपसे यह निवेदन करने का धृष्ठ प्रयास है कि बापू तो गोलोक गये आप स्वयं बापू के आदर्शों के अनुसार जनता के दूसरे बापू बनें और जनता को आत्म बल की प्रेरणा दें— मेरा तात्पर्य है कि वर्तमान राजनीति से तटस्थ हो जाय।

मोरारजी भाई—बापू तो उच्चकोटि के पवित्र आत्मा और सत्यनिष्ठ थे। उनके आदर्श के प्रति मुझे पूरी निष्ठा है। उस आदर्श को मैं यथाशक्ति अपने व्यवहार में लाने में प्रयत्न करता हूँ। विश्व इतिहास में पहली बार बापू ने सत्याग्रह को सर्वोपरि स्थान दिया।

शांती भाई—सत्याग्रहाश्रम साबरमती में रहते हुए मेरे मन में भी पूज्य बापू के अनेक संस्मरण संजोये पड़े हुए हैं। इन संस्मरणों में से कुछ तो अग्नि के अक्षर से

विदग्ध और बज्रलेप की भाँति हृदय में जुड़ गये हैं। बारदोली सत्याग्रह स्थगित करके बापू आधी रात को आश्रम में आये थे। अगले दिन प्रातः प्रार्थना के समय अपनी आत्मा को उड़ेल कर प्रवचन करते हुए उन्होंने कहा था—मैं जो कुछ स्वराज्य का कार्य कर रहा हूँ वह पवित्र आदर्श मोक्ष के लिए ही है। यदि कोई मुझे समझा सके कि इस कार्य को करने से मोक्ष नहीं मिलेगा तो मैं आज ही इसका त्याग कर दूँगा किन्तु मुझे अनासक्त भाव से निष्काम कर्मयोग स्वराज्य के लिए कार्य करने पर अटूट श्रद्धा है। यही जनहित के लिए भी उपयोगी लगता है। साधक के लिए दूसरी बात है प्रतिदिन प्रार्थना करना, राष्ट्र सेवक हो या समाज सेवक उसे एक मिनट की प्रार्थना अथवा पवित्र संकल्प अपनी मनपसन्द भाषा में सदा सतत करते रहना चाहिए। इसे अपना लक्ष्य बिन्दु—ध्येय मानकर दिन-रात के शेष तेईस घण्टे उनसठ मिनट सारे व्यवहार उसी पवित्र आदर्श या ध्येय की प्राप्ति के लिए होने चाहिए।

मोरारजी भाई—एक मिनट की प्रार्थना अलम नहीं, हर समय प्रतिक्षण सतत हरिमय भावना मन में रहनी चाहिए। परमात्मा का स्मरण तो दिनभर करते रहना चाहिए।

उक्त अनेक विषयों पर लगभग डेढ़ घंटे की बात-चीत होती रही। मेरे भतीजे का पुत्र भरत दत्तचित्त से सुनता रहा। अन्त में मैंने मोरारजी भाई से कहा कि यह बालक फोटो लेने के लिए उत्सुक है। आपकी आज्ञा हो तो यह हम दोनों का एक चित्र लेकर आज की इस मुलाकात को उस चित्र में प्रतिवद्ध कर ले। मोरारजी भाई—अवश्य, अवश्य, यह अच्छी बात हमें रुचिकर न भी हो तो यदि बालक को यह पसन्द है तो उसे यह निर्दोष कार्य करने देना चाहिए। ऐसा कहते हुए मोराजी भाई ने 'यहाँ बैठो न ?' कहकर मुझे अपनी ओर हाथ पकड़कर ले जाकर अपने साथ पलंग पर बैठालिया। फोटो खिंच चुकने पर उन्हें प्रणाम करके मैंने अपने पौत्र भरत सहित उनसे विदा ली।

मैंने अपने उपन्यास 'दोपहर को अँधेरा' (बम्बई १९८५) के मुख्य नायक रामप्रसाद के गुरु त्रिवेदी जी में स्व० शान्तिलाल जी को ही चित्रित करने का प्रयास किया है।

सन् १९८२ में भाई जी ने नैनीताल आकर अपनी डायरी, गाँधी जी, मोरारजी भाई, काका कालेकर आदि से हुए पत्र व्यवहार के सभी कागज पत्र नैनीताल जिला अभिलेखागार के अधिकारी श्री त्रिपुण्ड श्रीवास्तव को सौंप दिये। अपनी निजी पुस्तकें मित्रों में बाँट दी।

ऋषितुल्य इस आत्मत्यागी जनता के सच्चे सेवक की मृत्यु का समाचार मुझे अपने प्रवास में रेडियो से मिला मैंने उनके पुत्र को शोक सन्देश भेजा उस महापुरुष ने किस शान्ति से हँसते-हँसते प्राण त्यागे यह उनकी विधवा भक्ति बहिन के अपनी नैनीताल की अतिथ्या [illegible] जोशी को लिखे गये पत्र से स्पष्ट होता है।

यमुना दत्त वैष्णव अशोक